

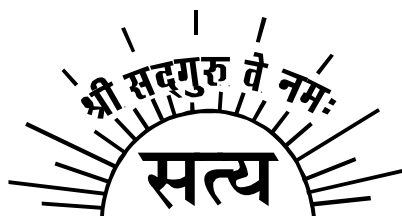
श्री सद्गुरुवेनमः

भक्ति रहस्य

मूल नाम सार है भाई। मूल नाम की करो बड़ाई॥
युग युग हम संसारे आये। मूल नाम जीवहि मुक्ताये
बिना मूल पहुँचे नहीं कोई। कहे सुने कुछ काज न होई॥
सत्य सत्य सत्य मैं भाखूँ। धरमदास कुछ गोय न राखू॥
कहे कबीर भेद निज सारा। जो पावे सो जग से न्यारा॥

—सतगुरु मधु परमहंस जी

साहिब



बन्दगी

सन्त आश्रम रांजड़ी, पोस्ट राया, ज़िला साम्बा (जे. एण्ड के .)

‘‘ भक्ति रहस्य ’’

—सतगुरु मधुपरमहंस जी

© SANT ASHRAM RANJRI (J & K)

ALL RIGHTS RESERVED

First Edition	—	Nov., 2011
Copies	—	5000

प्रचार अधिकारी

— राम रतन, जम्मू

Website Address.

www.sahibbandgi.org

www.sahib-bandgi.org

E-Mail Address.

*satgurusahib@sahibbandgi.org

Editor

Sahib Bandgi Sant Ashram Ranjri

Post -Raya, Distt.-Samba (J & K)

Ph. (01923) 242695, 242602

1. भक्ति रहस्य	7
2. भक्ति भेद में कहाँ विचारी	28
3. निराकार/निरंजन कोन ?	33
4. यह संतमत नहीं	35
5. सत्यधर्म की ओर	36
6. स्वाँसा खाली जात है तीन लोक का मोल	63
7. सत्य पुरुष का पाँचवा पुत्र निरंजन	74
8. सत्य मार्ग	75
9. योगमत और संतमत में अंतर	78
10. संतो तन चीन्हे मन पाया	67
11. गुरु और सतगुरु एक बात नहीं	96
12. रुहानियत है मेरी पहचान	98
13. इसे कहते हैं रुहानियत	108
14. साहिब बाणी	132



दो शब्द

सत्य सत्य सत्य मैं भाखूँ

मैंने बार-बार कहा है कि जो वस्तु मेरे पास है वो ब्रह्माण्ड में कहीं नहीं है। यह सुन एक ने मुझसे कहा कि जो आप कहते हैं कि जो पॉवर मेरे पास है, किसी के पास नहीं, इसे प्रमाणित करो। मैंने उससे कहा कि मैं पॉवर नहीं बोल रहा हूँ, वस्तु बोल रहा हूँ। शब्दों की तरफ ध्यान दो।

जैसे कोई दुकानदार कहता है कि जो मिर्ची मेरे पास है, कहीं नहीं मिल सकती। वो कहता है कि यह फलानी-फलानी जगह से आई है। ...तो मैं जिस वस्तु की बात कर रहा हूँ, वो भी इस संसार की नहीं है, तीन लोक में कहीं नहीं है। वो चौथे लोक की वस्तु है। जब वो वस्तु मिलती है तो तीन चीज़ें आ जाती हैं। मैंने अपनी इस चीज़ का अनुभव एक-दो पर नहीं, बल्कि लाखों लोगों पर किया है। इसलिए इसमें कोई संशय नहीं है, पक्की बात है। तीन चीज़ें शर्तिया होती हैं। जिसे भी मैं नाम देता हूँ, तीन चीज़ें पक्का हो जाती हैं—

1. आत्मा और मन अलग हो जाते हैं।
2. संसार का आकर्षण समाप्त हो जाता है।
3. एक पूर्ण सुरक्षा मिल जाती है।

असर सामने है। मेरा हर नामी नाम पाकर बदल जाता है। हर इंसान मन तरंग में नाच रहा है। मन प्रबल है। पर मेरे नामी के साथ अब ऐसा नहीं हो पा रहा है। नाम पाने के बाद मेरा हर नामी चेतन हो जाता है। अन्य पंथों के लोगों के साथ मेरे नामी की तुलना की जाए तो उनका अपने ऊपर कोई होल्ड नहीं मिलता है, कोई आध्यात्मिकता नहीं मिलती है। मेरे नामी अपने को सबसे अलग पाते हैं, उन्हें अपने अन्य साथी बेवकूफ़ लगते हैं, उनकी हरकतें पागलों वाली लगती हैं, क्योंकि उनके

मूड का कोई पता नहीं होता कि कब अच्छे बन जाएँ और कब गंदे। कब मूड खराब हो जाए, कोई पता नहीं। यानी मन पर कोई होल्ड नहीं होता, इसलिए पागल।

मेरे नामी का मन पर होल्ड होता है, क्योंकि नाम के साथ मैं मन से उसकी आत्मा का बिलगीकरण कर देता हूँ, दोनों को अलग कर देता हूँ, जिससे मन समझ में आने लगता है। यह काम दुनिया में सबसे कठिन है, जो कोई नहीं कर सकता है। जब मन समझ आने लग जाता है तो दुनिया फीकी लगने लग जाती है, उसका आकर्षण समाप्त होने लग जाता है। फिर तीसरा हर नामी को लगता है कि उसके साथ मैं एक सबल संरक्षक है, हरेक को वो संरक्षक अनुभव होता है। सच है, यह जो वस्तु मेरे पास है, ब्रह्माण्ड में कहीं नहीं है। इस वस्तु से मन की दुनिया समाप्त होती जाती है और आत्मा का रूप समझ आने लग जाता है।

ध्यान क्यों किया जा रहा है? यह जानने के लिए कि मैं क्या हूँ? गुरु आत्मा और मन को अलग कर देता है। किसी कीमत पर यह काम अपनी ताकत से नहीं हो सकता है। मन ने ऐसे उलझा दिया है कि आत्मा कुछ समझ नहीं पा रही है। मन कहता है कि रोटी खानी है तो आत्मा कहती है कि यही मेरी इच्छा है। इस तरह मन ने आत्मा को अपने पीछे लगा रखा है। आत्मा सभी इच्छाओं में, कल्पनाओं में घूम रही है। जितने भी कर्म मनुष्य कर रहा है, सभी उलझन वाले हैं। जब भी कोई चाहे कि इससे निकलें तो यह नहीं निकलने दे रहा है। इसकी पकड़ बड़ी दूर तक है। धन-दौलत दे देगा, सिद्धियाँ-शक्तियाँ दे देगा, पर अपने से आगे नहीं जाने देगा। एक अदव गुरु आपको बाहर निकाल देगा।

मन की पहली ताकत है—अज्ञान। मन आत्मा में ऐसे घुल-मिल गया है कि बड़ा झमेला हो गया है। आत्मा यह झमेला लिए-लिए घूम रही है, इसे समझ नहीं पा रही है। चाहे कोई करोड़ों उपाय भी कर ले, इस झमेले को समझ नहीं सकता है, मन की सीमा से बाहर नहीं जा सकता है।

गुरु यथार्थ में आत्म रूप दिखाता है। हंस की चोंच में गुण है। वो दूध पीता है। अगर उसमें पानी मिला हो तो वो उसे छोड़ देता है, केवल दूध-दूध पी जाता है। यदि पाव दूध में पाव पानी मिलाकर दे दिया जाए तो वो पूरा दूध पी लेगा और पूरा पानी छोड़ देगा। यह काम और कोई नहीं कर सकता है। केवल हंस की तरह ऐसे ही पूर्ण सद्गुरु की सुरति में यह ताकत है कि आत्मा और मन को अलग कर सकता है। यह काम गुरु पल में कर देता है। फिर आत्मा दुबारा मन में नहीं समा सकती। चाहकर भी नहीं। जैसे—

दूध को मथ घृत न्यारा किया,
पलट कर फिर ताहिं में नाहिं समाई ॥

दूध से घी बना लिया तो फिर दूध नहीं हो सकता। यदि दही को मथ मक्खन निकाल लिया तो फिर चाह कर भी उसमें नहीं समा सकता। जब पूर्ण गुरु आत्मा को मन से अलग कर देता है तो फिर आत्मा मन में नहीं समा सकती है।

कितनी भी ताकत लगा ले कोई, यह काम नहीं कर सकता है। पर—
कोटि जन्म का पथ था, गुरु पल में दिया पहुँचाय ॥

तब एक संतुष्टि मिलती है। जैसे काँटा लगा हो तो निकालने पर आराम मिलता है। ऐसे ही मन का काँटा गुरु निकाल देता है। फिर आप चाहकर भी जगत के पदार्थों में रम नहीं पायेंगे। जगत के पदार्थ आपको रोमांचित नहीं कर पायेंगे। ऐसे पर ही कहा—

सतगुरु मोर शूरमा, कसकर मारा बाण।

नाम अकेला रह गया, पाया पद निर्माण ॥

नाम पाय सत्य जो बीरा, संग रहूँ मैं दास कबीरा ॥

सच मानना, अभी बार-बार चेताकर कह रहा हूँ, जब यहाँ से चला जाऊँगा तो दुनिया पछताएगी, क्योंकि सत्य है—जो वस्तु मेरे पास है, ब्रह्माण्ड में कहीं भी नहीं है।

भक्ति रहस्य

इस समय भक्ति-क्षेत्र किस दिशा में चल रहा है ? राजनीति के विषय में हम जानकारी रख रहे हैं। विश्व धरातल पर क्या हो रहा है, इसकी जानकारी रख रहे हैं। हमें धर्म-क्षेत्र की भी जानकारी रखनी होगी। यह अहम है। आज भक्ति-क्षेत्र किस दिशा की तरफ जा रहा है ? हमारी भक्ति क्या बोल रही है ? भक्ति का मुआइना करते हैं। यह अहम मुद्दा है। आखिर भक्ति किस दिशा की तरफ बढ़ रही है ? हमें सावधान होना होगा कि कहाँ पर त्रुटि है।

हम सभी पंथ, मत-मतान्तर से रहित होकर चिंतन करें तो हमारे सामने सही दशा आ जायेगी कि हम किस दिशा की तरफ बढ़ रहे हैं, हमारी भक्ति किस दिशा की तरफ जा रही है।

हम ऐसे माहौल में जी रहे हैं, जहाँ दो तरह की भक्तियाँ हैं। पर हमें यह सोचना होगा कि कौन-सी भक्ति हमें किस दिशा की तरफ ले जायेगी।

अगर कोई गुण्डा पड़ोस में आ जाता है तो पूरा मौहल्ला सतर्क हो जाता है। सब सोचते हैं कि इससे परेशानी होगी। शराबखाना खुलता है तो मौहल्ले के लोग, आस-पास के लोग विरोध करने लगते हैं। वो समझते हैं कि इससे नुकसान होगा। यानी इर्द-गिर्द की चीजें चाहे-अनचाहे जुड़ी हुई हैं। मौहल्ले में आग लगी हुई है तो उसकी तपश हमारे घर तक पहुँच जाती है।

इस तरह धर्म में अगर बुरे लोग आ रहे हैं तो उनका प्रभाव

पड़ेगा। धार्मिक वातावरण दूषित हो जाने से असर पड़ेगा। सगुण-निर्गुण विचारधाराएँ हैं। सगुण खराब नहीं है। किसी भी दृष्टिकोण से कोई भी मत है, अच्छा है। सगुण एक नर्सरी की तरह है। यह तो सरलीकरण किया हमारे पूर्वजों ने। दरिया पर पुल बनाया तो यह सरलीकरण हुआ। अन्यथा पहले तैरने वाले पार करते थे। अब हर कोई पार कर सकता है। जीव-जंतु, कुत्ते-बिल्ले आदि सब जा सकते हैं। इस तरह सगुण भी परमात्मा की भक्ति का सरलीकरण है। आगे आगाह कर रहे हैं कि फिर सच्चे गुरु की शरण जाना होगा। सगुण कहते हैं—साकार को। तीर्थ यात्रा करना, मूर्ति पूजा करना, दान-पुण्य करना, शुभ-कर्म करना आदि यह सगुण भक्ति है। यह कौन-सी खराब बात है! मेरा विचार है कि सभी धर्म जो उपासना पद्धतियाँ कह रहे हैं, उसमें छल-कपट न करें, किसी को दुख न दें, दान-पुण्य करें, पाप न करें आदि का महात्म है। वैष्णव भक्ति में ठाकुर पूजा होती है। वो लकड़ी धोकर चूल्हे में डालते हैं। भोजन को जूठा नहीं करते हैं। इनमें कुछ भी खराब बात नहीं है। केवल हमें इनसे आगे बढ़ना होगा, हम यह कह रहे हैं। ऐसा इसलिए कि इनसे हमें मुक्ति-पदार्थ नहीं मिल पायेगा। हमारे पूर्वजों पर प्रभाव था। वो पाप नहीं कर रहे थे। वो छल-कपट नहीं कर रहे थे। तब कौन-सा संतवाद था! वो उन्हीं में थे न। उन्हें भय था। वो निराकार की बात कर रहे थे। हम आगे की बात कर रहे हैं। यहाँ अंतर है। बाकी विरोध नहीं है।

आज तीन तरह की भक्तियाँ हैं—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण। थोड़ा इन्हें समझते हैं।

आज इंसान दिशाहीन बढ़ता जा रहा है। अपनी मंजिल तक जाने का कौन-सा रास्ता चाहिए, पता नहीं है। क्योंकि सगुण में व्यापार आ गया। इसे अपराधी तबके ने अपना लिया। सतोगुणी भक्ति में हिदायत है कि किसी भी जीव की हत्या नहीं करना, किसी भी प्राणी को न सताना।

तमोगुणी बड़ी अटपटी है। मणीपुर, आसाम आदि में तमोगुणी भक्ति है। उन्होंने घर के सामने तालाब बनाया है। वो मछली पालते हैं। वहाँ काली जी की उपासना ज्यादा है। वो जादू-टोना करते हैं। यदि किसी के घर के बाहर तालाब न हो तो उनके यहाँ अपनी बेटी नहीं देते हैं, कहते हैं कि हमारी बेटी खायेगी क्या! वो माँसाहारी हैं, तमोगुणी भक्ति करते हैं। यह निचला स्तर है। जादू-टोना भी तमोगुणी भक्ति है। हम तो तीनों गुणों से ऊपर की भक्ति कह रहे हैं।

वर्तमान में हम देख रहे हैं कि लोग तमोगुणी भक्ति कर रहे हैं। इसमें खान-पान पर परहेज नहीं है। तमोगुणी भी आसान नहीं है। इसमें भी तपस्या है, योग है। आज आदमी भक्ति ठीक नहीं कर रहा है। आज किसी की, कल किसी और की, परसों कोई और।

तमोगुणी वाले काली जी, कामाख्या देवी आदि को सिद्ध करते हैं। लोग सब कर रहे हैं, सयानों के पास भी जा रहे हैं, जादू-टोना भी कर रहे हैं और उन्हें पता नहीं है कि यह कौन-सी भक्ति है। वो किये जा रहे हैं। खानपान वर्जित नहीं है। क्योंकि तमोगुणी में बकरा बलि, माँसाहार, वशीकरण, जादू-टोना आदि सब चलता है। यह कौन-सी भक्ति है कि किसी का वशीकरण करो, त्राटक करो! इससे आत्मा का कल्याण नहीं होगा। आपको सही दिशा में चलना होगा। कहीं विरोध होगा, यह लाजमी है। कई पंथ रुहानियत की बात कर रहे हैं। वो सब कर रहे हैं, बकरा बलि भी करते हैं। उन्हें पता नहीं है। तमोगुणी भक्ति बढ़ गयी है।

दो लड़कों ने नाम लिया, कहा कि हमारे बाबा को भी नाम दो। उन्होंने बताया कि वो 100 साल के हैं। उन्हें किसी दूसरे पंथ में नाम लिये लगभग 50 साल हो गये हैं। उन्होंने अपने गाँव से बड़े लोग वहाँ जोड़े हैं। फिर कहा कि आप नाम देंगे तो बाबा सभी को यहाँ ले आयेंगे।

तो बाबा के पोत्रू-दौत्रू कहने लगे कि आप वहाँ चलें। मैंने सोचा

कि बाबा नहीं आ सकता है तो हम ही चलते हैं। मैं वहाँ गया। मैंने बाबा से कहा कि अपनी इच्छा से नाम ले रहे हो न! कहा —हाँ। मैंने कहा कि आप 50 साल से दूसरे पंथ में हैं, फिर मुझसे नाम क्यों ले रहे हैं? कहा कि शांति नहीं मिली। मैंने कहा कि कल तुम्हारा शरीर छूट जाए तो लोग कहेंगे कि साहिब-बंदगी में नाम लिया तो शरीर छूट गया। कहा कि मुझे कोई चिंता नहीं है। तो मैंने बाबा को नाम दिया। फिर उसने एक कमरे की तरफ इशारा करके कहा कि इसका क्या करना है। मैं वहाँ गया तो देखा, बड़ी सीलन थी, घुटन थी, सिनक की बर्मियाँ बनी हुई थीं। वहाँ सयाने चेलों वाला काम होता था। वो तो रुहानियत की बात कर रहा था। 50 साल से दूसरे पंथ से जुड़ा था, बहुत सारे लोगों को जोड़ा भी था, पर बकरा भी चढ़ा रहा था, बाबा सुरगल को भी मना रहा था, सयानों वाला काम भी कर रहा था।

यानी सात्विक भक्ति की बात कर रहे हैं, उसमें तामस-भक्ति का कीड़ा भी लगा है। गुरुओं ने चेलों को ठीक से नहीं समझाया कि भक्ति के बाद इन चीजों को नहीं करना चाहिए। क्यों नहीं मना किया? क्योंकि फिर वो नहीं आयेंगे। हमने मना किया है। तांत्रिकों, चेलों ने उनके पंथों को चलने नहीं दिया है। सबको अपने में समाहित कर लिया है। हमने उन्हें फाँइट दी है। हमने कहा है—

खेलना हो तो खेलिये, पक्का होके खेल।

कच्ची सरसों पेर के, खड़ी भया न तेल॥

भक्ति करनी है तो एक की करनी है। केवल हमें पकड़ना। हम न तलवारें लेकर उनके पीछे भाग रहे हैं, न हमारी किसी से दुश्मनी है। हम एक सच्ची भक्ति की बात कर रहे हैं।

जो हत्या मानता है, यह ठीक भक्ति नहीं है। मेरा भतीजा सत्यजीत है। उसे सत्तू भी कहते हैं। उसके पास प्रेतात्मा को बुलवाने की सिद्धि है। एक लड़के ने अपनी प्रेमिका को मारकर खुदकुशी कर ली।

सत्तू ने सोचा कि उस लड़के ने ऐसा क्यों किया! रात को वो उसके पास आया और बताया कि उसका किसी दूसरे के साथ प्रेम था।

एक भूत-बंगला है। वहाँ दो चुड़ैल रहती हैं। वहाँ कोई टिक नहीं पाता है। वहाँ उनके साथ रेप हुआ था और मार डाला गया था। सत्तू ने सोचा कि ये किसी को क्यों नहीं टिकने देती हैं। रात को दोनों उसके पास आईं। सत्तू को कहा कि अपनी ताकत न लगाना, हम कुछ करने नहीं आई हैं। तुमने बुलाया, इसलिए आई हैं। सत्तू उससे बात कर रहा था। इतने में दूसरी कभी लंबी हो जाती थी, कभी छोटी, कभी गुलाटियाँ खा रही थी। जब उसने पूछा तो उन्होंने बताया कि ऐसी-ऐसी बात है। सत्तू ने कहा कि तुम यहाँ से चले जाओ।

कुछ ऐसे हादसे हुए कि उसे पता चल गया कि कैसे बुलाते हैं। मैंने कहा कि नहीं बुलाना है किसी को। फिर एक दिन कहा कि बुरा नहीं मानना, जब मैं दुखी होता हूँ तो माँ को बुला लेता हूँ। वो आती है और 2-3 घंटे बैठकर चली जाती है। 10 साल हो गये हैं उसकी माँ को गुजरे हुए। वो बुला लेता है।

इसी तरह सयाने प्रेतों को बुलाते हैं। पर उन्हें बोध नहीं है। यथार्थ में पता नहीं है कि कैसे बुलाना होता है। वो फर्जी काम करते हैं। धन-अर्जन के लिए करते हैं। इसके लिए भी इष्ट सिद्धि करनी पड़ती है। मैंने जादू में भी प्रेतात्माएँ देखी हैं। मैं उनका स्पेशलिस्ट हूँ। मेरे अलावा कहीं भी पिंडा नहीं छूटता है।

मरने के बाद प्रेतात्मा 13 दिन तक बहुत तेज इर्द-गिर्द रहती है। इसलिए गरुड़ पुराण का पाठ करके शांत किया जाता है।

तांत्रिक, सयाने आदि काली जी की भक्ति करते हैं। काली संहाररूपक है, इसलिए यह तामस-भक्ति है। काली तामस-भक्ति की द्योतक है। जो जिसकी भक्ति करेगा, उसके गुण आयेंगे। इसलिए मारन, मोहन, उच्चाटन आदि शक्तियाँ भी आ जाती हैं।

आप बड़े भाग्यवान हैं, जो साहिब की भक्ति में आए हैं। हम तक आना बड़ा ही मुश्किल है। निरंजन ने चारों ओर से घेरा डाला है। आप इतिहास उठाकर देखें तो पता चलता है कि किसी भी महात्मा का इतना विरोध नहीं हुआ होगा। यह निरंजन का खेल है, एक दायरा खींचा है, कोई नहीं पहुँचे। हमारी बातें साधारण नहीं हैं।

हमने नाम दान के समय शर्त दी। तुम अपना रुख न बदलना। तुम स्लिप न खाना। तुम पर तंत्र न लगेगा, भूत न लगेगा। बहुत शक्ति है आपके पास।

जाकी गाँठी नाम है, ताकी है सब सिद्धि।

कहैं कबीर ठाढ़ी रहे, अष्ट सिद्धि नव निधि

सुमिरन करने वाले के पास अष्ट सिद्धि, नव निधि खुद आ जाती हैं।

कर परतीत मिलाऊँ ताहि ॥

बस, तुम भरोसा रखना।

भक्ति बड़ी बारीक चीज है। हमें चिंतन करना होगा कि भक्ति का क्या लक्ष्य है।

भक्ति भक्ति सब जगत बखाना। भक्ति भेद कोई बिरला जाना ॥

ऐसे तो दुनिया भक्ति की बात कर रही है। चारों तरफ भक्ति का महात्म है। भक्ति करने से पहले सोचना होगा कि इससे हासिल क्या होगा। लक्ष्य क्या है? क्या संसार-सागर से तर पायेंगे? क्या आत्म-कल्याण हो पायेगा? क्योंकि—

बिन जाने जो नर भक्ति करई। सो नहिं भव सागर से तरई ॥

दुनिया जरूर भक्ति कर रही है, पर यह नहीं मालूम है कि जो उपासना कर रहे हैं, उससे क्या हासिल होने वाला है। जिस इष्ट की भक्ति कर रहे हैं, उससे क्या प्राप्त होगा, यह मालूम नहीं है। उसकी अपनी सामर्थ्य क्या है, जानना जरूरी है। आज इंसान अनजाने में भक्ति

कर रहा है। एक आदमी चलता जाए, पर जाना कहाँ है, पता न हो तो वो चलना बेकार हो जायेगा। इस तरह भक्ति की बात आती है तो बिना लक्ष्य के वो बेकार हो जायेगी।

आगे भक्त भये बहु भारी। करी भक्ति पर युक्ति न धारी॥

संसार में बहुत से भक्त हुए। भक्ति तो की, पर युक्ति का पता न चला।

सार भक्ति न काहू पाया॥

सच्ची भक्ति किसी ने नहीं की। ऐसा क्यों? लक्ष्य का पता नहीं था। बस, ऐसे ही केवल भक्ति किये जा रहे थे। यहाँ साहिब बड़ी कठिन और जटिल बात बोल रहे हैं कि सार भक्ति कोई भी नहीं पाया।

आखिर भक्ति का पहला लक्ष्य है—मोक्ष। मुक्ति के विषय में गंभीरता से चिंतन करना होगा। मुक्ति का अर्थ है—छुटकारा। यानी हम कहीं बँधे हैं। अगर बँधे हैं तो यह जानना होगा कि किसने बाँधा हुआ है, कैसे बँधे हैं। अँधकार है तो उसकी निवृत्ति के लिए प्रकाश ही उपयुक्त माध्यम है। यह अलग बात है कि प्रकाश का सृजन हम किस सूत्र से करें। चाहे कृत्रिम हो या सूर्य का, पर अँधकार को मिटाने के लिए प्रकाश की जरूरत है। इस तरह मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान आवश्यक है। ज्ञान क्या है? इसका शाब्दिक अर्थ है—जानना। जानने योग्य क्या है? आत्मा क्या है? कैसे बँधे हैं? कौन बाँधने वाला है? इसका निदान कैसे हो? इस मानव मस्तिष्क में मोक्ष का, परमात्म-प्राप्ति का विचार उठता है। मनुष्य परमात्म-प्राप्ति की चेष्टा करता है। हमारी यह भावना क्यों है। क्योंकि हम यह बात ठीक से जानते हैं कि आत्मा नित्य है, अमर है। हम सब धन का महात्म जानते हैं कि जीवन-यापन के लिए बड़ी जरूरत है। भोजन के लिए, कपड़े पहने के लिए, घर बनाने के लिए, बच्चों को पढ़ाने के लिए आदि सब कार्यों में धन की जरूरत पड़ती है। हर क्षेत्र में धन की जरूरत पड़ती है। हम जानते हैं, इसलिए चेष्टा करते हैं। हर

आदमी कर रहा है। धन की प्रासंगिकता सब समझते हैं। हम एक बात जानते हैं कि हमारी आत्मा आनन्दमयी है, नित्य है। ऐसा हम सबने शास्त्रों में पढ़ा है, वाणियों में सुना है। इससे हममें एक धारणा बनी कि आत्मा तक पहुँचना है। संभवता: इसलिए हम सब भक्ति कर रहे हैं। पर हमने यथार्थ में इसकी महत्ता को नहीं समझा, इसलिए बारीकी से समझबूझ कर भक्ति नहीं कर रहे हैं।

यही बात अर्जुन ने वासुदेव से कही, हे भगवन! आपको किस-किस प्रयोजन से किस-किस तरह के लोग भजते हैं? वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन! मुझे 4 चार तरह के लोग भजते हैं। पहले हैं—आर्त। यानी पीड़ित लोग। जिन्हें असाध्य रोग हो गये हैं और उनके छुटकारे के लिए भक्ति करते हैं, वो हैं आर्त। दूसरे हैं—यश को चाहने वाले। वो चाहते हैं कि दुनिया में उनका नाम हो, संसार उन्हें जाने। तीसरे हैं—अर्थ को चाहने वाले, दुनिया का सुख चाहने वाले। चौथे हैं—जिज्ञासु। वो परमात्म तत्व को जानने वाले हैं। हे अर्जुन! ये चार तरह के लोग मुझे भजते हैं।

अर्जुन ने प्रश्न किया, हे जनार्दन! चारों में से आपको कौन प्रिय है? वासुदेव ने कहा—ऐसे तो मुझे किसी भी तरह से भक्ति करने वाला प्रिय है, पर विशेष रूप से जिज्ञासु अति प्रिय हैं।

दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है। काफी लोग बीमारों का भला करने वाले होते हैं, अस्पताल खुलवाते हैं। काफी गरीबों की मदद करने वाले होते हैं। ये लोग अच्छे हैं। इन्हें बुरा नहीं कह सकते हैं। लेकिन इन सबसे कहीं उत्तम है—आत्मज्ञान की ओर ले चलना। अगर हम किसी का आर्थिक भला कर रहे हैं तो यह केवल शरीर से संबंधित था। अगर अच्छी शिक्षा दे रहे हैं, अच्छा तो है, पर इसका लक्ष्य भी मस्तिष्क तक है, आत्मा तक नहीं। गरीबों की सहायता करना अच्छा है, लेकिन ये सब सहायताएँ केवल शरीर तक हैं। इनसे आत्मा लाभान्वित नहीं होगी। आत्म कल्याण से उत्तम कुछ भी नहीं है। यदि इसमें आपकी सहायता हो जायेगी तो इससे बढ़कर पुण्य नहीं हो सकता है।

देखें कि हम सब दुनिया के लोग किन संसाधनों का प्रयोग कर रहे हैं? कोई सगुण तो कोई निर्गुण भक्ति कर रहा है। आखिर हमारी भक्ति का लक्ष्य क्या है? क्या इनसे आत्मा छूट सकेगी? जैसा कि शास्त्राकारों ने आत्मा का वर्णन किया है, उसके अनुसार इसे कोई बाँध नहीं सकता है। यह बंधन में आने वाली चीज नहीं है। यह नित्य है। किसी देश, काल, अवस्था में नाश नहीं होता है। पंच भौतिक तत्वों से परे है, न्यूनाधिक नहीं होती है। कोई भी तत्व इसे नुकसान नहीं पहुँचा सकता है। आत्मा बहुत सुरक्षित है। इसे कौन बाँधा? मुक्ति का अर्थ है—छुटकारा। छुटकारा यानी बचकर बाहर निकलना।

भागवत गीता में भी लिखा है कि यह आत्मा जल नहीं सकती, गल नहीं सकती। इसे किसी सहारे की जरूरत नहीं है। न कभी कमती है, न बढ़ती है। यह अपने आप में परिपूर्ण है, कभी भी जर्जरता को प्राप्त नहीं होती। ऐसी है आत्मा। पर जब हम शरीर की तरफ देखते हैं तो इसकी सीमाएँ हैं, बंदिशें हैं। भोजन न मिले तो खत्म हो जायेगा, पवन न मिले तो खत्म हो जायेगा। जो भी हम कोशिशें कर रहे हैं, शरीर के सुख के लिए कर रहे हैं। बहुत बड़ा कौतुक है कि शरीर में रहने वाली आत्मा को समझ नहीं पा रहे हैं। हम सबकी मान्यता भी है, मानना भी है कि इस नाशवान शरीर का संचालन आत्मा कर रही है। ऐसा हम सबका मानना है। धर्मशास्त्र विश्लेषण कर रहे हैं। फिर यह जड़ नहीं है, चेतन है, आनन्दमयी है। दुनिया के लोग परेशान हैं, पर आत्मा के साथ ऐसी समस्या नहीं है। दुनिया के लोगों में वर्ग हैं, पर आत्मतत्व सर्वभूतेशू है। सबमें एक जैसी आत्मा है।

बहुत बड़ा कौतुक है कि इस शरीर में रहने वाली आत्मा को नहीं जान पा रहे हैं। कैसा अद्भुत रहस्य है कि जो आत्मा शरीर का संचालन कर रही है, उसे अनभिज्ञ हैं!

इस काया में कुछ ऐसे भी तत्व हैं, जो अपने निजस्वरूप तक

जाने नहीं दे रहे हैं। कौन तत्व हैं? क्यों हम ध्यान नहीं कर पा रहे हैं? क्यों हम अन्तर्मुखी नहीं हो पा रहे हैं? यहाँ साहिब ने एक शब्द कहा—

विष अमृत रहत इक संग। मलयागिरि में रहत भुजंगा॥

कौन बाँधा है? जब भी इंसान बीमार होता है तो शरीर की क्रियाएँ बदलती हैं। तो अस्पताल पहुँचता है। डॉ० जानने की कोशिश करता है कि बीमारी क्या है? फिर कारण ढूँढ़ता है। फिर उपाय ढूँढ़ता है और फिर रोग का निदान होता है।

यहाँ आत्मा का ज्ञान नहीं हो रहा है। कारण ढूँढ़ना होगा।

आत्म ज्ञान बिना नर भटके, क्या मथुरा क्या काशी॥

चाहे भौतिक ज्ञान कितना भी प्राप्त कर ले, वो यथार्थ ज्ञान नहीं है।

क्या हुआ वेदों को पढ़ने से, ना पाया भेद को।

आत्मा जाने बिना ज्ञानी कहलाता नहीं॥

यानी आत्म तत्व तक जाना ही होगा। इसके इलावा कोई चारा नहीं है। हम जीवन में कुछ आवश्यक चीजों का वर्गीकरण करते हैं। कुछ चीजें आवश्यक हैं, कुछ अति आवश्यक हैं। इसलिए आत्मज्ञान अति आवश्यक है। इसे प्राथमिकता देनी है। बहुत जरूरी है आत्मा का ज्ञान। इस संसार सागर से पार होने के लिए, परमानन्द की प्राप्ति के लिए आत्मज्ञान जरूरी है।

वशिष्ठ मुनि ने राम जी से कहा कि हे राम! आत्मज्ञान से मनुष्य संसार सागर से पार हो जाता है। राम जी ने कहा, हे गुरुदेव! आत्मा की ऐसी क्या विशेषता है कि उसे जानने मात्र से मनुष्य संसार सागर से पार हो जाता है। कहा, हे राम! आत्मज्ञान के बाद संसार का महत्व समाप्त हो जाता है। जैसे हम निद्रा में स्वप्न देखते हैं। जागने के साथ स्वप्न का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, वो भ्रमांक होता है। इस तरह हे राम! संसार का अस्तित्व आत्मज्ञान के साथ समाप्त हो जाता है। जैसे भ्रमवश रस्सी

में सर्प की कल्पना कर भयभीत हुए। भय असली था, पर भ्रम के कारण पैदा हुआ। सच यह था कि साँप नहीं था, रस्सी थी। हम तो भी भयभीत हुए। पर अगले ही पल जब रस्सी का ज्ञान हुआ तो भ्रम समाप्त हो गया। फिर खुद भी भयभीत होना चाहा तो भी भय उत्पन्न नहीं हो सका। क्योंकि अब रस्सी का ज्ञान हो गया। भय भ्रम के कारण था, अज्ञान से उत्पन्न हुआ था। इस तरह आत्मा को जानने के बाद संसार का भ्रम समाप्त हो जायेगा।

देहाभास के कारण सुख-दुख होते हैं। इसलिए संसार का सुख-दुख दोनों भ्रम हैं। आत्मा इनसे परे है। यह तो शरीर की अवस्था है। इच्छाओं की पूर्ति से सुख होता है और अपूर्ति से दुख हो जाता है। आत्मा को जानने के बाद पता चलता है कि यह तो इंद्रियों से परे है, संसार के किसी भी पदार्थ की इसे जरूरत नहीं है। इसलिए संसार के पदार्थों का आकर्षण समाप्त हो जाता है। इसलिए कहा—

क्या हुआ वेदों के पढ़ने से, न पाया भेद को।

आत्मा जाने बिना ज्ञानी कहलाता नहीं॥

उस समय जगत के पदार्थों का आकर्षण समाप्त हो जाता है।

जितने भी कार्य हो रहे हैं, वो भौतिक शरीर की आदतें हैं। शरीर में पाँच तत्व हैं, उनकी 25 प्रकृतियाँ हैं। पर आत्मा इन तत्वों और 25 प्रकृतियों से परे है। 25 प्रकृतियों के कारण से सोना, जागना, बोलना, चलना आदि हो रहा है। आत्मा इन सबसे परे है। इसलिए इसे जानना होगा। क्योंकि इसे जानने के बाद कुछ भी जानने योग्य नहीं रह जाता है।

कबीर एको जानिया, तो जाना सब जान।

कबीर एक न जानिया, तो जाना जान अजान॥

जब भी खोज के लिए चलते हैं तो सबसे बड़ी रूकावट आती है मन की।

तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन॥

साहिब कह रहे हैं—

जीव के संग मन काल को वासा ।
अज्ञानी नर गहे विश्वासा ॥

सबसे बड़ी रूकावट मन है। जो तत्त्व आत्मज्ञान से दूर करने वाला है, उसे जानना होगा।

या तन में और रहे न कोई। मन और जीव रहे मिल दोई ॥

मन और जीव ही इस शरीर में मिलकर रह रहे हैं। इसका मतलब है कि मन के कारण से आत्मा नहीं जानी जा रही है। अँधकार में हम देख नहीं पाते हैं, क्योंकि अँधकार आँखों पर आच्छादन करता है। इस आच्छादन को हटाने के लिए प्रकाश की जरूरत होती है।

एक बात सामने आई कि आत्मज्ञान में बाधक मन है। साहिब कह रहे हैं कि जब तक आत्मज्ञान नहीं हो जाता, यह जीवात्मा संसार सागर से पार नहीं हो सकती है। इसलिए आवश्यक है कि हम आत्म तत्त्व को जानें। जब भी इसे जानने का प्रयास करते हैं तो मन की रूकावट आती है। तभी तो इसे जीव का वैरी कहा।

हमें सतर्क होना होगा मन से। साँप से सावधान हैं, क्योंकि जानते हैं कि खतरनाक है, मार डालेगा। खतरनाक जानवरों से भी सावधान हैं। पर मन से हम सावधान नहीं हैं। जो आत्म कल्याण में बाधक है, परमानन्द में बाधक है, उसी की आज्ञानुसार काम कर रहे हैं। क्योंकि मुख्य बात यह है कि उसे कोई देख नहीं पा रहा है, उसे कोई समझ नहीं पा रहा है।

मन को कोई देख न पाए, नाना नाच नचाए ॥

यह नचाए जा रहा है। यह कौन सा मन है। साहिब ने मन पर कहा—

तन खोजे मन पाया ॥

पूरे शरीर का सार निकाला तो मन निकला।

तन ही मन है, मन ही तन है ॥

मन प्रभावशाली है, सबको नचा रहा है। हम सब साँप के लिए जानते हैं कि खतरनाक है। मन बड़ा जटिल है, बड़ा खतरनाक है। मन से खतरनाक कोई नहीं। इसके चार रूप हैं—मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। चारों मन हैं। मन के दो रूप हैं—स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल में पंच भौतिक तत्व, कर्मज्ञानेन्द्रियाँ, 25 प्रकृतियाँ मन है। यह इतना बड़ा मन है क्या? यह मन का स्थूल रूप है। जो सुन रहे हैं, यह भी मन है। जो जाग रहे हैं, यह भी मन है।

मन जागे मन सोवे, मन हंसे मन रोवे ॥

साहिब कह रहे हैं—

तीन लोक में मनहि विराजी। ताहि न चीन्हत पंडित काजी ॥

बहुत तगड़ा है मन। जो देख रहे हैं, यह भी मन है। खा-पी रहे हैं, यह भी मन है। बड़ा विशाल मन है। चार अवस्था भी मन है। जाग्रत भी मन है, स्वप्न भी मन है। यानी जो कुछ भी आपमें दिख रहा है, मन है। आत्मा इन सबसे निराली है।

सूक्ष्म में मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार मन है। यानी इच्छा भी मन है, याददाश्त भी मन है, क्रियाएँ भी मन है, सारे फैसले भी मन है। क्योंकि ये चीजें इन्हीं सूक्ष्म रूपों से उत्पन्न हो रही हैं। कभी कहते हैं कि आत्मा कह रही है कि फलाना काम करना है, फलानी चीज खानी है। नहीं, आत्मा तो इंद्रियातीत है। ये सब मन है। साहिब कह रहे हैं—

संतों तन खोजे मन पाया ॥

शरीर को खोजने से मन मिला।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, जगत बना है मन से ॥

बहुत बड़ी बाधा है मन की। मन की वृत्तियाँ सुनें। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार। ये भी मन है। मोह आया तो आप मेरा मेरा कहने लगते हैं। मेरा मेरा के पीछे आँखें थीं, जो उसे देख रही थीं, इंद्रियाँ

थीं, कान भी थे, जो आवाज सुन रहे थे। सीधी बात है कि पता चल रहा है कि ये चीज मन से उत्पन्न हो रही है। काम, क्रोध आदि इसकी वृत्तियाँ हैं।

आप सोचें कि जो संकल्प है, वो भी मन है। जो क्रियाएँ हैं, वो भी मन है। कितना विशाल मन है! जो क्रोध आया, वो भी मन है। भाइयो, इसी से निकलना है। आत्मा इसी में उलझी है। आत्मा कोई डिब्बिया में कैद नहीं है।

जीवन पाँच पच्चीसी लागी। काम क्रोध मद लोभ में पागी॥

आत्म तत्व इनमें उलझा है। थोड़ा आत्मा के आइडियल रूप की तरफ चलते हैं। आखिर आत्मा कैसी है? प्रमाण दे रहा हूँ कि यह ध्यान आत्मा है। रामायण में आत्मा का विश्लेषण बड़े सुंदर ढंग से किया है।
सुनो तात यह अकथ कहानी। समझत बने न जाय बखानी॥
ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

पहला कह रहे हैं कि यह अविनाशी है। फिर चेतन है, अमल है, सहज है और आनन्दमयी है। आत्मा चेतन है। आप देखें कि शरीर में चेतन क्या है। चेतना को कैसे जानें?

आप देखते हैं कि आतंकवादी हमले होते हैं। खुफिया एजेंसियाँ स्कैच तैयार करती हैं। मान लो कि बैंक में डाका डाला गया। अब मैनेजर से पूछताछ होती है कि क्या जानते हो? वो कहता है कि नहीं। वो कहते हैं कि चाँबी क्यों दी? वो कहता है कि कनपटी पर रिवालवर रखी थी, क्या कर सकता था। फिर कहते हैं कि बताओ, कंद लंबा था कि छोटा। वो बताता है कि मध्यम। फिर पूछते हैं कि मुँह गोल था कि लंबा। किसी का चेहरा गोल होता है तो किसी का लंबा। वो पूछते जाते हैं और फीड करते जाते हैं। फिर पूछते हैं कि आँखें छोटी थीं कि बड़ी। फिर पूछते हैं कि बाल खड़े थे कि पड़े थे। फिर मूँछे थीं क्या? यदि थीं तो पतली थीं या मोटी, ऊपर की तरफ थीं, सीधी थी या नीचे की तरफ। सबकी ये

चीजें अलग अलग होती हैं। जब वो ये सब जान लेते हैं तो एक स्कैच तैयार हो जाता है। वो 90 प्रतिशत मिलता है। वो उसे पुसिल थाने में लगा देते हैं, कहते हैं कि ऐसे आदमी को ढूँढ़ें। आप देखें कि महात्मा गाँधी का रेखाचित्र देखकर आप फौरन जान जाते हैं कि ये महात्मा गाँधी जी हैं। नेहरू जी रेखाचित्र देखकर भी जान जाते हैं। हालांकि पूरा चित्र नहीं था, पर आप जान जाते हैं। इस तरह आइडियल रूप से पता चल जाता है।

इस तरह आत्मा का आइडियल रूप तो देखें न! क्योंकि पूरी उसे ऐसे नहीं देख सकते हैं। शरीर में जो चेतना है, वो आत्मा है। यह उलझी है। आप सत्संग में आकर मुझे सुन रहे हैं, देख रहे हैं, समझ रहे हैं। पर यदि ध्यान कहीं चला जाए तो बैठे होंगे, पर फिर भी देख नहीं पायेंगे, सुन भी नहीं पायेंगे, समझ भी नहीं पायेंगे। ये सब ध्यान से हो रहा था। ध्यान सुपर चीज है। बड़ी खास चीज है ध्यान। आँखों को ताकत भी ध्यान दे रहा था, बुद्धि को समझने की ताकत भी ध्यान दे रहा था, कानों को सुनने की ताकत भी ध्यान ही दे रहा था। हम इस ध्यान का महत्व दुनिया में जानते भी हैं। किसी छोटे बच्चे को विदा करते हैं तो कहते हैं कि रास्ता ध्यान से क्रास करना, ध्यान से जाना। सेहत का ध्यान रखना, ध्यान से पढ़ाई करना आदि सब बातों में हम जाने-अनजाने ध्यान को ही महत्व देते हैं। जितने भी मत-मतान्तर हैं, सब ध्यान की बात ही कर रहे हैं। सभी कह रहे हैं कि ध्यान एकाग्र करो। इसे ही सुरति भी कहते हैं।

**सुरति संभाले काज है, तू मत भरम भुलाय।
मन सय्याद मनसा लहर, बहत कतहुँ न जाय॥**

यह ध्यान बहुत बड़ी ताकत है। यह बड़ी अजीब ताकत है। हमें आत्मा तक पहुँचने के लिए ध्यान को इकट्ठा करना होगा। जब भी किसी मत-मतान्तर के लोगों से बात होती है तो सवाल पूछता हूँ कि परमात्मा की प्राप्ति के लिए क्या उपक्रम करते हो? कहता है कि ध्यान करते हैं। मैं पूछता हूँ कि ध्यान क्यों करते हो? कहते हैं कि ध्यान एकाग्र

करते हैं? मैं पूछता हूँ कि क्यों एकाग्र करते हो ध्यान? कहते हैं कि परमात्मा प्राप्ति के लिए। मेरा सवाल है कि ध्यान की प्रासंगिकता क्या है? यहाँ अटक जाते हैं।

ध्यान ही क्यों कर रहे हैं, यह रहस्य समझे। क्योंकि ध्यान में आँखें भी हैं। वो ही आँखें परमात्मा को देख सकती हैं। ध्यान में कान भी हैं। वो ही परमात्मा को सुन सकते हैं। ध्यान में पैर भी हैं। वो ही परमात्मा तक जा सकते हैं। ध्यान में हाथ भी हैं। वो ही परमात्मा का स्पर्श कर सकते हैं। बाकी स्थूल इंद्रियों का वो सब्जेक्ट नहीं है।

आप थोड़ा चिंतन करें तो सबमें यह आत्मरूप दिखाई देगा। मैं एक बार बगीचे में लड्डू खा रहा था। लड्डू बहुत सारी बूँदियों का मिश्रण है। तो जब मैं खा रहा था तो एक बूँदी नीचे गिर गयी। एक चींटी आई और उसे उठाने लगी। पर लड्डू की बूँदी उसके लिए पहाड़ के जैसे थी। वो नहीं उठा पा रही थी। वो चली गयी। मैंने सोचा, देखते हैं कि कहाँ जाती है। मैं उसके पीछे चल पड़ा। वो कोई 50-60 फीट दूर तक गयी और एक बिल में चली गयी। जब वापिस आई तो उसके पीछे 10-12 चींटियाँ थीं। वो उन्हें साथ में लेकर आई। वो उन्हें वहाँ ले गयी, जहाँ बूँदी गिरी थी। सबने बूँदी को घेरा डाला और मिलकर जोर लगाया, बूँदी को उठा लिया। एक घंटे तक उन्होंने वो दाना वहाँ बिल तक पहुँचाया। रास्ते में वो रुक रही थीं, फिर अपनी पोजीशन बदल रही थीं और फिर मिलकर जोर लगा रही थीं। जब वहाँ पहुँची तो फिर वो दाना बिल के सुराख से बड़ा होने से अंदर नहीं जा पा रहा था। इसलिए उन्होंने उसके चार टुकड़े किये और एक-एक करके उनको अंदर ले गयीं।

अब सवाल यह है कि एक नन्हीं सी चींटी ने दाना देखा। उसने सोचा होगा कि अपने परिवार वालों को बताती हूँ, सब मिलकर खायेंगे। इतनी छोटी चींटी में सोचने की ताकत कहाँ से आई? जैसे हम इकट्ठे मिलकर भारी वजन उठाते हैं तो एक दूसरे को कहते हैं कि एक साथ

उठाओ। फिर थक जाने पर पोजीशन भी बदलते हैं और एक साथ एक टॉइमिंग के साथ जोर लगाते हैं। वैसे ही वो भी जोर लगा रही थीं। यानी उनमें भी वो बातें मिल रही थीं। फिर जब अंदर बिल में नहीं जा रहा था। तो उसके चार टुकड़े किये। यानी दिमाग का भी इस्तेमाल किया। आप सोचें कि इतनी नन्हीं चींटी के अन्दर ब्रेन कहाँ से आया, ये सब चीजें कहाँ से आईं! यह है आत्मा का जलवा। यही मान्यता है कि आत्मवतन सर्वभूतेशू। एक इतनी सी चींटी में याददाश्त भी थी, कुछ बोला भी होगा दूसरी चींटियों को, दिमाग भी लड़ाया होगा। इतनी सी चींटी में इतने सिस्टम कहाँ से आए?

यह आत्मदेव था। इसी के लिए कहा कि हे अर्जुन! इस आत्मा की आँखें नहीं हैं, तो भी सभी दिशाओं से देख सकती है। इस आत्मा के पैर नहीं हैं, तो भी सभी दिशाओं से चल सकती है। हाथ नहीं हैं, तो भी सभी दिशाओं से काम कर सकती है।

रहस्य यह है कि इस समय वो पैर स्थूल पैरों को चलाने में लगे हुए हैं। इस समय वो आँखें इन आँखों को ताकत दे रही हैं। आत्मदेव निकल जाए तो आँखें पसरी रह जायेंगी।

जड़ चेतन है ग्रंथि पड़ गयी। यद्यपि मिथ्या छूटत कठिनई॥

इससे निकलना है। जब भी निकलने की कोशिश करते हैं तो मन रूकावट डालता है। आप कहते भी हैं कि मन टिकने नहीं देता है। फिर भी आप दिनभर मन का कहना माने जा रहे हैं। दरअसल मन समझ में नहीं आ रहा है। इसी आत्मा को छुड़ाने के लिए कोई डुबकियाँ लगा रहा है, कोई जंगलों का रास्ता देख रहा है, कोई योग-साधनाएँ कर रहा है। साहिब कह रहे हैं कि कोई भी अपनी ताकत से छूट नहीं सकता है। जिस ताकत ने बाँधा है, बहुत ताकतवर है। वो सबको भ्रमित कर रहा है। आत्मा का जोर नहीं चल रहा है।

बहुत बंधन ते बांधिया, एक विचारा जीव।

जीव विचारा क्या करे, जो न छुड़ावे पीव॥

यह बहुत से बंधनों से बँधी है। कोई भी इनसे अपनी ताकत से नहीं छूट सकता है।

भक्ति भक्ति सब जगत बखाना। भक्ति भेद कोई बिरला जाना॥

यथार्थ भक्ति तत्व कोई नहीं समझा। सब जप, तप, योग आदि को महात्म दे रहे हैं। साहिब कह रहे हैं—

कितने तपसी तप कर डारे, काया डारी गारा।

गृह छोड़ भये सन्यासी, तऊ न पावत पारा॥

जिन तपस्वियों ने शरीर को गला डाला, वो भी इन ताकतों से पार नहीं हो सके। यानी जिस ताकत ने जकड़ा है, बड़ा शातिर है। आप सुनते हैं कि फलाने ऋषि ने तप किया, काम आया और उसकी तपस्या नष्ट कर दी, क्रोध आया तो तप का सत्यानाश हो गया। यही तो साहिब समझा रहे हैं—

चश्म दिल से देख तू, क्या क्या तमाशे हो रहे।

दिल सताँ क्या क्या हैं तेरे, दिल सताने के लिए॥

भाइयो, थोड़ा चिंतन करें।

अनहद लूट होत घट भीतर, घट का मरम न जाना॥

इतना इतना तप किया, क्यों आया काम? क्यों पटकी दी क्रोध ने? क्योंकि ये मन की वृत्तियाँ हैं। चाहे हजार डुबकियाँ लगा लो, ये नहीं छोड़ने वाले हैं। चाहे करोड़ों साल तप कर लो, ये नहीं छोड़ते हैं। फिर कैसे बचेंगे?

बिन सतगुरु बाँचे नहीं, कोई कोटिन करे उपाय॥

बिना सद्गुरु के इनसे नहीं बचा जा सकेगा।

रामायण भी कह रही है—

गुरु बिन भवनिधि तरई न कोई। हरि विरंचि शंकर सम होई॥

विरंच ब्रह्मा जी को कहते हैं, शंकर शिवजी को कहते हैं। यानी बिना सद्गुरु के कोई बच नहीं सकता है। हम सबके हृदय में धारणा भी है कि बिना गुरु के ज्ञान नहीं मिलता। यह कोई पोथियों वाला ज्ञान नहीं है। फिर तो पढ़कर कोई भी ले लेता। यह तत्व-ज्ञान गुरु देगा। साहिब ने वैज्ञानिक तथ्यों से स्थापित किया कि कैसे गुरु पार करेगा। गुरु नाम देकर पार कर देगा। इसलिए गुरु से नाम लेने जाते हैं। पर दुनिया यह नहीं जानती है कि यह कौन-सा नाम है। दुनिया जिसे नाम समझ रही है, वो तो बच्चा भी जानता है। फिर बच्चे से ही ले लो। नहीं, यह वो नाम नहीं, जो बोलने में आ जाता है, जो लिखने में आ जाता है, जो 52 अक्षर की सीमा में आ जाता है। यह इससे परे है।

नाम की महिमा रामायण में भी है।

कलि में केवल नाम आधारा। सुमिर सुमिर भव उतरो पारा॥

नानक देव भी कह रहे हैं—

नानक नाम जहाज है, चढ़े सो उतरे पार॥

साहिब भी कह रहे हैं—

भवसागर का पार, नाम बिना पावे नहीं॥

दुनिया दौड़ पड़ती है नाम लेने को। आखिर कौन सा नाम? साहिब पर्दे खोल रहे हैं।

लिखा न जाई पढ़ा न जाई। बिन सतगुरु कोई नाहिं पाई॥

यह नाम लिखने-पढ़ने में नहीं आता। यह नाम गुरु आपतक पहुँचायेगा। गोस्वामी जी कह रहे हैं—

मोरे हृदय प्रभु अस विश्वासा। प्रभु से बढ़कर प्रभु को दासा॥

कह रहे हैं कि परमात्मा से ज्यादा ताकत संतों में है। यहाँ तक समुद्र की लहरें जाती हैं, रेत ही रेत मिलती है। वो जल जमीन को ऊसर कर देता है। वो जल पीने के लायक नहीं है। पर उसी जल को बादल बड़वानल की प्रकृया द्वारा आप तक पहुँचाते हैं तो आपके खेतों के लिए

भी लाभकारी हो जाता है, पीने के लायक भी हो जाता है। क्योंकि समुद्र के जल में नमक मिला है। वो पीने से लीवर फट जायेगा। पपीहा स्वाति की बूँद का सीधा जल ग्रहण करता है। क्योंकि जमीन पर पड़ने के साथ जमीन के गुण के अनुसार वो तत्व धारण कर लेता है। तो जिस तरह बादल बड़वानल द्वारा समुद्र के जल को संशोधित करके लाए, इसी तरह परमात्म सत्ता को शोधित करके संतजन ले आते हैं। वो उनके पास है।

चंदन का पेड़ दूसरों तक अपनी महक नहीं पहुँचा पाता है। हवा उसकी महक को अपने में समेटकर दूर-दूर तक ले जाती है। इसी तरह संतजन उस परमात्म तत्व को अपने में समेटकर लाते हैं। वो है नाम। वो सुरति से उस नाम को लेकर आते हैं। इसलिए यह नाम सुरति से दिया जाता है, लिखने-पढ़ने वाला मामला नहीं है।

सतगुरु मोहि दीन्ही अजब जड़ी॥

वो क्या काम करेगी? वो चेतन कर देगी।

गुरु बिन हृदय शुद्ध न होई। कोटिन भांति करे जो कोई॥

गुरु उस परमात्म तत्व को लाकर शिष्य के भीतर छोड़ता है। उसी से हृदय के काम, क्रोध आदि मिट पाते हैं और हृदय शुद्ध हो पाता है।

साहिब ऐसे ही नहीं कह रहे—

गुरु को कीजे दंडवत, कोटि कोटि प्रणाम।

कीट न जाने भृंग को, करि ले आप समान॥

वो अपने समान कर लेते हैं। जैसे भृंगा किसी भी कीट को अपना शब्द सुनाकर अपने समान कर लेता है, इसी तरह संतजन अपनी सुरति से वो परम तत्व देकर अपने समान कर लेते हैं। उनका ध्यान प्रबल है। वो अपनी तरह कर लेते हैं।

पारस सुरति संत के पासा॥

उनके पास वो पारस सुरति होती है, जो परम पुरुष में मिली हुई होती है।

तभी तो साहिब कह रहे हैं—

पारस में अरु संत में, तू बड़ो अंतरो मान।

वह लोहा कंचन करे, वह करिले आप समान॥

महापुरुषों के पास जाकर कहते भी हैं कि सुरति रखना, कृपा की दृष्टि रखना। यह वही सुरति है, जिसे पारस सुरति कहते हैं। इसी सुरति से सद्गुरु शिष्य की सुरति को जगाते हैं। उसके अंदर में परमात्म सत्ता को प्रकाशित कर देते हैं। वो सत्ता तो पहले से ही थी। पर उसे जाग्रत कर देते हैं। उसके बाद ही काम, क्रोध आदि को जीतकर हंस अपने देश में जा पाता है।

है प्रगट पर दीसत नाहीं। सतगुरु सैन सहारा है॥



यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
शीश दीये जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान॥

भक्ति भेद में कहाँ विचारी

नाचना कूदना ताल का पीटना, राँडिया खेल है भक्ति नाहिं ॥

अगर हम नजर डालें तो पता चलता है कि लोग आज काली की भक्ति कर रहे हैं, कल हनुमान जी की, परसों किसी ओर की शुरू हो जाते हैं। दरअसल यह भक्ति नहीं है। भक्ति के दो मुख्य धातु हैं। जब भी किसी कार्य को ठीक से नहीं करते हैं तो लाभ नहीं मिल पाता है।

भक्ति भेद में कहाँ विचारी। ताको नहीं जानत संसारी ॥

भक्ति के मूल दो धातु हैं। यदि ये समझ जाएँ तो भक्ति हो जायेगी। यहाँ साहिब एक बात कह रहे हैं—

भक्ति न होय नाचे गाये। भक्ति न होय घंट बजाये ॥

भक्ति न होय मूरति पूजा। पाथर पूजे क्या तोहि सूझा ॥

विमल विमल गावे अरु रोवे। छिन एक परम जन्म को खोवे ॥

ऐसे साहिब मानत नाहिं। ये सब काल रूप के छाहिं ॥

यह भक्ति नहीं है। फिर भक्ति कैसे करें? भक्ति के दो धातु हैं—
विश्वास और ध्यान। अगर दो चीजें ठीक से कर रहे हैं तो भक्ति हो जाएगी। अगर त्रुटि हुई तो फिर भक्ति नहीं है। इनसे हटकर भक्ति का कोई रूप ही नहीं है। इनसे हट कर भक्ति है ही नहीं।

जिस चीज का नाम माँ है, उसमें ममता है। केवल ममता। उसमें स्वार्थ है ही नहीं, एक प्रेम है, एक ममत्व है। इस तरह भक्ति एक श्रद्धा है, भक्ति ध्यान है। इसलिए दो पहलू हैं। भक्ति के दो अंग हैं। हम इन्हें

ठीक से समझें। पहला है—विश्वास। मुसलमान भी कह रहे हैं कि खुदा पर भरोसा रखो। हिंदू भी यही कह रहे हैं कि भगवान पर भरोसा रखो। ईसाई भी कह रहे हैं कि यीशू पर भरोसा रखो। हिंदू कह रहे हैं कि ईश्वर ने चाहा तो ऐसा जरूर होगा। मुसलमान कह रहे हैं कि इंशाअल्ला। सब भरोसे के लिए कह रहे हैं। भरोसे के बिना भक्ति अधूरी है। भरोसा या समर्पण जुबानी नहीं चाहिए। यह सही में हो।

विश्वास कैसा? इसका नाम भरोसा नहीं है कि ऐसे साहिब साहिब करते रहो, पर यदि कोई मुसीबत आई तो चले गये सयाने के पास या फाँडा करवाने। कुछ तो कहते हैं कि साहिब जी, हम वहाँ आपकी ही सुरति कर रहे थे। यह कौन-सी सुरति है! यह छल है; यह पाखंड है, यह भक्ति नहीं है।

बिन जाने जो नर भक्ति करई। सो नहीं भवसागर से तरई॥

पहला है—विधि निषेध नहीं गुरु की टेवा॥ यानी गुरु का शब्द न काटे। गुरु ने जो नियम बताए, उनपर दृढ़ रहे। नाम-दान के समय आपको सात शब्द कहे हैं। अगर विरुद्ध चलोगे तो पाप हो जाएगा। पाप वो रास्ता है जो सीधा नरक में ले जाएगा।

पाप कर्मों से है रहता जिसका मन मलीन।

उसको हरगिज यह संदेश हृदय भाता नहीं॥

पाप मना किया। दूसरा कहा कि माँस न खाना। जब भी आदमी माँस खाता है, किसी की जान लेकर ही खाता है। जिस भी शरीर में आत्मा है, उससे प्रेम करती है। राँजड़ी में हम सब्जी लगाते हैं। वहाँ खरगोश आते हैं। एक खरगोशी आई। हमारा बंदा टार्च लेकर गया तो वो भाग गयी। उसका बच्चा वहीं रह गया। उसने उसे पकड़ लिया और ले आया। मैंने कहा कि यह बड़ा गलत किया। इसे दूध कौन पिलायेगा? इसे नहीं पकड़ना चाहिए था। जब तुमने देखा कि बच्चा है तो पीछे ही नहीं लगना चाहिए था। खाने देना था। क्या ले जाना था! थोड़ी पत्तियाँ ही तो

खाना था। अनदेखा कर देना था। उनकी कोई अपनी जायदाद नहीं है।
वैष्णव जन ताको कहिये, जो पीर पराई जानई ॥

एक ने कहा कि मक्की का पेड़ काट दो, गिलहरी खाती है। मैंने कहा कि खाने दो। उन्होंने भी तो कुछ खाना है। वो कहाँ से खाएँ? हमारे बुजुर्ग मुट्ठी-भर कर चावल छतों पर फेंक देते थे ताकि पक्षी आकर खालें। एक डिब्बे में पानी भरकर रख देते थे ताकि पक्षी पी लें।

तो उस खरगोश के बच्चे के लिए पिंजरा बनवाया, सोचा, नहीं तो बिल्ली खा जायेगी। अपने आदमियों को कहा कि जब बड़ा हो जाए तो छोड़ देना। वो भाग गया। इतना छोटा-सा था। देखा न, वो भी अपनी सुरक्षा कर रहा था! फिर पकड़कर ले आए और पिंजरे में डाल दिया। फिर उसे अमरूद दिया, दूध पिलाया। कहने का मतलब है कि आत्मा जिस भी किसी शरीर में है, उससे प्रेम करती है। आप इन योनियों से होकर आए हैं, इसलिए उनकी पीड़ा को समझना होगा।

कबीर या जग आय के, बदला कभी न जाय ॥

तो फिर कहा कि नशा न करना। नशा करने वाला कौड़ी का नहीं रह जाता है। फिर कहा कि पराई स्त्री की तरफ नहीं जाना। यदि जाओगे तो उसका पति उसे मारेगा, निकाल देगा। फिर कहा कि चोरी नहीं करना, छल-कपट नहीं करना, हक की कमाई खाना।

हमने तो आसान होने वाला रास्ता बताया। फिर कहा कि भक्ति एक परमात्मा की करना। कोई तंत्र-मंत्र नहीं दिया।

तो पहला नियमों का पालन करना। फिर—

और कतहूँ सहाय न ढूँढ़े ॥

सहारा ढूँढ़ा तो भक्ति खराब हो जायेगी। आप यकीन करके देखो कि कितनी शक्तियाँ मिलेंगी। यह नहीं कि थोड़ी मुसीबत आई तो चलो सयाने के पास। किसी भी अवस्था में साहिब साथ है, यह भरोसा हो। यह भक्ति है।

फिर तन, मन, धन से गुरु की सेवा। जितने भी 150 आश्रम हैं, उन सबमें एक-एक आदमी का योगदान है। हरेक आश्रम में मुझे एक-एक बंदा लाया है। जैसे राँजड़ी में शिवदास भगत लाया, गोलगुजराल में शिवराम लाया। यानी 150 आदमियों ने इस पंथ को दीक्षा दी है। 1-1 आदमी के प्रयास से आश्रम बना और सबका सहयोग रहा है। मैं स्वामित्व का घमंड नहीं रखता हूँ। सब कुछ आपका है। सच यह है कि मेरा कुछ भी नहीं है। इसलिए पब्लिक के पैसे से ऐश नहीं करता हूँ। अपनी एक गाड़ी में सब सामान डलवाकर चलता हूँ। पूरी भरी होती है। दूसरी गाड़ी भी तो अपने पीछे लगा सकता हूँ। पर नहीं, मैं ऐसा कभी नहीं करता हूँ। मैं पब्लिक के पैसे को बेकार नहीं करता हूँ। मेरे पास कोई रईस नहीं आ रहे हैं। बहुत ही गरीब तबका आ रहा है। मेरा जूता कई बार फटा होता है तो बदलता नहीं हूँ। मैं कोई हीरो तो हूँ नहीं। अपने पैसे से कपड़े, जूते आदि लेता हूँ। मालूम है, मैं आजतक 10वाँ अंश दे रहा हूँ। गुरु का वचन था। आजतक निभा रहा हूँ।

तन, मन, धन से गुरु की सेवा ही काम आयेगी। और कुछ काम नहीं आयेगा।

जो सबक आपको सिखाया, वो अपने पर लागू करता हूँ। दुनिया वाले सोचते हैं कि साहिब बंदगी वालों के पास फॉरेन का पैसा है। नहीं। हम बहुत मेहनत कर रहे हैं। दुनिया ने हमारी मेहनत नहीं देखी। बाकी को देखो तो महात्मा के चले जाने पर कहीं करोड़ों का पैसा निकलता है, कहीं सोना निकलता है। मैं अपने पास पैसा नहीं रखता हूँ। दौलत के पीछे नहीं भागना। जब बंदा मर जाता है तो सब यहीं रह जाता है। दुनिया को समझ नहीं आ रहा है।

साईं इतना दीजिए, जामें कुटुंब समाय।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय॥

तो फिर कह रहे हैं—

अपने को गुरुहि समर्पे । ताको कबहूँ काल न दर्पे ॥

इसलिए सुरति रखना । सुमिरन हमें परमात्मा के नज़दीक ले चलता है । सुमिरन हमें आन्तरिक शांति प्रदान करता है । यहाँ सुमिरन हो रहा है, वहाँ काल नहीं आ सकता है । यहाँ सुमिरन नहीं है, वहीं काल है । क्योंकि पूरा सच यह है कि सुमिरन के अलावा जो भी कर रहे हैं, बेकार है । इसलिए पल-पल सुरति को संभालने के लिए कहा, क्योंकि भक्त को चाहिए कि एक भी पल बेकार न जाने दे ।



साहिब



बन्दगी

पंथ के सात नियम

“सत्यबचन” हो “नशा विहीना”,
 “शाकाहारी” “चरित्र न हीना” ।
 “हक कमाई” “चोरी नहिं जाना”,
 “जूआ” समझात पाप समाना ॥

निराकार/निरंजन कौन ?

1. सात शून्य सातहि कमल, सात सुरति स्थान ।
इक्कीस ब्रह्माण्ड लग, काल निरंजन ज्ञान ॥
2. एक पाट धरती चले, एक चले असमानी ।
काल निरंजन पीसन लगे, सवा लाख की धानी ॥
3. गुप्त भयो हैं संग सबके, मन निरंजन जानिये ॥
4. अनहद की धुन भँवरगुफा में, अति घनघोर मचाया है ।
बाजे बजे अनेक भांति के, सुनि के मन ललचाया है ॥
..... ।
यह सब काल जाल को फँदा, मन कल्पित ठहराया है ॥
5. तहाँ अनहद की घोर शब्द झनकार है ।
लग रहे सिद्ध साधु न पावत पार है ॥
6. मन ही निराकार निरंजन जानिए ॥
7. ज्योति निरंजन लग काल पसारा ।
मन माया भई किया सृष्टि विस्तारा ॥
8. बिना जाने जो नर भक्ति करई ।
सो नहीं भवसागर से तरई ॥
9. मन ही सरूपी देव निरंजन तोहि रहा भरमाई ।
हे हंसा तू अमर लोक का, पड़ा काल बस आई ॥
10. तीन लोक जो काल सितावे । ताको सब जग ध्यान लगावे ॥
निराकार जो वेद बखाने । सोई काल कोई मरम न जानै ॥

वेद हमारा भेद है, हम वेदन के माहिं । जौन भेद में मैं बसौ, वेदौ जानत नाहिं ॥

कुरान शरीफ कह रहा है 'बेचूना खुदा'। बेचूना अर्थात् निराकार। ईसा मसीह भी कह रहे हैं मेरा आकाशी पिता (स्वर्गीय पिता) मैं उसका इकलौता पुत्र हूँ। अकाशी पिता अर्थात् निराकार। वेद भी निराकार की बात कह रहा है। **जेजे दृश्यम् तेते अनित्यम्। जेजे अदृश्यम् तेते नित्यम्।** यानि निराकार। हमारे सभी धार्मिक ग्रन्थ भी निराकार तक की बात कहते हैं। भाईयो जह निराकार सत्ता वाला जिसको लोग रब्ब कहते हैं, वह 84 लाख योनियों का रचनहार है परन्तु योनियों को चेतन करने वाली जो ऊर्जा है सुरति है वो कोई और चीज़ है तभी तो इस सिरजनहार निराकार को कबीर साहिब जी बोल रहे हैं।

मन ही निराकार, निरंजन जानिए ॥

—साहिब कबीर जी

मुक्ति से सबका तात्पर्य निराकार की प्राप्ति। साहिब बन्दगी पंथ किसी की निन्दा नहीं करता। निराकार सत्ता को भी स्वीकार करता है, लेकिन आगे की बात का संकेत भी देता है। संत सम्राट् कबीर साहिब जी ने न्यारा कहा और निराकार सत्ता से आगे कहा। सगुण भक्ति, निर्गुण भक्ति अथवा पाँच मुद्राओं से आगे कहा।

इसके आगे भेद हमारा। जानेगा कोई जाननहारा ॥

कहे कबीर जानेगा सोई। जा पर दया सतगुरु की होई ॥

संतों ने आ कर तीन लोक से आगे परम निर्माण, अमर धाम, सत्य लोक अथवा दसवें द्वार से आगे 11वें द्वार का भेद संसार को दिया।

भाईयों साहिब बन्दगी पंथ के बानी सद्गुरु मधुपरमहंस जी काल पुरुष के काया नाम और अमर लोक के विदेह नाम का अंतर समझा कर संसार को सत्य भक्ति की ओर ले जा रहे हैं।

काग पलट हंसा कर दीना। ऐसा पुरुष नाम मैं दीना।

अकह नाम, लिखा न जाई, पढ़ा न जाई।

बिन सतगुरु कोई नाहि पाई ॥

यह संतमत नहीं

देवताओं की भक्ति में ध्यान साधना के सूत्र हैं

1. चाचरी मुद्रा—इस में योगी दोनों आंखों के मध्य छिद्र में ध्यान रोकता हुआ **ज्योति निरंजन** शब्द का जाप करता है। इस शब्द से अग्नि तत्व उत्पन्न हुआ। कंटरौल करता अग्नि देवता।

2. भूचरी मुद्रा—इस में योगी ओम (**ओंकार**) का जाप करता हुआ आज्ञा चक्र में ध्यान रोकता है। इस शब्द से जल तत्व उत्पन्न हुआ। कंटरौल करता जल देवता।

3. अगोचरि मुद्रा—इस में **सोहंग शब्द** का जाप होता है और ध्यान अनहद धुनों में रखा जाता है। इस शब्द से वायु तत्व पैदा हुआ। कंटरौल करता पवन देवता।

4. उनमुनि मुद्रा—इसमें योगी अद्भुत प्रकाश देखता और **सत् शब्द** का जाप करता है। जिससे पृथ्वी तत्व पैदा हुआ। कंटरौल करता पृथ्वी का देवता।

5. खेचर मुद्रा—इस मुद्रा में **रंरकार** का जाप करता हुआ योगी दसवें द्वार में चला जाता है। इस से अकाश तत्व की उत्पत्ती हुई। यहां का देवता काल पुरुष निराकार निरंजन है जो चार तत्व को कंटरोल करता है। सभी देवी-देवते इसका परिवार है। यही मन रूप में बनकर सभी में समाया हुआ है।

इन पांचों मुद्राओं को सन्तों ने योगमत बताया और संतमत इससे अलग व आगे बताया।

पांच शब्द और पांचों मुद्रा, सोई निश्चय कर माना।

इसके आगे पुरुष पुरातन उसकी खबर न जाना।।

—साहिब कबीर जी

खेचरि भूचरि साथै सोई। और अगोचरि उनमुनि जोई।।

उनमुनि बसै अकास के माहीं। जोगी बास करे तेहि ठाहीं।।

ये जोगी गति कहा पसारा। संत मता पुनि इन से न्यारा।।

जोगी पांचौ मुद्रा साथै। इंडा पिगला सुखमनि बाँधै।।

—तुलसी साहब हाथरस वाले

सत्यधर्म की ओर

सनातन धर्म से तात्पर्य किसी संप्रदाय पद्धति अथवा मत-मतान्तर से नहीं है। वह तो सत्य प्राप्ति से संबंधित है और सनातन जीव का स्वरूप सनातन कर्तव्य है। श्रीमद् रामानुजाचार्य के अनुसार सनातन उसे कहते हैं जिसका आदि-अंत न हो। श्री रामानुजाचार्य के प्रमाण के आधार पर ही यह कहा गया है कि सनातन धर्म अनन्त क्रिया है, जिसे बदला नहीं जा सकता। सनातन धर्म के अलावा सभी संप्रदायों (मतों) का आरंभ विश्व इतिहास से जाना जा सकता है। जब सनातन गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु से जीव के स्वरूप के संबंध में जिज्ञासा की, तो चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया कि 'जीव का स्वरूप ही श्री भगवान की सेवा करना है।' श्री चैतन्य महाप्रभु के इस कथन पर विचार करने से हमें सहज दृष्टिगोचर होता है कि प्रत्येक जीव निरंतर किसी न किसी दूसरे जीव की सेवा में लगा रहता है। जीव अन्य जीवों की दो प्रकार से सेवा करता हुआ जीवन का उपभोग करता है। निम्न स्तर पर पशुवर्ग तो सेवक के समान मनुष्यों की सेवा करता ही है। दूसरी ओर 'क' मनुष्य 'ख' स्वामी की सेवा करता है, 'ख' मनुष्य 'ग' स्वामी की सेवा करता है, 'ग' मनुष्य 'घ' स्वामी की सेवा करता है, इत्यादि। इस परिस्थिति में हम देख सकते हैं कि माता पुत्र की, पत्नी पति की, पति पत्नी की, मित्र मित्र की सेवा में रत है आदि आदि। यदि हम इस दिशा में आगे गवेषणा करते जाएँ तो पायेंगे कि ऐसा कोई जीव नहीं है जो किसी दूसरे की सेवा न करता हो।

तथापि देश-काल के अनुसार मनुष्य अपने को हिंदु-मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध, यहूदी आदि मत-मतान्तरों का अनुयायी मान लेता है। एक

हिंदु मत बदलकर मुस्लिम बन सकता है, मुस्लिम अपना मत त्यागकर हिंदु मत अंगीकार कर सकता है। इसी प्रकार ईसाई आदि भी मत परिवर्तन करने में स्वतंत्र हैं। परंतु किसी भी परिस्थिति में दूसरों की सेवा करने के सनातन स्वरूप (धर्म) में कोई अन्तर नहीं आता। वास्तव में सेवा करना ही सनातन धर्म है, यथार्थ में श्री भगवान से हमारा संबंध सेवा-भाव का है।

मनुष्य इस संसार में शूकर या गन्धर्व के समान परिश्रम करने के लिए उत्पन्न नहीं हुआ है। यह परम आवश्यक है कि इस मनुष्य योनि की महत्ता को जानकर वह पशु के समान निकृष्ट आचरण करना छोड़ दे। ये बातें भारत के वर्णवादियों को धार्मिक आचरण के लिए समझ में आना चाहिए, जिनसे सनातन धर्म की अपेक्षाएँ हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सेवाभाव मनुष्य का धर्म है। चातुर्यवर्ण में केवल शूद्र जातियों को सेवा कार्य के आधार पर स्पृश्य और अस्पृश्य में बाँटकर धर्म के ठेकेदारों ने सनातन धर्म की उपेक्षा तथा उपहास ही किया है। हरि के जन ही वास्तव में शुद्ध आचरण एवं सेवा के आधार पर सनातन धर्म के अधिक पास हैं। संसार के किसी भी अन्य मत, संप्रदाय, संत या धर्म ने मनुष्यों में जातिभेद करके कोई मार्गदर्शन या शिक्षा नहीं दी है, केवल मानव कल्याण एवं एक ईश्वर का ही ज्ञान देकर सेवा व भक्ति का अलख जगाया है। कबीर साहिब कहते हैं—

तुर्क मसीते हिंदु देहरे, आप आपको धाय।

अलख पुरुष घट भीतरे, ता का द्वार न पाय॥

मन में तो फूला फिरै, करता हूँ मैं धर्म।

कोटि करम सिर पर चढ़ै, चेति न देखे मर्म॥

कबीर साहिब की साखियों में हम देखते हैं एवं उनकी जीवनी तथा देशकाल की परिस्थितियों में हम पाते हैं कि उन्होंने बिना किसी

वर्ण-भेद, ऊँच-नीच के सभी को धर्म का एक ही संदेश दिया है। ईश्वर एक है। सभी मनुष्यों के हृदय में विराजमान हैं, सब उसे मंदिर और मस्जिदों में ढूँढ़ते हैं। धार्मिक आडंबरों से घिरे लोग भिन्न-भिन्न मतों में बैठकर दंभ करते हैं कि वे बड़ा धर्म कमा रहे हैं जबकि ऐसे लोग वास्तव में अनेक पाप करते हुए धर्म के मर्म को समझते भी नहीं हैं।

हमें मानना होगा कि धर्म के ठेकेदारों के अत्याचारों एवं अवर्णनीय अमानुषिकता के पश्चात भी हिंदु धर्म में नीची कहीं जाने वाली जातियों में सहिष्णुता, सहनशीलता एवं संतोष की अजय मानवीयता है। उन्होंने अगढ़ धर्म एवं हिंदु धर्म को जीवित रखने हुए सेवा व प्रेम के मार्ग से पलायन नहीं किया है। इतिहास की अनगिनत संस्कृतियों के प्रभाव से अछूते रहे इस समाज से ही भारतीय संस्कृति अजर अमर है। सद्गुरु कबीर साहिब जी कहते हैं कि विष के बीज बोने पर मनुष्य को विष के फल ही मिलेंगे, उस समय उसकी शिकायतें व्यर्थ होंगी। महात्मा बुद्ध ने कहा है—

न जटाई न गोत्तेन न जच्चा होति ब्राह्मणो।

यम्हि सच्चं च धम्मो च सो सुची च ब्राह्मणो॥

अर्थात् 'न जन्म के कारण, न गौत्र के कारण, न जटा धारण के कारण ही कोई ब्राह्मण होता है। जिसमें सत्य है, जिसमें धर्म है वही पवित्र है और वही ब्राह्मण है।'।

कबीर साहिब कहते हैं—

न्हाये धोये क्या भया, जो मन का मैल न जाय।

मीन सदा जल में रहे, धोये बास न जाय॥

वैष्णव भया तो क्या भया, बूझा नहीं विवेक।

छप्पा तिलक बनाय कर, दग्ध्या लोक अनेक॥

संतों ने कभी किसी धर्म, गुरु या मत को ऊँचा-नीचा नहीं कहा। हम तभी अन्य गुरु, महात्माओं, धर्म मतों के छोटे-बड़े होने के बारे में

फैसला कर सकते हैं जब हम खुद उनसे ऊँचे हों। हम पहाड़ के तले बैठकर पहाड़ की चोटी के बारे में कैसे कुछ कह सकते हैं। हमें अपने ही धर्म ग्रंथों से भक्ति के सिद्धांतों की समझ आ जाए तो हमारी दृष्टि इतनी विशाल हो जाती है कि हर धर्म ग्रंथ में समान विचार दिखाई देने लगते हैं।

तब हम आसानी से समझ जाते हैं कि हर ऋषि, महात्मा का एक ही उपदेश है, एक ही संदेश है। संतों के वचन उन धर्म-ठेकेदारों की समझ में आने वाले नहीं हैं जिन्होंने वर्ण-भेद, ऊँच-नीच और लोभ-मोह की विषय वासनाओं में डालकर धर्म को अधर्म में परिवर्तित कर दिया है।

ऋषि-मुनियों ने वेदों के अर्थ और इतिहासपूर्वक ग्रंथ बनाए। ब्रह्म अर्थात् वेद का व्याख्यान होने से उन ग्रंथों का नाम ब्राह्मण हुआ। सबसे पहले जिस जिस मंत्र का अर्थ दर्शन जिस जिस ऋषि को हुआ, उस उस ऋषि ने नाम याद रखने की दृष्टि से मंत्र अथवा सूक्त के साथ लिखा आता है। ये ऋषि मंत्रकर्ता नहीं थे, केवल मात्र के अर्थ के द्रष्टा थे।

“ब्राह्मण ग्रंथ वेद नहीं है। ब्राह्मण ग्रंथों के आरंभ में तथा अध्याय समाप्ति पर कहीं वेद शब्द नहीं लिखा जाता। “महिर्षि यास्क” भी जब वेद का प्रमाण देते हैं, तब लिखते हैं—‘इत्यपित निगमो भवति’, परंतु ब्राह्मण ग्रंथों का उद्धरण देते हुए लिखते हैं—‘इति ब्राह्मणम्’ जिससे स्पष्ट है कि वेद और ब्राह्मण भिन्न भिन्न हैं। ब्राह्मण ग्रंथों में ऋषि-महिर्षि और राजाओं के इतिहास मात्र उपलब्ध होते हैं और इतिहास जन्म के पश्चात् लिखा जाता है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि ब्राह्मण ग्रंथ वेद नहीं है। वेदों में किसी का इतिहास नहीं है।”

मुक्ति का अर्थ

मुक्ति से लौटना भी पड़ता है। किंतु मुक्ति जन्म-मरण की तरह

नहीं है, क्योंकि जब तक 36000 बार सृष्टि उत्पत्त और प्रलय होती है, इतने समय तक मुक्ति के आनन्द में रहना और दुखी न होना छोटी बात नहीं है। जैसे मरना अवश्य है फिर भी जीवन का उपाय किया जाता है, वैसे ही मुक्ति से लौटकर जन्म में आना है, तथापि उसका उपाय करना अत्यावश्यक है।

मुक्ति के साधन

जो कोई दुख को छोड़ना और सुख को प्राप्त करना चाहे वह अधर्म को छोड़कर धर्म अवश्य करे। मुक्ति के लिए चार अनुष्ठान करना चाहिए—

1. विवेक : सत्पुरुषों के सत्संग से विवेक, सत्य, असत्य, धर्म, अधर्म, कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य का निश्चय करें। विवेक से यह भी जाने कि 'आत्मा' अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय है अर्थात् 'पंचकोशी' है। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय अवस्थाओं और स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण इन तीन शरीरों से पृथक् हैं।

2. वैराग्य : पृथ्वी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के गुण-कर्म-स्वभावों को जानकर उपासना में तत्पर होना और सृष्टि से उपकार लेना वैराग्य है।

3. षटक सम्पत्ति : अर्थात् छः प्रकार के कर्म करना—

क) शमः — अपने आत्मा और अंतःकरण को अधर्म से हटाकर धर्माचरण में सदा प्रवृत्त करना।

ख) दमः — श्रवण आदि इंद्रियों और शरीर को व्यभिचार आदि बुरे कर्मों से हटाकर इंद्रियों को जीतने आदि शुभ कर्मों में प्रवृत्ति रखना।

ग) उपरतिः — दुष्ट कर्म करने वाले पुरुषों से सदा दूर रहना।

घ) तितिक्षाः — निन्दा-स्तुति, हानि-लाभ में हर्ष-शोक को छोड़कर मुक्ति के साधनों में सदा लगे रहना।

ङ) श्रद्धाः — सत्य वेदों शास्त्रों और इनके ज्ञान से पूर्ण विद्वानों, सत्य

उपदेशकों के वचनों पर विश्वास करना।

च) समाधान: — चित्त में एकाग्रता।

4. मुमुक्षुत्व: जिस प्रकार भूख-प्यास के आतुर व्यक्ति को सिवाय अन्न-जल के दूसरा कुछ अच्छा नहीं लगता उसी तरह मुक्ति साधन के अतिरिक्त किसी में प्रीति नहीं होनी चाहिए।

चारों साधन अनुष्ठान के पश्चात् चार अनुबंधों का सेवन करना चाहिए—

1. अधिकारी : जो उपरोक्त चार साधन अनुष्ठान से युक्त पुरुष होता है वही मोक्ष का अधिकारी होता है।

2. संबंध : ब्रह्म की प्राप्ति रूप मुक्ति को प्रतिफल और वेद-शास्त्रों को उसका मार्गदाता समझकर उन्हीं का अध्ययन आदि करना।

3. विषयी : सब शास्त्रों का प्रतिपादन विषय 'ब्रह्म' है। उस ब्रह्म की प्राप्ति रूप विषय वाले पुरुष का नाम विषयी है।

4. प्रयोजन : सब दुखों से छुटकारा और परमानन्द को प्राप्त होकर मुक्ति का सुख, प्रयोजन है। उपरोक्त आचरण के दौरान ही चार श्रवण अनुष्ठान आवश्यक है—

क) श्रवण : जब कोई विद्वान् उपदेश करे तब शांत होकर और ध्यान देकर सुनना, ब्रह्म विद्या के सुनने में विशेष ध्यान देना, क्योंकि यह सब विद्याओं में सूक्ष्म है।

ख) मनन : सुनने के पश्चात् एकांत में बैठकर सुने हुए पर विचार करना। जिस बात में शंका हो उसे पुनः पूछना और समाधान करना।

ग) निश्चिन्तासन : जब सुनने और मनन करने से निःसंदेह हो जाए तब समाधिस्थ होकर उस बात को देखना-समझना कि वह जैसा सुना और विचारा था वैसा ही है या नहीं।

घ) साक्षात्कार : पदार्थ के स्वरूप, गुण और स्वभाव को जैसा हो यथा-तथ्य जान लेना। ये श्रवण चतुष्टय कहलाता है।

जैन धर्म — मोहशिला अर्थात् शिवपुर में जाके चुपचाप बैठे

रहना। ईसाई चौथे आसमान पर जिसमें विवाह, लड़ाई, बाजे-गाजे वस्त्र आदि धारण कर आनन्द भोगना। मुसलमानों के सातवें आसमान पर खुदा।

वाममार्गी 'श्रीपुर'। शैव मत का कैलाश। वैष्णवों का वैकुण्ठ और गोकुलिये गुसाई 'गोलोक' आदि में जाके उत्तम स्त्री, अन्न-पान, वस्त्र, स्थान आदि प्राप्त होने को मुक्ति मानते हैं। पौराणिक लोग, 'सालोक्य' — ईश्वर के लोक में निवास, 'सानुज्य' — छोटे भाई के समान ईश्वर के समीप रहना, 'सायुज्य' — ईश्वर से संयुक्त हो जाना। 'सामीप्य' — सेवक के समान ईश्वर के समीप रहना — ये चार प्रकार की मुक्ति मानते हैं। इस प्रकार पौराणिकों की मुक्ति तो कीट पतंग और पशु आदि को भी स्वयं प्राप्त है। ये सब ही ईश्वर के लोक हैं। इन्हीं में सब जीव रहते हैं, इसलिए 'सालोक्य' मुक्ति अनायास प्राप्त है। ईश्वर सर्वत्र व्याप्त होने से सब उसके समीप है इसलिए 'सामीप्य' मुक्ति स्वतः सिद्ध है। जीव ईश्वर से सब प्रकार छोटा और चेतन होने से स्वतः बंधुवत् है। अतः 'सानुज्य' मुक्ति भी स्वतः सिद्ध है। वेदान्ती ब्रह्म में लय होने को मुक्ति मानते हैं। यह सिद्धांत भी ठीक नहीं है क्योंकि जीव का विनाश ही होता। अपने विनाश के लिए कोई प्रयत्न भी नहीं करेगा।

ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज वालों ने लोगों को ईसाई होने से बचाया, पाषाणादि मूर्ति पूजा को हटाया, जाल-ग्रंथों के फंदों से भी लोगों को छुड़ाया, ये बातें तो अच्छी थीं। परंतु इन लोगों ने ईसाइयों के बहुत से आचरण लिये हैं, खान-पान, विवाह आदि के नियम भी बदल दिये हैं। ब्रह्म समाज के उद्देश्य की पुस्तकों में साधुओं की संख्या में ईसा, मूसा, मोहम्मद, नानक देव और चैतन्य लिखे हैं, किसी ऋषि-महिर्षि का नाम नहीं लिखा है। इनका अग्निहोत्रादि कर्मों को कर्तव्य न समझना भी अच्छा नहीं

चार्वाक मत — इसका प्रवर्तक बृहस्पति नामक व्यक्ति था।

उसका वेद, ईश्वर और यज्ञादि उत्तम कर्मों में विश्वास नहीं था। संसार में सबको मरना है। जब तक शरीर में जीव रहे तब तक सुख से जियो। मरने के पश्चात शरीर भस्म हो जाता है, पुनर्जन्म नहीं होता। यही लोक है, परलोक कुछ नहीं। शरीर से भिन्न कोई आत्मा नहीं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु — इन चार भूतों के संयोग से शरीर में चैतन्य उत्पन्न हो जाता है। इनके मत में वेदों को बनाने वाले भांड, धूर्त और निशाचर थे।

बौद्ध मत — बौद्ध और जैन प्रत्यक्ष आदि चारों प्रमाण, अनादि जीव, पुनर्जन्म, परलोक और मुक्ति को मानते हैं। इतना ही चार्वाक से बौद्धों और जैनियों का भेद है, परंतु नास्तिकता वेद और ईश्वर की निन्दा अन्य मतों से द्वेष और जगत का कर्ता कोई नहीं इत्यादि बातों में ये तीनों एक हैं। बौद्ध संसार को दुखरूप और क्षणिक मानते हैं, अर्थात् संसार में कोई वस्तु सुख देने वाली नहीं और प्रत्येक वस्तु प्रतिक्षण बदलती रहती है। बौद्ध लोग महात्मा बुद्ध की पूजा करते हैं। इनकी बारह पूजा हैं—पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ अर्थात् कान, आँख, जीभ, नाक और त्वचा। पाँच कर्मेन्द्रियाँ अर्थात् पैर, हाथ, लिंग-गुदा, पेट और मुँह ये दस इंद्रियाँ और मन तथा बुद्धि। इन्हीं का सत्कार अर्थात् इनके आनन्द में प्रवृत्त रखना इत्यादि बौद्ध मत है। इन मोक्ष साधनों को जानते हैं तब दशप्राण और ग्यारहवें जीवात्मा की पूजा क्यों नहीं करते? जब इंद्रियों और अंतःकरण की पूजा ही मोक्षप्रद है तो अन्तर क्या रहा। संसारी जीव भी तो इंद्रियों की ही पूजा करते हैं। बौद्ध विषय-वासना को ही मुक्ति मानते हैं, फिर तो सुषुप्ति में भी मुक्ति मानी जायेगी।

जिनदेव को मानने वाले जैन कहलाते हैं। इनमें एक श्वेतांबर और दूसरे दिगंबर हैं। ये भी चार्वाक और बौद्धों के समान वेद और सृष्टिकर्ता ईश्वर को नहीं मानते। यज्ञादि कर्मों को निरर्थक बताते हैं। छः द्रव्य मानते हैं—1) धर्म 2) अधर्म 3) आकाश 4) पुद्गल 5) जीव और 6) काल। जैन लोग कहते हैं कि जीव इसी से परमेश्वर हो जाता है।

जितने तीर्थकर हुए वे इन्हीं से मुक्त होकर परमेश्वर बन गए। अनादि ईश्वर कोई नहीं है। इनके छः नाम हैं—सर्वज्ञ, वीतराग, अहर्न, केवली, तीर्थकृत और जिन। जैन लोग ईश्वर को इसीलिए नहीं मानते कि सर्वज्ञ अनादि परमेश्वर में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं, अर्थात् वह देखा, सुना, सूँघा और छुआ नहीं जा सकता। प्रत्यक्ष के बिना अनुमान नहीं तो शब्द प्रमाण भी नहीं हो सकता।

वेदशास्त्रों के महापंडितों के इस दोमूँहे ज्ञान के कारण ही सुधार की कोई संभावना न देखते हुए शूद्र वर्ण में जन्मे धर्मों के महान अध्ययेता हिंदु मनीषी डॉ. अंबेडकर ने अपनी राष्ट्र भक्ति के कारण शूद्रों को बौद्ध धर्म अपनाने का आह्वान किया। बौद्ध मत कोई धर्म नहीं, बल्कि विवेकपूर्ण चिंतन की अहिंसावादी विचारधारा है, इसी कारण संसार के आधे भू-भाग द्वारा अपनाया गया।

आम आदमी और संसार के मनुष्य चूँकि वेद-मनु स्मृति में निर्धारित मुक्ति मार्गों के अनुसार आचरण करे, इनके शास्त्रों के पंडित-विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करें। जो अयोग्य और शूद्र वर्ण के हैं अतः किसी भी सृष्टि रचनाकाल में ईश्वरीय विधान से ही आत्मज्ञान से वंचित रहेंगे। दूसरी ओर कबीर साहिब, संत गुरुनानकदेव, दादूदयाल जी, पलटू साहिब, सहजोबाई जैसे अनेक संतों को वेदशास्त्र विरोधी कहते हुए साधारण पंथ बनाने वाले और आत्म-परमात्म ज्ञान के अयोग्य निरूपित किया है। क्योंकि ये सत्पुरुष की भक्ति का भारत सहित संसार के आम आदमी को सहज रूप से परमात्म ज्ञान देकर सद्गुरु भक्ति से ही मोक्ष की गारंटी देते हैं। भला शास्त्रों के पढ़ने और लिखने वालों को यह कैसे स्वीकार हो कि परमात्मा उनके बिना ही किसी अन्य आम इंसान को मिल जाए। एक अनपढ़ भक्त सहजोबाई अपने सद्गुरु चरणदास द्वारा परमात्मानुभव होने पर गा उठीं—

राम तजूँ गुरु को न बिसारूँ ।
 गुरु के सम हरि को न निहारूँ ॥
 हरि ने जन्म दियो जग माहीं ।
 गुरु ने आवागमन छुड़ाई ॥
 हरि ने पाँच चोर दिये साथा ।
 गुरु ने लई छुड़ाय अनाथा ॥
 हरि ने कुटुम्ब जाल में घेरी ।
 गुरु ने काटी ममता बेरी ॥
 हरि ने रोग भोग उरझायो ।
 गुरु योगी कर सबे छुड़ायो ॥
 हरि ने कर्म भर्म भरमायो ।
 गुरु ने आतम रूप लखायो ॥
 हरि ने मौसे आप छिपायो ।
 गुरु दीपक दे ताहि दिखायो ॥
 फिर हरि बंध मुक्त गति लाये ।
 गुरु ने सबही भर्म मिटाये ॥
 चरनदास पर तन मन वारूँ ।
 गुरु न तजूँ हरि को तज डारूँ ॥

कबीर साहिब, नानक देव, पलटू साहिब, मीरा, दादू, रैदास जैसे संतों ने कोई पृथक पंथ और धर्म नहीं बनाया केवल मानव जाति को सत्य का मार्ग दिखाया है। इसलिए हम पैगंबर मोहम्मद, ईसा मसीह, मूसा आदि को भी संसार के किसी भू-भाग में तत्कालीन परिस्थितियों में सत्य का मार्ग बताने वाला ही मान सकते हैं। दुर्भाग्य से हर सत्यपुरुष, पैगंबर या अवतार के पश्चात उनके नाम से धर्म, संप्रदाय, पंथ बनाने वाले स्वार्थी वर्ग संसार के मनुष्यों को व्याख्याओं और धर्म विधानों में उलझाकर भ्रमजाल में फँसाया है। इसीलिए साहिब कहते हैं—

साधो सहज समाधि भली ॥
 गुरु परताप जा दिन से जागी, दिन दिन अधिक चली ॥
 आँख न मूदों कान न रूँधों, तनिक कष्ट नहीं धारों ॥
 खुले नैन पहिचानों हँसि हँसि, सुंदर रूप निहारों ॥
 सबद निरंतर से मन लागा, मलिन वासना त्यागी ॥
 ऊठत बैठत कबहुँ न छूटे, ऐसी तारी लागी ॥
 कहैं कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट कर गाई ॥
 दुख सुख से जोड़ परे परमपद, तेहि पद रहा समाई ॥
 तन थिर मन थिर वचन थिर, सुरति निरति थिर होय ॥
 कहैं कबीर उस पल को, कल्प न पावै कोय ॥
 वेद कहे सर्गुण के आगे, निर्गुण का विश्राम ॥
 सर्गुण निर्गुण तजहुं सोहागिन, देख सबहिं निजधाम ॥
 सुख दुख वहाँ कछु नहीं व्यापै, दर्शन आठो याम ॥
 नूर ओढ़न नूर आसन, नूरे का सिरहान ॥
 कहैं कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरु नूर तमाम ॥

यहाँ तक धर्म आचरण, धर्म का संचय, ज्ञानी, आचार्य, माता-पिता, भाई-बहिन, पुत्र-पुत्री, मालिक-सेवक के संबंध, कोमल स्वभाव, जितेंद्रिय, हिंसक एवं क्रूर आचरण वालों से दूर रहने, मिथ्या भाषण न करने, चोरी आदि सब पापों से दूर रहने, मन को जीतने वाला बनने की वेद-शास्त्र शिक्षाओं का ज्ञान तथा यथा संभव सभी मनुष्यों के लिए हितकारी है। सभी संत यही सिखाते हैं। संत कभी भी वेदशास्त्रों धर्मों का विरोध नहीं करते, पर बताते हैं कि केवल इनके पढ़ने, सुनने और इनके नियम विधानों के भ्रमजाल में जीवन नहीं गुँवाना चाहिए। केवल इनसे परमात्म प्राप्ति नहीं होगी। परमात्म प्राप्ति के लिए परमात्मलीन सद्गुरु का संग ही एकमात्र उपाय है। इसके लिए किसी भाषा-लिपि ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। भाषा, तर्क-वितर्क का पांडित्य परमात्म प्राप्ति हेतु

किसी भक्त के लिए सहयोगी नहीं है।

संत तो परमात्मा को सगुण और निर्गुण भक्ति दोनों से परे बता रहे हैं। क्या वे हमारे धर्मशास्त्रों के विरुद्ध कह रहे हैं? क्या वेद-पुराणों की निन्दा कर रहे हैं? नहीं, नहीं, वे तो बल्कि कह रहे हैं—

कौ कहे वेद को झूठा, वो झूठा जो वेद न विचारा ॥

संतमत-वेदमत में यही अंतर है कि दूर जाने के बाद 'वेद' रुक जाता है, कहता है—नेति! नेति! लेकिन संत कहीं रुकता नहीं, वह आगे की बात कहता है, परमतत्व तक ले जाता है। तभी तो साहिब कह रहे हैं—

वेद हमारा भेद है, हम वेदन के माहिं।

जौन भेद में मैं बसौ, वेदौ जानत नाहिं ॥

इसलिए ऐसे वेद-शास्त्र-ज्ञाता जिन्हें परमात्मज्ञान की अनुभूति नहीं है, संतों और विशेषकर कबीर साहिब जैसे सत्पुरुष को कैसे जानेंगे। उन्हें तो उनका फूल पर उत्पन्न होना और देह त्याग के समय फूल और चदरिया छोड़कर जाना समझ ही नहीं आएगा, क्योंकि यह मनुष्य बुद्धि से परे है। ऐसे ज्ञानी लोग वेद-शास्त्र के इस ज्ञान को तो अपनी बुद्धि-विवेक से स्वीकार करते हैं कि वेद खरबों वर्षों से 'ब्रह्मा' के साथ अवतरित होते हैं। वह भी देव लिपि संस्कृत में। किंतु यही ज्ञानी वर्तमान 1398 ई. में प्रकाश पुंज से शिशु रूप में लहरतारा (काशी) तालाब में कमल पुष्प पर अवतरित 'कबीर साहिब' के अवतरण को स्वीकार करने में वैज्ञानिक तर्क का आधार लेते हैं। अब इस शास्त्राकारों को आत्मतत्व की अनुभूति वेद किस प्रकार कराएँ कि केवल 'ब्रह्म' को ही परमब्रह्म ने अंडे से उत्पन्न नहीं किया अपितु 'परब्रह्म' अपने स्वरूप को सृष्टि में कभी भी प्रकट करने में सक्षम है। क्योंकि वह सर्वव्यापी लोक-लोकान्तर में स्थित है। जिस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु और महेश; राम और कृष्ण सहित अनन्त देवरूपों में मनुष्य देह धारण करते हैं, उसी प्रकार

सत्यपुरुष परब्रह्म, 'सद्गुरु' रूप में स्वयं प्रगट हो सकते हैं।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड में, बंदी छोड़ कहाय।

सो तो पुरुष कबीर है, जननी जना न माँय॥

सम्बत् 1455 सुदी पूर्णिमा सोमवार सन् 1398 ई. में काशी लहरतारा तालाब में अद्भुत प्रकाश उतरकर बालक रूप में परिवर्तित हुआ और इस कौतुक को स्वामी रामानन्द के शिष्य स्वामी अष्टानन्द ने देखा और जाकर रामानन्द को बताया। नव-दम्पति नीरू जुलाहे ने तालाब से शिशु को ले जाकर पाला। 8-10 वर्ष की छोटी उम्र से ही कबीर साहिब ने समाज को उपदेश देना शुरू कर दिया। स्वामी रामानन्द जी को सांसारिक गुरु बनाया जो कट्टरपंथी ब्राह्मण थे। पाखंडी स्वार्थी तबका साहिब को मुसलमान, नीच जाति का या विवाहित कहकर बदनाम तथा अपमानित करता रहा। काशी जैसी पौराणिक मान्यताओं की नगरी में कबीर साहिब का अवतरण और फिर आडंबर अधर्म पर प्रहार पुराण पंथियों को कैसे सहन होता। 52 बार कबीर साहिब को मौत की सजा दी गई, कुटिया में आग लगाई गई, किंतु कबीर साहिब विश्व के पहले परमपुरुष हैं, मरे नहीं, सब पर विजय पाई। जबकि अन्य महापुरुष जो माँ के गर्भ से उत्पन्न हुए, स्वयं को पाखण्डियों, तानाशाहों की सजा से बचा नहीं सके। कबीर साहिब पहले ऐसे अवतरित हुए, जिन्होंने खुले रूप में सभी धर्मों में व्याप्त अधर्म एवं कुप्रवृत्तियों पर प्रहार किया, किसी विशेष मत के प्रचारक नहीं बने। सत्य और सत्यधाम के लक्ष्य के साथ सद्गुरु शरण को परमधर्म बताया। काशी नरेश वीर सिंह बघेल और मगहर का पठान नवाब बिजलीखान उनके शिष्य होकर गुरु भाई थे। इन दोनों के सेनापतियों सहित सेना के सिपाहियों और लाखों भक्तों के सामने मगहर की कुटिया में 120 वर्ष की आयु में कबीर साहिब इच्छा से देह त्याग कर अपने लोक को गए। कुटिया में केवल कमल फूल और चादर ही भक्तों को मिले। वह 'मगहर', जिसे पुराणपंथी, नर्क का

द्वारा कहते थे और 'काशी' में 'काशी करवत' जैसे पाप को स्वर्ग का द्वारा बताकर हत्या की जाती थी। मगहर में भी शिष्यों द्वारा हिंदु और इस्लाम धर्म संस्कार करने के नाम पर तलवारें खिंच गई थीं। फैसला किया कि युद्ध होगा, जो जीत गया वह साहिब के पार्थिव शरीर को ले लेगा। इतने में कौतुकमय अद्भुत प्रकाश हुआ.....अद्भुत शब्द हुआ.....आकाशवाणी हुआ.....उठाओ पर्दा, नहीं है मुर्दा। ऐ मूर्ख नादाना, तुमने हमको नहीं पहचाना।। यह कौतुक करने वाला पहले कभी नहीं हुआ और न आगे ऐसा होगा।

सभी संतों ने अपने आत्मज्ञान से कबीर साहिब के स्वयं मालिक होने को प्रमाणित किया है, चाहे वे किसी भी पंथ या संप्रदाय के हों—

धनि कबीर धनि वो सतगुरु, जिन परमतत लखाया।

कहैं रैदास सुणो हो स्वामी, पणै तुम्हारी आया।।

—रविदास जी

साहिब पुरुष कबीर ने, देह धरी न कोय।

शब्द स्वरूपी रूप है, घट घट बोले सोय।।

—गरीबदास जी

मेरे कंत कबीर हैं, वर और नहिं वरिहैं।

दादू तीन तिलाक हैं, चित्त और न धरिहैं।।

—दादूदयाल जी

त्रेतायुग में महान महर्षि अष्टावक्र ने भी गुरु कृपा को ही सर्वोच्च मानकर चेतना का शक्तिपुंज कहा है। अष्टावक्र गीता का आरंभ ही नम्र, शुद्ध चित्त, प्रतिभा सम्पन्न मुमुक्षु एवं गुरु में पूर्ण श्रद्धा रखने वाले राजा जनक के तीन प्रश्नों से होता है—

- 1) ज्ञान कैसे होता है?
- 2) मुक्ति कैसे होती है? तथा
- 3) वैराग्य कैसे होता है?

सम्पूर्ण अध्यात्म का सार ही इन तीन प्रश्नों में समाया है। अष्टावक्र ने तीन ही वाक्यों में तीनों का समाधान कर दिया।

- 1) आध्यात्मिक उपलब्धि हेतु समस्या उलझे मन की है अर्थात् किसी भी प्रकार के बंधन या आसक्ति रहित मन का होना ही वैराग्य है।
- 2) इसी आसक्ति त्याग से आत्मज्ञान प्राप्त होता है अर्थात् शरीर से आत्मा का पृथक् अनुभव मिलता है, और
- 3) आत्मज्ञान से ही मुक्ति होती है, जीवन-मरण के आवागमन का ज्ञान हो जाता है। यही सर्वोपरि स्थिति है।

महिर्षि अष्टावक्र के तीनों सम्मिलित वाक्य हैं। “आध्यात्मिक उपलब्धि में वैराग्य का होना अथवा आसक्ति-त्याग पहली शर्त है। उससे होता है—आत्मज्ञान और आत्मज्ञान से ही मुक्ति होती है।” अष्टावक्र से राजा जनक की आँखें समर्पण भाव से मिलती हैं। कुछ ऐसी कृपा बरसी कि जनक को आत्मज्ञान हो गया। राजा जनक में गुरु-कृपा प्राप्त करने की असीम पात्रता रही होगी, इसका अंदाजा लगता है। पुराण, उपनिषद् उसके सामने फीके नजर आते हैं। इसके विपरीत द्वारक युग में युद्ध क्षेत्र में खड़ा अर्जुन पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक, गृहस्थ-सन्यास, कर्तव्य के झूठे तर्क देता है। कर्म से भागना चाहता है। श्री कृष्ण उसे सभी प्रकार के पक्षों को समझाते हुए कर्तव्य बोध कराते हैं। अर्जुन हर समाधान पर नये-नये तर्क देता है। अर्जुन की ऐसी भ्रमित बुद्धि देखकर भगवान् कृष्ण ने उसे अपने विराट् स्वरूप का दर्शन कराया। इस प्रत्यक्ष प्रमाण के पश्चात् ही अर्जुन समर्पण के साथ उस दिव्य वाणी को ग्रहण करता है। शिष्य का शुद्ध एवं स्वच्छ हृदय से समर्पण ही गुरु कृपा से आत्मज्ञान प्राप्त करने की पहली शर्त है। राजा जनक जैसी पात्रता होने पर हर व्यक्ति में ऐसी घटना घट सकती है। इसमें धर्म, सम्प्रदाय, देश, जाति, काल की कोई बाधा नहीं है। सम्पूर्ण संत सद्गुरु की एक कृपा दृष्टि ही, कालपुरुष की माया में भ्रमित जीवात्मा के उद्धार हेतु पर्याप्त है। राजा जनक में बोध था,

विद्वान् थे, समझ थी, अष्टावक्र ने उन्हें कोई शास्त्र-विधान की विधियाँ नहीं बताईं। यम-नियम साधने को नहीं कहा। न ही आसन, मुद्रा, प्राणायाम, जप-तप के लिए कहा और न गायत्री पुरश्चरण करवाया। पूजा पाठ की शिक्षा भी नहीं दी। किसी भी प्रकार की क्रिया फल की आंकाक्षा लिए रहती है। इनके साथ अपेक्षाएँ जुड़ी रहती हैं। हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है और उसका निश्चित फल अवश्य मिलता है। इसी से चौरासी लाख योनियों की बार बार की यात्रा होती है। कालपुरुष के घेरे से फिर निकलना संभव नहीं होता। यही मुक्ति में बाधा बन जाती है। अष्टावक्र ने समाधि का अनुष्ठान भी बाधक बताया है। उनका सारा उपदेश जागरण का है। आत्मा मन के बंधन में है, अज्ञान में है। मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि, अहंकार में जीता है। इन्हीं से उसे सुख-दुख का अनुभव होता है। इन्हीं के कारण वह भोगों में रुचि लेता है। जीवन समस्या नहीं है। किंतु मनुष्य के गलत दृष्टिकोण ने ही उसे समस्या बना दिया है। जैसे मकड़ी ही स्वयं जाला बुनती है और स्वयं उसमें फँस जाती है, उसी प्रकार काल पुरुष के बंधन में आत्मा उलझी है।

महिर्षि वशिष्ठ का योग-वशिष्ठ अध्यात्म के गूढ़ सिद्धांतों का विवेचन करने वाला एक अनुपम तथा अद्वितीय ग्रंथ है। महिर्षि वशिष्ठ ने जो ज्ञान अपने सद्गुरु से प्राप्त किया था वह उन्होंने भी राम को दिया, जिससे वह जीवनमुक्त होकर रहे। महिर्षि वशिष्ठ और श्रीराम संवाद के ज्ञान का संग्रह महिर्षि वाल्मीकि ने जन-कल्याण के लिए किया। उन्होंने त्रेता युग में ज्ञानी जी महाराज से नाम प्राप्त किया था। 'योग-वशिष्ठ' में मोक्ष साधना विधि को भी स्पष्ट किया गया है। इसमें हठयोग जैसे कठिन क्रियाएं और मंत्रजाप, पूजा, प्रार्थना करने को नहीं कहा गया है। जो बातें इस ग्रंथ में हैं वो अन्य ग्रंथों में भी मिलेंगी, जो इसमें नहीं हैं, वे कहीं नहीं मिलेंगी। विद्वान् लोग उसे धर्म विज्ञान का कोष कहते हैं। इसमें कहीं भी धार्मिक कट्टरता संकीर्णता एवं असहिष्णुता नहीं है। अपने ही

मत का मानने का इसमें आग्रह नहीं है। यह सारा ग्रंथ प्रत्यक्ष प्रमाण पर आधारित है तथा समस्त मानव-जाति के लिए सत्य एवं कल्याणकारी है। यह लिखा-लिखी बातें नहीं, देखा-देखी बातों पर प्रत्यक्ष प्रमाण बताता है। आदि शंकराचार्य ने भी इसके सिद्धांतों का सहारा लिया है। गीता में भी इसके सूत्र पाए जाते हैं। इसमें अन्य ग्रंथों की युक्तियों का सहारा नहीं लिया गया है।

परमधाम की प्राप्ति के लिए भारतीय दर्शन में अनेक मार्ग बताए गए हैं। कोई किसी मार्ग से चले, सब वहीं पहुँचते हैं। महर्षि पतंजलि ने योग-मार्ग का प्रतिपादन किया जो मूलतः पुरुषार्थ का मार्ग है। इसमें अष्टांग योग सिद्ध होता है जिसका अंतिम फल निर्बीज समाधि है जहाँ पहुँचकर वासना के बीज सर्वथा नष्ट हो जाने पर वह संसार चक्र से सदा के लिए मुक्त हो जाता है। यह योग-मार्ग निरापद है किंतु इसमें हर स्तर पर विभूतियों-सिद्धियों का सामना करना पड़ता है, जिससे प्रभावित होकर साधक भटक सकता है। अथवा उनका दुरुपयोग करके पुनः नए कर्म इकट्ठे कर लेता है जिससे वह अनेक जन्मों में भी मुक्त नहीं हो सकता। जो यम-नियमों का पूर्णतया पालन किए बिना इस योग-मार्ग में उतर जाता है, उसके भटकने के अवसर बढ़ जाते हैं। हठ योग, तंत्र आदि की क्रियाएँ अधिक कष्ट साध्य हैं तथा बिना गुरु के सतत् सामीप्य के वे सम्पन्न नहीं की जा सकतीं। इसलिए सर्वसाधारण के लिए वे उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती।

इसके विपरीत योग-वशिष्ट में वर्णित ज्ञान-मार्ग एक ऐसा सरल मार्ग है जिसमें न अष्टांग योग साधना है, न हठ-योग की क्रियाएँ आवश्यक हैं। न तो कुण्डलिनी जाग्रत करना है, न तांत्रिक क्रियाएँ करनी हैं। यहाँ तक कि मंत्र, जप, पूजा, पाठ, यज्ञ, देवोपासना, कठिन तपस्या-भक्ति आदि कुछ भी आवश्यक नहीं है। इनसे ज्ञान प्राप्त नहीं होता और बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती। महर्षि वशिष्ट का उपदेश है कि

“आत्मज्ञान केवल गुरु कृपा से होता है, वह न तप से सिद्ध होता है, न अध्ययन से, न पुस्तकों से। आत्मज्ञान हुए बिना स्थाई सुख नहीं मिलता तथा स्थाई सुख के बिना शांति नहीं मिलती। अज्ञानी (जिन्हें आत्मज्ञान नहीं हुआ है) अपने कर्मफल का भोग करने के लिए संसार में आते हैं तथा भोग समाप्ति होने पर ही उनकी ज्ञान प्राप्ति की इच्छा जाग्रत होती है।”

इसीलिए तो युग-युगान्तर से मनुष्यों को सत्यकबीर बार बार अवतरण कर जगाते रहे हैं। पुनः वर्तमान के मध्यकाल में आकर यही चेताया—

हम वासी उस देश के, जहाँ पार ब्रह्म का खेल।

दीपक जरे अगम का, बिन बाती बिन तेल॥

अर्थात् पारब्रह्म का खेल, उस अनादि सत्य का ज्ञान है जो बच्चों के समान पुस्तकों के पढ़ लेने, रट लेने या मान भर लेने से कोई ब्रह्मज्ञानी नहीं होता। परमात्मा तो जानने का, अनुभूति करने का, उस महासागर का स्वाद लेने का विषय है। उसको जानने के लिए तो किसी सद्गुरु की शरण में ही जाना होगा, जिसने उसे समझा हो, आत्मसात किया हो, जो उससे स्वयं मिला हो। मार्गदर्शक नहीं, चेतना का सागर है ‘सद्गुरु’।

बैठा पंडित पढ़े पुरान, बिनु देखे का करत बखान।

कहैं कबीर यह पद को जान, सोई संत सदा परमान॥

परमात्मा को मान भर लेना काफी नहीं है। उसे जानना ही परम आवश्यक है। मान लेने भर से कुछ प्राप्त नहीं होता, न ही इससे कोई जीवन परिवर्तन या रूपान्तरण होता है।

सद्गुरु संतों और साहिब कबीर को पंथ और मत मानने वाले वेद-पुराण भक्तों को शायद भगवान योगेश्वरों महिर्षियों में ही श्रद्धा आस्था नहीं है। यदि होती तो योगेश्वर शुकदेव की या ब्रह्मा पुत्र नारद मुनि की गुरु विहीन शास्त्रोक्त कथाओं से ही वे सीख लेते। साहिब बता

रहे हैं—

गर्भ योगेश्वर गुरु बिना, लागा हरि की सेव।

कहैं कबीर वैकुण्ठ से, फेर दिया शुकदेव॥

शुकदेव जो कि माँ के गर्भ से ही ज्ञान प्राप्त होने के कारण संसार के दुखों को जानकर पेट से बाहर नहीं आ रहे थे। ऐसे महान् योगेश्वर को भी गुरु के बिना भक्ति करने से वैकुण्ठ जाने पर भगवान् विष्णु ने यह कहकर वापिस कर दिया कि तेरे लिए यहाँ कोई जगह नहीं है, तूने गुरु नहीं किया है। साढ़े सात साल के होकर शुकदेव गर्भ से बाहर आए थे। व्यासदेव की पत्नी का शरीर अटपटा और जीवन दुःसह हो गया था। उसने देवताओं से प्रार्थना की। तब सब देवताओं ने मिलकर शुकदेव से कहा कि बाहर आ, नहीं तो तेरी माँ मर जाएगी और तुझे पाप लगेगा। लेकिन शुकदेव संसार के दुखों को समझकर बोला कि यह दुनिया झूठी है, मैं नहीं आऊँगा बाहर, मैं यहीं बैठकर प्रभु का भजन करूँगा। बहुत विनती-मनुहार करने पर शुकदेव बाहर आए थे। ऐसा ज्ञानी मनुष्य जब गुरु के बिना भक्ति करता रहा था तो उसका यह हाल हो गया कि वैकुण्ठ में स्थान नहीं मिला। फिर साधारण मनुष्य गुरु के बिना कहाँ जाएंगे।

इन्हीं शास्त्र-ज्ञानियों ने आत्मिक जगत के महान महिर्षि अष्टावक्र के जन्म व आत्मज्ञान से भी कोई सबक नहीं लिया है।

अष्टावक्र के बारे में तीन कथाओं से पता चलता है कि वे ज्ञानियों में शिरोमणि थे। इनको भी माँ के गर्भ में ही ध्यान भक्ति से ज्ञान प्राप्त हो गया था। इनके जीवन के बारे में कथा है कि वह आठ-अंगों से टेढ़े-मेढ़े व कुरूप थे। टेढ़े-मेढ़े होने का कारण था कि जब वे गर्भ में थे उस समय एक दिन इनके पिता वेद-पाठ कर रहे थे, तो इन्होंने गर्भ में ही पिता को टोंक दिया— “रुको, यह सब बकवास है। शास्त्रों में ज्ञान कहाँ। ज्ञान तो स्वयं के भीतर है। ‘सत्य’ शास्त्रों में नहीं, स्वयं में है। शास्त्र शब्दों का संग्रह मात्र है।” यह सुनते ही उनके पिता का अहंकार

जाग उठा। वे आत्मज्ञानी तो थे नहीं, लिखी-लिखी बातों के ही ज्ञाता थे। शास्त्रों के ज्ञाता होने से उन्हें जानकारी का अहंकार था। इसी अहंकार के कारण वे आत्मज्ञान से वंचित भी थे। आत्मज्ञान के लिए नम्रता पहली शर्त है, अहंकारी शिखर बन जाता है, जिससे ज्ञान-वृष्टि होने पर भी वह सूखा रह जाता है, जबकि छोटे-मोटे गड्ढे भर जाते हैं। अष्टावक्र के पिता के अहंकार पर चोट पड़ते ही वे तिलमिला गए कि उन्हीं का पुत्र उन्हें उपदेस दे रहा है, जो अभी पैदा भी नहीं हुआ है। उसी समय उन्होंने अष्टावक्र को शाप दे दिया कि तू पैदा होगा तो आठ अंगों से टेढ़ा-मेढ़ा होगा। ऐसा ही हुआ भी। इसलिए उसका नाम पड़ा 'अष्टावक्र'। यह गर्भ में पूरा वक्तव्य देने की बात बुद्धि की पकड़ में नहीं आएगी, किंतु इसे आध्यात्मिक दृष्टि से समझा जा सकता है। बीज में ही पूरा वृक्ष विद्यमान है—तना, शाखाएँ, पत्ते, फूल, फल सभी किंतु दिखाई नहीं देते। अप्रकट हैं, असंभूत हैं, अभी विकसित नहीं, अदृश्य हैं किंतु पूरा वृक्ष विद्यमान है। बीज को तोड़कर वैज्ञानिक भी उस वृक्ष को दिखा नहीं सकते। उक्त कथा इसी तथ्य को प्रकट करती है कि अष्टावक्र का ज्ञान पुस्तकों, व समाज से अर्जित नहीं था बल्कि पूरा का पूरा स्वयं लेकर ही पैदा हुआ था।

गौतम बुद्ध के साथ घटी सात घटनाओं में एक बताता हूँ। बुद्ध जब सत्य की खोज करते-करते बहुत गुरुओं के पास गए। 'आलार-कलाम' नाम के गुरु के पास वर्षों रहे। जो उसने कहा, किया। गुरु ने ऐसी बातें कहीं जो कोई करने को राजी न हो, लेकिन बुद्ध ने वे भी कीं। उसने कहा कि रोज भोजन कम करते जाओ, कम करते जाओ। जब एक चावल का दाना भोजन रह जाए, फिर दो दाना, फिर तीन दाना एक-एक कर रोज एक-एक दिन बढ़ाना। वह भी बुद्ध ने किया। वर्षों भूखे मरे। शरीर सूख कर हड्डी हो गया। इतने निर्बल हो गए कि नदी में स्नान करने उतरे थे, जो कि सूखी सी है, पर उसकी धार में बहने लगे। चढ़

न सके घाट पर। किसी झाड़ की जड़ पकड़े लटके रहे, हड्डी-हड्डी रह गए थे। सारा माँस विलीन हो गया था। जो भी जिसने कहा, पूरा किया।

एक दिन आलार कलाम ने कहा—बस, तू कहीं और जा। तू मुझे छोड़ दे। मैं जो दे सकता था, दे दिया। जो मेरे पास था, तुझे बता दिया। इससे ज्यादा मेरे पास नहीं है। सीखने को अब और बचा नहीं। जितना मेरा बोध था, उतना मैंने तुझे दिया। अब तू जा। तू कहीं और खोज, तू कहीं और गुरु खोज। और अगर किसी दिन तुझे सत्य मिल जाए, तो मुझे याद रखना। मुझे आकर खबर देना। मुझे अभी मिला नहीं। मैं खुद ही खोज रहा हूँ। जब शिष्य इतना समग्र होता है तो मिथ्या गुरु का भी बोध होगा ही। शिष्य की समग्रता उसको जगाएगी ही। अगर मिथ्या गुरु के पास रहा तो मिथ्या गुरु को भी जगाएगी। समग्रता वेद-पुराण-शास्त्रों से नहीं आएगी। आत्मज्ञान प्राप्त करने का यही बोध शुकदेव, अष्टावक्र और बुद्ध जैसे महर्षि हमें देते हैं।

गुरु विहीन मनुष्य ही नहीं ऋषि, योगी, अवतार भी मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकते। नारद जैसे परम ज्ञानी को विष्णु लोक वैकुण्ठ में गुरु विहीन होने से सम्मान नहीं मिल सका। एक बार नारद जी कुछ देर विष्णु भगवान के पास बैठकर चले गए, लेकिन किसी काम से पुनः वापिस आकर लौट आए। जब वापस आए तो यह देखकर अत्यंत दुखी हुए कि जिस जगह पर वे बैठे हुए थे, उस जगह को विष्णुजी और लक्ष्मीजी साफ कर रहे थे। नारदजी को बुरा लगा, विनती की, हे प्रभु, क्या मैं इतना गंदा हूँ कि जहाँ बैठा था वहाँ सफाई कर रहे हैं। विष्णुजी ने गंभीर होकर कहा—हाँ नारद, यह सच है, तू बड़ा गंदा है, क्योंकि तूने गुरु नहीं किया है। नारदजी चौंक गए। प्रभु, मैं इतना ब्रह्मज्ञानी, मुझे क्या जरूरत है गुरु की। विष्णुजी ने कहा, नहीं—गुरु तो तुम्हें करना ही पड़ेगा। नारदजी ने पूछा—हे प्रभु, फिर मैं किसे गुरु मानूँ? विष्णु जी ने बताया कि

दक्षिण दिशा में सुबह-सुबह निकल पड़ना, जो पहला मनुष्य मिल जाए, उसे ही अपना गुरु मान लेना। नारद जी वहाँ से चल दिए। सुबह जब नारद जी दक्षिण दिशा में जा रहे थे तो सामने उन्हें एक मछुआरा आता दिखाई दिया। मछुआरे ने रात को जाल लगाया था, सुबह देखने जा रहा था कि कितनी मछलियाँ पकड़ में आई हैं। नारदजी घबरा गए.....अब तो सत्यानाश हो गया। यह धीमर मिल गया। क्या अब इसी को गुरु बनाना पड़ेगा। पर विष्णु जी की आज्ञा थी, क्या करते। उसके पास आ गए, कहने लगे कि मुझे दीक्षा दीजिए, मैं आपको गुरु धारण करने आया हूँ। मछुआरा कहने लगा कि मैं तो नीची जाति का हूँ, धीमर हूँ, आप ऊँची-जाति के लग रहे हैं, जनेऊ पहन रखा है, कौन हैं आप? नारद जी ने बताया—मैं ब्रह्माजी का बेटा नारद हूँ। मछुआरा बेचारा काँप गया। ओ, नारद महाराज आप। यह आप क्या कर रहे हैं। भला मैं आपको क्या दीक्षा दूँगा। नारद जी कहने लगे, नहीं, मुझे आप ही को गुरु धारण करना है, विष्णु जी की आज्ञा है। पहले तो मछुआरा माना नहीं, पर जब नारद जी ने बहुत समझा कर कहा कि विष्णु महाराज की आज्ञानुसार आप ही को गुरु करना है, तब कहीं जाकर धीमर ने डरते-डरते बैठकर नारद जी को दीक्षा दी।

नारदजी गुरु को प्रणाम कर चल पड़े और वैकुण्ठ में विष्णुजी के पास पहुँचे। विष्णु जी ने पूछा—कहो नारद, गुरु बना आए। नारदजी कहने लगे—गुरु तो बनाया पर.....

‘चुप रहो नारद’ कहते हुए विष्णु जी ने नारद को वहीं रोक लिया। गुरु करके ‘पर’ लगा रहा है। ‘पर’ यानी कमी, पर यानी निन्दा। जा चौरासी भोग। ज्ञानी होकर मेरे आगे गुरु की निन्दा.....जा चौरासी भोग।

नारदजी डर गए.....अब चौरासी लाख योनियों में जाना पड़ेगा, गधा, चूहा, बिल्ली, कुत्ता आदि गंदी गंदी योनियों में जाना

पड़ेगा.....अब क्या करूँ। फिर ध्यान आया कि अंत में गुरुदेव ही रक्षा करते हैं.....चल पड़े गुरु के पास। जाकर सारी बात गुरुजी को साफ साफ बता दी। मछुआरे ने नारदजी को बचने का उपाय समझा दिया। तब नारद पुनः विष्णु जी के पास वैकुण्ठ में आए, पूछने लगे कि मुझे किन-किन योनियों में जाना होगा? विष्णु जी ने कहा, चौरासी लाख योनि अर्थात् सभी योनियों में जाना पड़ेगा। नारद जी कहने लगे कि जिन-जिन योनियों में मुझे जाना है, वो कृपा करके किसी जगह लिख दें। विष्णु जी ने एक स्थान पर सब योनियों के नाम लिख दिए। जिस स्थान पर सब योनियों के नाम विष्णु जी ने लिखे थे, उसकी एक तरफ नारद जी लेट गए और लौटते हुए दूसरी तरफ से पार हो गए। उठकर कहने लगे—यह लो प्रभु, मैंने चौरासी भोग ली, अब मुझे क्षमा करें। विष्णु जी कहने लगे कि यह क्या बात हुई। नारद जी ने कहा कि मैं तो चौरासी भोग चुका। विष्णु जी सोच में पड़ गए.....यह कैसे हुआ। फिर जान गए कि गुरु ने नारद को बचाया है। तब विष्णु जी ने नारद को गले से लगा लिया और गुरु की महिमा बताते हुए समझाया कि गुरु ही इंसान का सच्चा साथी है। गुरु में बैठकर ही परमात्मा अपना काम करता है।

प्रत्येक मनुष्य का पहले कर्तव्य है कि वह अपने सच्चे स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करने अर्थात् अपने भीतर आत्मा का दर्शन करे। उस आत्मा का जो अभिन्न रूप से प्रत्येक प्राणी में निवास करती है। यह समझे कि संसार का प्रत्येक प्राणी परमात्मा का ही रूप है। आत्मदर्शन होने पर सब मनुष्यों में एक ही आत्मा का दर्शन होने लगेगा तथा भेद-बुद्धि मिट जाएगी। समाज में सबके जीवन को समान प्रतिष्ठा, गरिमा और श्रेणी प्राप्त हो जाएगी। कठिनाई यह है कि प्रत्येक मनुष्य अपने अतीत की अवस्था, व्यवस्था तथा विकास और विनाश की कहानी सुनने और जानने में अधिक रुचि लेता है। इसके साथ ही सबके मन में भविष्य को

जानने की उत्कंठा बनी रहती है। सच्चाई यह है कि हमारा अतीत और भविष्य हमारे सामने प्रत्यक्ष रूप से नहीं आ सकता और हम उसके हूबहू रूप में नहीं जान सकते। हम केवल वर्तमान को जान सकते हैं। केवल वर्तमान ही हमारे सामने मुट्ठी में होता है। बीता हुआ कल भी अपने समय में आज ही था तथा भविष्य अर्थात् आने वाला कल भी जब आएगा तब वह आज ही होगा। आज नित्य उपस्थित है। जो नित्य उपस्थित है वही शुद्ध अस्तित्व है। उसका न कोई अतीत होता है, न भविष्य। हम वर्तमान अर्थात् नित्य उपस्थित अस्तित्व की वास्वविकता को समझने की चेष्टा करें तथा उसे समझ लें। धर्म का मूल तत्व यह ज्ञान है कि जीवन दो नहीं है, एक ही है। जो व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने समान नहीं समझता वह अपने आपको नहीं जानता। 'मैं कौन हूँ, यह जान लेने पर हमारी दृष्टि में कोई भी दूसरा पराया अथवा अपना नहीं रह जाता, सब 'मैं' ही हो जाता है। भेद-भाव चाहे वर्ण के आधार पर हो, जाति के आधार पर या धर्म के नाम पर, भेद हर स्थिति में अज्ञान का सूचक है। ज्ञानी मनुष्य भेदभाव से मुक्त होता है। वह किसी का अपमान या अहित नहीं कर सकता।

अहंकारी का वैभव पलभर में ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि महाप्रकृति को अहंकार सहन नहीं है। योगेश्वर श्रीकृष्ण के नेतृत्व में पाण्डवों ने महाभारत में विजयश्री पाई। युद्ध के उपरांत अर्जुन के मन में विजय प्राप्ति को लेकर अहंकार का उदय हुआ। वह सोचने लगा कि मैं वास्तव में अजेय हूँ, क्योंकि मैंने एक से एक बड़े ख्यातिमान वीरों पर विजय पाई है। अर्जुन के मनोभावों को देखकर श्रीकृष्ण ने उससे कहा, "मुझे यहाँ कुछ समय तक आवश्यक कार्य है, इसलिए इन गोपिकाओं को तुम द्वारकापुरी पहुँचा आओ।" होनी की बात कि वनों के रास्ते में भीलों के एक समुदाय ने अर्जुन को घेर लिया और गोपियों के आभूषणों को लूट लिया। अर्जुन मूक दर्शन बने रहे। उक्त घटना लक्ष्य करके यह

लोकोक्ति प्रचलित हो गई, “अर्जुन कछु न कर सके, प्रभु इच्छा बलवान। भीलन लूटी गोपियाँ, वे ही अर्जुन वही बाण।”

विचारक ‘रस्किन’ का यह कथन आत्मसात करने योग्य है “यह बात मेरे दिमाग में पूरी तरह से बैठ गई है कि प्रायः सभी गलतियों की जड़ में अहंकार होता है। अहंकार जब भी किसी काम में हाथ लगा देता है, तो वो गलत हो जाता है।

धर्म के अगुआओं, समाज का नेतृत्व करने वालों को अपना अहंकार छोड़कर, धर्म या वर्ण का अहंकार छोड़कर अपना उत्तरदायित्व समझना होगा। उन्हें श्री राम, श्रीकृष्ण और शिव के जीवन से यही धर्म ग्रहण कर मनुष्यों को सिखाना चाहिए। यही अर्जित ज्ञान का कर्तव्य है। विचारक विद्वान ‘एलानर पावेल’ ने कहा है, “हम जो हैं, वह हमें ईश्वर की देन है, और हम जो बनते हैं, वह परमेश्वर हमारे को बनाते है।” इसका अभिप्राय यह है कि हम ऐसा भाव अथवा उद्देश्य लेकर कार्य करें, जिससे हमारी प्रशंसा सर्वत्र हो। यहाँ तक कि ईश्वर भी हमें पुरस्कृत करें। श्री कृष्ण ने गीता में अर्जुन को कर्तव्यरूप से कर्म करने का परामर्श ही तो दिया है। ऐसे भाव में कर्तव्य परायण व्यक्ति छोटे से छोटा कार्य करने में भी कभी संकोच नहीं करता। इस संदर्भ में एक प्रसंग उस व्यक्ति का है, जिसने देश का राष्ट्रपति बनने के बाद एक मामूली काम को भी पूर्ण उत्तरदायित्व से निभाया। घटना उन दिनों की है, जब रोम के सम्राट किसानों में से चुने जाते थे। जब राष्ट्रपति ‘टायलर’ का राष्ट्रपतित्व काल समाप्त हो गया, तब उसके कुछ समय बाद ही उनके राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वियों ने उन्हें नीचा दिखाने के उद्देश्य से उनको उनके गाँव की सड़कों की देखभाल का मामूली काम सौंप दिया। पूर्व राष्ट्रपति ‘टायलर’ ने उस कार्य को पूर्ण निष्ठा से किया, न कोई नाराजगी दिखाई और न कोई शर्म। वहाँ के नौजवानों ने उनसे प्रार्थना की कि वे इस कार्य का परित्याग कर दें। लेकिन इसके उत्तर में टायलर ने कहा, “बंधुओ, मैं

अपने कर्तव्य से विमुख नहीं होता।”

इसी संदर्भ में हमें भारत के ही सत्यव्रत धारी सम्राट हरीशचंद्र की जीवन कथा स्मरण रखनी चाहिए, जिन्होंने सत्य की रक्षा में अपना कर्तव्य पालन करते हुए चाण्डाल के पास श्मशान में सेवा कार्य किया। गाँधीजी अपने आश्रम में स्वयं सफाई करते और पत्नी कस्तूरबा गाँधी को भी मैला साफ करने हेतु विवश कर दिया था।

सभी शास्त्र त्याग और जप-तप की शिक्षा देते हैं। क्या ये शिक्षाएँ उन मजदूर निर्धन मनुष्यों के लिए हैं, जो पढ़ना-लिखना ही नहीं जानते। जिन्हें शास्त्र सुनने की योग्यता तो क्या, कोई अवसर ही जीवन को ढोने के अतिरिक्त नहीं है। संत रैदास तो अपनी जीविका अर्जन के काम को ही भगवान की पूजा मानकर पूरी लग्न और ईमानदारी से करते थे। किसी साधु को सोमवती अमावस्या के दिन साथ साथ गंगा स्नान के लिए आश्वासन दिया था। अमावस्या के स्नान के निकट आने पर साधु रैदास के पास पहुँचा। गंगा स्नान की बात याद दिलाई। रैदास जी कुछ काम हाथ में ले चुके थे, समय पर देना था। अपनी असमर्थता व्यक्ति करते हुए उन्होंने कहा, महात्मन् आप मुझे क्षमा करें, मेरे भाग्य में गंगा स्नान नहीं है। यह एक पैसा लेते जाओ, जिसे गंगा-माँ को चढ़ा देना। साधु गंगा स्नान के लिए समय पर पहुँचे। स्नान करने के बाद उन्हें रैदास की बात स्मरण हो आई। मन ही मन गंगा से बोले, माँ, यह पैसा रैदास ने भेजा है, स्वीकार करो। इतना कहना था कि गंगा की अथाह जलराशि से दो हाथ उभरे और पैसे को हथेली में ले लिया। साधु यह दृश्य देखकर विस्मृत रह गए और सोचने लगे, मैंने इतना जप-तप किया, गंगा में स्नान किया, तो भी गंगा माँ की कृपा प्राप्त नहीं हो सकी जबकि गंगा का बिना स्नान किए ही रैदास को अनुकंपा प्राप्त हो गई। वे रैदास के पास पहुँचे और पूरी बात बताई। रैदास जी बोले, महात्मन् यह सब कर्तव्य धर्म के निर्वाह का प्रतिफल है। इसमें मुझ अकिंचन के तप, पुरुषार्थ की कोई भूमिका

नहीं है।

ऋषि-महिर्षि, योगी, तपस्वी, सत्युग से वर्तमान युग तक मानव को मानव होने और युग पुरुषों के जीवन आचरण को ही ग्रहण करने की शिक्षा दे रहे हैं। किसी भी अवतार, भगवान, महिर्षि ने एवं उनके सद्गुरु ने वेद-पुराण, शास्त्र या किसी धर्म पुस्तक को धर्म या धर्म का आधार नहीं माना है। ये सभी सत्य जीवन, मुक्ति और मोक्ष के पथ प्रदर्शक किसी वर्ण, जाति और भौगोलिक क्षेत्र तक सीमित न होकर संपूर्ण जगत के मानव धर्म के पोषक हैं। धर्म को किसी एक जाति-समूह और भू-भाग के किसी क्षेत्र विशेष के लिए परिभाषित करने वाले ग्रंथ तथा उनके शास्त्राकार 'धर्म' शब्द से ही अज्ञानी हैं। मनुष्य मात्र के लिए 'धर्म' परमपिता परमेश्वर के रूप में जगत का कल्याण का सूचक है। इस सत्य को केवल कोई सद्गुरु ही मनुष्यों को बताने में सक्षम है। जिस प्रकार त्रेता में श्री राम को महिर्षि वशिष्ठ ने बताया, विदेही जनक को महिर्षि अष्टावक्र ने बताया। द्वापर में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया और स्वयं श्री कृष्ण ऋषि दुर्वासा की शरण में गए। वर्तमान युग के घोर अधर्म काल में अवतरित सत्पुरुष कबीर साहिब ने सभी को सत्य का दर्शन कराया और मनुष्य मात्र सहित साधुओं के मार्गदर्शन बनकर अपनी साखी में कहा—

राम कृष्ण से को बड़ा, तिन्हूँ भी तो गुरु कीन्ह।
तीन लोक के वे धनी, गुरु आगे आधीन।
हरि सेवा युग चार हैं, गुरु सेवा पल एक।
तासु पटतर न तुले, संतन किया विवेक॥



स्वाँसा खाली जात है तीन लोक का मोल

स्वाँस और सुरति के मध्य में ही परमात्म है। कबीर साहिब ने यही चेताया कि स्वाँस-स्वाँस में प्रभु का सुमिरन कर लो, स्वाँसों को व्यर्थ न गवाँओ। इन स्वाँसों का कोई भरोसा नहीं है कब अंतिम स्वाँस हो जाए। स्वाँस का आना-जाना किस पल से हो कि नहीं हो, कब रुक जाए कुछ पता नहीं है। यह जीवन साँसों पर निर्भर है। एक-एक साँस अनमोल है, तीन लोकों का मोल हर साँस का है। इन स्वाँसों को साध कर आत्मा को पाया जा सकता है। मन रूपी निरञ्जन स्वाँसा को सुरत में समाने से रोकता है, यह खाली जा रही है।

स्वाँस स्वाँस प्रभु सुमिरले, वृथा स्वाँस न खोय।

ना जाने किस स्वाँस में आवन होय न होय॥

कहता हूँ कही जात हूँ, कहूँ बजाय ढोल।

स्वाँसा खाली जात है तीन लोक का मोल॥

फिर कह रहे हैं – स्वाँसों को सुरत में लगाकर ही मन रूपी पवन को घेरकर उलटा चलाया जा सकता है। इसप्रकार स्वाँस पवन को शीश से सवा हाथ ऊपर अधर में ले जाकर ध्यान से जन्म-मरण के भ्रम का ज्ञान होगा। इसी क्रिया से देह रूप पिण्ड में ब्रह्माण्ड का खेल दिखेगा और जगत का भ्रम टूटेगा। शीश और अधर के बीच सुरत में स्वाँसा से ध्यान करने पर देह में भी आकाश के समान ही लगेगा। इसी से सुषुम्ना नाड़ी रूपी डोर पलटकर अधर में ले जावेगी। यही पवन को पलटकर शून्य में घर करना है। साहिब ने चेताया – कि स्वाँसा-पवन रूप मन को स्वयं की साधना चेष्टा से अधर-सुरत में रोकना सम्भव नहीं है। पूरे गुरु अर्थात्

सद्गुरु के नाम की कृपा से ही स्वाँसों को सुरति के साथ जोड़ा जा सकता है।

खेल ब्रह्माण्ड का पिण्ड में देखिया, जगत की भरमना दूर भागी।
बाहरा भीतरा एक आकाशवत, सुषुम्ना डोर तहाँ पलट लागी॥
पवन को पलटकर शून्य में घर किया, धर में अधर भरपूर देखा॥
कहे कबीर गुरु पूरे की मेहर से, त्रिकुटी मध्य दीदार देखा॥

बिना सद्गुरु के कुछ भी नहीं हो सकेगा। हृदय कभी गुरु की ताकत के बिना प्रकाशित नहीं हो सकता। गोस्वामी तुलसीदास ने भी रामायण में गुरु की इसी महिमा को कहा

गुरु बिन भव निधि तरई न कोई।

जो विरंचि शंकर सम होई॥

ब्रह्म राम ते नाम बड़, वरदायक वरदानि।

रामचरित सत्कोटि में, लिया महेश जिय जान॥

आमजन ही नहीं धर्म और धर्म ग्रन्थों में रुचि रखने वाले सत्संगी भक्तों ने भी यह समझ लिया कि किसी भी पंथ-धर्म के ज्ञाता को गुरु मान लो। किसी भी परलोक वासी सिद्धपुरुष को गुरु रूप में पूजने लगे और मुक्ति दाता मान लिया। संतों की वाणी, गीता, रामायण आदि शास्त्रों में वर्णित गुरु महिमा को समझा ही नहीं गया। भक्ति क्षेत्र में भी पीठों और गद्दियों पर विराजित और शास्त्र-प्रवचन कर्ताओं ने भोले-भाले जनमानस को छला है। गुरु बनने वाले और गुरु-दीक्षा लेने वाले दोनों ने ही पूर्ण या सद्गुरु की महत्ता या गुण तत्वों को धर्म से हटा दिया। शास्त्रों के अवतार चरित्रों का तर्कपूर्ण, संगीतमय बखान और मंचों पर लीलाओं को प्रदर्शित करने वाले गुरुओं को संत व सद्गुरु माना जाने लगा है। कबीर साहिब से पहले किसी भी वेद शास्त्र व ग्रंथ आदि में सन्त और सतगुरु शब्द ही नहीं था। वेद-गीता-रामायण में वर्णित सद्गुरु या पूर्ण गुरु जो परमपुरुष या परमतत्व में समाया हो, को विसरा दिया गया है। मन-आत्मा-प्राण-

स्वाँसा-देह-ब्रह्माण्ड और मोक्ष के आध्यात्म ज्ञान के बजाय मनुष्यों को बाहरी आडम्बरों की पूजा भक्तियों के ज्ञान में उलझा दिया गया है। निज आत्म स्वरूप के ज्ञान से वंचित कर आम गुरुओं ने मनुष्यों को शरीर के जीवन-मरण-भोग-कर्म और कर्मफलों के धर्म तक सीमित कर दिया है।

आज कोई भी राम-भक्त, गोस्वामी तुलसीदास के इस तत्व ज्ञान का सत्संगी नहीं है कि ब्रह्मा और शिव-शंकर के समान होने पर भी पूर्ण गुरु के बिना कोई भव सागर के पार नहीं होगा। कोई भी कबीर साहिब के इस सद्गुरु ज्ञान का सत्संगी नहीं बनना चाहता है कि पूर्ण गुरु की दया-कृपा के बिना आत्म ज्ञान नहीं होगा। एक पूर्ण गुरु की शरण में स्वाँसा (निरत) और सुरति (आत्मा) के अन्तर-जोड़ को जाने बिना परमात्मा को नहीं जानेगा। साहिब ने कहा -

स्वाँस सुरति के मध्य में कबहुँ न न्यारा होय।

ऐसा साक्षी रूप है, सुरति निरति से जोय।।

स्वाँस और सुरत को जोड़ने से ही परमात्म दर्शन होगा। सद्गुरु कोई धातु की मूर्ति नहीं वह तो साकार-निराकार से परे स्वाँस-सुरत के मध्य साक्षात् है। सद्गुरु के नेत्रों में परमात्म उर्जा है, उनके नेत्रों के ध्यान से ही भक्त की त्रिकुटी में आत्मा जाग्रत होगी। इसलिए साँस और सुरति के मध्य सद्गुरु नयनों को लाने का योग करना ही एकाग्र भक्ति का मंत्र है। इसी एकाग्र ध्यान से मन की चंचलता है या मन की तरंगों को वश में करना साध्य है। अन्य किसी भी प्रकार की भक्ति या ध्यान से मन कभी भी वश में नहीं आएगा। आत्म-प्रकाश का सृजन किसी काल्पनिक मूर्ति से सम्भव नहीं है। सद्गुरु जिस **गुप्त मूल नाम** को दीक्षा द्वारा देकर जाग्रत करता है, वही सद्गुरु के ध्यान से आत्मरूप में मिलता है। यज्ञ-व्रत-तप-तीर्थ-सन्यास और योग भक्ति से सद्गुरु भक्ति सरल है, सत्य है। प्रत्येक गृहस्थ भी सद्गुरु शब्द और नियमों का पालन करके मोक्ष पाने का अधिकारी हो जाता है। इसके विपरीत कठिन तपस्या के लिए

सन्यासी बनकर गृह त्याग कर भी कोई मन के बँधनों से मुक्त नहीं होता। साहिब ने यही चेताया -

कितने तपसी तप कर डारे, काया डारी गारा।

गृह छोड़ भये सन्यासी, तऊ न पावत पारा।।

अपने अन्दर में झाँकने, अपने हृदय, अपने भीतर ही परमात्मा को पाने की बात तो सब करते हैं पर उपाय कोई नहीं बताता। इसी कारण मनुष्य जहाँ-वहाँ भटक कर धर्म मान रहे हैं। आत्मज्ञान को यथार्थ में पाने का सत्संगी बनने और एक पूर्ण गुरु की तलाश करने की शिक्षा ही मनुष्यों को नहीं मिलती है। कबीर साहिब ने बहुत सरल तरीके से सद्गुरु और शब्द नाम के स्वाँस-स्वाँस में सुमिरन से अपने अन्दर ही परमात्मा को पाने का उपाय दिया। याद रहे शरीर के किसी भाग में ध्यान रोक कर अन्दर जाने वाले अन्दर को सन्तों ने अन्दर ही नहीं बोला। स्वाँसों की इसी साधना को वेदों से आगे का भेद कहा है। स्वाँस और सुरति के मध्य रहकर सद्गुरु ही परमात्मा को खड़ा कर स्वयं हट जाता है।

यही कहा -

बिन सत्गुरु बाँचे नहीं, कोई कोटिन करे उपाय।

स्वाँस स्वाँस जो सुमिरता, इक दिन मिलिया आय।।

सद्गुरु सत्य ही सूक्ष्म वेद है। सुषुम्ना नाड़ी को भी सूक्ष्म वेद कहा है।

सूक्ष्म वेद भेद जो पावे, अजर अमर होय लोक सिधावे।।

सद्गुरु महत्ता की मान्यता है कि जितने वेद हैं, निरञ्जन तक ले जाते हैं, यही नेति-नेति का भावार्थ है.... आगे विराम लग जाता है। साहिब ने कहा -

वेद हमारा भेद है, हम वेदन के माहिं।

जौन वेद में हौं बसौं, वेदहुँ जानत नाहिं।।

ताके आगे भेद हमारा, जानेगा कोई जानन हारा।

कहै कबीर जानेगा सोई, तिस पर कृपा सत्गुरु की होई ॥

प्रत्येक देह में रहने वाली आत्मा ही परमपुरुष का रूप है। सत्यनाम के सुमिरन और सद्गुरु कृपा से ही आत्म स्वरूप मिलेगा।

सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुःख जाये।

कहे कबीर सुमिरन किये, साईं माहिं समाये ॥

ऐसी आत्मा जो पंच तत्व रहित है, अभौतिक है, अनश्वर है, चैतन्य है, दोष रहित है कैसे शरीरों में बँधी, कौन-ने बाँधा है? यह पक्का है कि यह संसार काल का देश है। आत्मा यहाँ बड़े क्रूर बँधनों में हैं। इसीलिए आत्मा अपने गुण-स्वभाव के विपरीत होने से असंतुष्ट है। जो कुछ दुनिया में हो रहा है वह सब अनित्य है। सभी भूल-भुलैया में हैं। इतना बुद्धिजीवी मनुष्य इस पहेली को नहीं समझ पा रहा है। बँधनों को भलीभाँति नहीं देख-समझ पा रहा है कोई भी।

बहु बँधन से बाँधिया एक विचारा जीव।

जीव विचारा क्या करे जो न छुड़ावे पीव ॥

जब तक बँधनों से छुड़ाने वाला नहीं मिलेगा, आत्मा विवश है।

कहिंता नर बहुते मिले गहिंता मिला न कोय।

धनवंता तेहि जानिये जेहि नाम गहिंता होय ॥

देह में मन ने आत्मा को जकड़ा है। साहिब ने कहा - हे निरञ्जन जिसको मैं नाम दूँगा तेरी सब ताकत धरी रह जाएगी। नाम के बाद क्रिया से शक्ति का अनुभव होता है जो आप नाम-दीक्षा के समय नहीं थे। नाम के समय सबसे मुख्य चीज़ दी कि आपको होश में कर दिया। नाम के बाद दिन-प्रतिदिन मजबूती आएगी। आप जगत से न्यारे लगने लगेंगे। साहिब ने यही कहा -

मन ही निरञ्जन सबै नचाई। नाम होय तो माथ नवाई ॥

काग पलट हँसा कर दीना। ऐसा पुरुष नाम मैं दीना ॥

नाम के बाद आप में ऋद्धि-सिद्धि शक्तियाँ भी हैं। आप सक्षम हो चुके हैं, बस सदा सतर्क रहना। निरञ्जन ने साहिब से कहा है कि मैं भी सत्यलोक वाली बातें बोलूँगा। साहिब ने निरञ्जन से कहा मेरे नामी पर तेरा जोर नहीं चलेगा। **सत्यनाम** पाए बिना आत्मा अनात्म कर्म कर रही है। दुःख क्या है? आत्मा शरीर के धर्म का पालन कर रही है, मन के वश होकर। मनुष्य सुख की प्राप्ति और दुःख की निवृत्ति के लिए कर्म कर रहा है। संसार में शुभ और अशुभ दो ही कर्म हैं, दोनों बँधन कारक हैं। जीवन पाँच-पच्चीसी लागी। ठगी, कत्ल, व्याभिचार, सांसारिक काम शरीर के हैं। विविध प्रकार के कर्म मनुष्य शरीर के सुख के लिए कर रहा है। इन भौतिक कर्मों से सुख नहीं मिलने वाला है। कोई सुख स्थायी नहीं है। युवा सोचते हैं कि आगे सुख मिलेगा। बूढ़े अतीत को याद करके दुःखी हैं।

**कहे कबीर सुनो भाई साधो, रूई लपेटी आग है।
यह संसार झाड़ और झंकड़, उलझ पुलझ मर जाना है।
यह संसार नाव कागज की बूँद पड़े गल जाना है।
रहना नहीं देश विराना है॥**

गुर नानक देव जी ने भी कहा -

नानक दुखिया सब संसार।

तन धर सुखिया कोई न देखा। जो देखा वो दुखिया।

वाटई वाट सबै कोई दुखिया, क्या तपसी क्या बैरागी॥

देह का रोम-रोम मन की आज्ञा में है। मन का बहाव ही भौतिकता की तरफ है, आत्मा की तरफ नहीं जाने देगा। आत्मा तो संकल्प-विकल्प से रहित है। मन ही पहले संकल्प करता है वही बुद्धि रूप में निर्णय करता है। मन ही चित्त रूप में वस्तु-स्थल-दृश्य बतलाता है फिर वही कार्य रूप में अहंकार है। आत्मा में संकल्प-विकल्प नहीं हैं। मनुष्य की काया का नक्शा कहाँ से मिला? शरीर निरंजन की शकल पर बना है। शरीर के कारण आत्मा मूँह, आँखें-कान-नाक-हाथ-पैर आदि सभी

हिस्सों को अपना महिसूस करती है। फिर भी आत्मा मनातीत, व्योमातीत कैसे है? आत्मा की हमारे जैसी भौतिक इन्द्रियाँ नहीं हैं, वह निःतत्त्व है। निरञ्जन ने शरीर अपनी ही नकल पर बनाया है। शरीर माया का है उसके अन्दर आत्मशक्ति है। शरीर का जलवा या नूर ही आत्मा से है। शरीरों में रहते-रहते आत्मा अपने आप को भूल गई है। शरीर का संचालन मन कर रहा है, आत्मा कुली की तरह ढोने लगी है। आत्मा को जानने से बड़ा कोई काम और कोई ज्ञान नहीं है। आत्मा के ज्ञान के लिए कार्य करना ही प्राथमिक कर्तव्य है। साहिब ने कहा -

हँसा तू तो सबल था, अटपट तेरी चाल।

रंग कुरंग ते रंग लिया, अब क्यों फिरत बेहाल।।

गरुड़ पुराण में आत्मज्ञान की बात है। आत्मा शरीर छोड़ने के बाद भी शरीर की तलाश में रहती है इसलिए घर में गरुड़ पुराण कराते हैं। मृत शरीर को जलाकर नष्ट करने और अस्थियों को गंगा आदि पुण्य नदियों में इसीलिए विसर्जित किया जाता है। फिर आत्मा को यह ज्ञान दिया जाता है कि अब छोड़ा हुआ शरीर शेष नहीं है। यही ज्ञान समझाते हुए कागभुसुण्डि जी ने कहा -

सुनो तात यह अकथ कहानी,

समझत बने न जाय बखानी।

गोस्वामी जी ने यही कहा -

ईश्वर अंश जीव अविनाशी।

चैतन्य, सहज, अमल, सुखराशी।।

शरीर के सभी दरवाजे खुले हैं पर आत्मा नहीं निकल पा रही है। साहिब ने कहा-

इन्द्रि द्वार झरोखा नाना, तहँ देवा कर बैठे थाना।।

आ विषयन देख कपाट उघाड़ी।

चौदह देव या इन्द्र विराजे धमा चौकड़ी लागी ।।

जप तप नियम संयम अपारा । योगी यति न पावत पारा ।।

आत्मा ने खुद को शरीर मान लिया है, भ्रम की गठान है। मन शातिर है वायु-तत्व, स्वाँसा में आत्मा की शक्ति को कैद कर शरीर संचालन कर रहा है। इसी स्वाँसा को साधकर सुरत से अधर में जोड़कर मन को निर्बल बनाना है। नाम की प्रक्रिया से सद्गुरु अपने शिष्य को मन से दूर करने की यही शक्ति प्रदान करते हैं।

ज्ञान-गुदड़ी में साहिब ने मन और देह का रहस्य समझाया है। मन रूपी अलख पुरुष ने गहन विचार के साथ चौरासी लाख योनियों के धागे में आत्मा को बाँधा है। इन चौरासी लाख धागों की गुदड़ी रूपी शरीरों को पाँच तत्व और तीन गुणों से युक्त बनाया है। परमपुरुष से वरदान प्राप्त इस समरथ अलख-निरञ्जन ने सृष्टि रचना के खेल संचालन की गुदड़ी में जीव, ब्रह्म और माया को बुना है। शरीरों में आत्मा को सुरति के धागे, शब्द रूपी सुई में डालकर बुद्धि (Brain) डिबिया बनाकर ज्ञान को जोड़ा है। शरीर रूपी गुदड़ी में काम-क्रोध-लोभ-मद और पच्चीस प्रकृतियों को भी धागे में पिरोकर सिया है। साहिब कह रहे हैं सब संत इस काया गुदड़ी के विस्तार और श्रृंगार को ध्यान से देखें। नेत्र रूपी दो सूरज और चाँद के पैबंद भी इस शरीर गुदड़ी में लगे हैं। सद्गुरु की कृपा पाकर जाग जाओ और देखो इस शरीर गुदड़ी को ज्ञान विचार से दाग न लगने दो। व्यर्थ मत गँवाओ। जो भी इस गुदड़ी की रचना पर विचार करेगा उसे ही इसके बनाने वाले से भेंट होगी, वही जानेगा।

हृदय रूपी झोली से क्षमा रूपी खड़ाऊँ पहनकर लगन रूपी छड़ी निकालो, अटूट भक्ति से मेखला के समान अडिग रहकर सुरति की सुमिरनी से सत्यप्रेम का प्याला पियो। इस तरह मन रूपी काल-कलह का नाश होकर ममता-मोह से छूटकारा मिलेगा। सद्गुरु जब सच्चा नाम देते हैं तो इस जगत को ही जंजीर से बाँध देते हैं। शिष्य मुक्त होकर दसम द्वार से निकलकर ग्यारहवें द्वार को पहचान जाता है। पाँचों तत्वों, राग-

त्याग-वैराग और तिलक आदि के विधानों से मुक्ति मिल जाती है। सद्गुरु के मिलने से मन खुद चकमक के समान मूल ब्रह्म अग्नि प्रकट करने में सहायक हो जाता है।

साहिब इस शरीर रूपी गुदड़ी को सुविचार के साबुन से धोने और कुविचारों के सब मैल को कैसे धोना समझा रहे हैं। कह रहे हैं- सहज आसन में धीरज की धुनि से ध्यान को सत्य के सिंहासन पर स्थिर करो। सद्गुरु यही धीरज और ध्यान रूप जोग-कमण्डल हाथों में देकर सुरति की नाभि से जोड़ देते हैं। विवेक की माला बनाकर और देह को धर्मशाला मानकर सदा दया रूप होकर जीवों की सेवा में रहो। मन को मृगछाला की तरह रखकर देह को अपनी वैशाखी बना लो। मन के जोर को खत्म कर उसे अपनी दया पर निर्भर कर दो। स्वाँसों को जनेऊ बनाकर अन्तर की शुद्धता से नाम का अजपा-जाप करने वाला ही भेद को जानेगा। इसी तरह संशय, शोक, के भ्रम और पाँच-पच्चीसी प्रकृतियों पर विजय प्राप्त कर नष्ट कर दिया जाता है।

अपने हृदय को दर्पण बनाकर जब सभी दुविधाएं छूट जाती हैं तो शिष्य पक्का बैरागी हो जाता है। दसम द्वार से ऊपर शून्य में स्वाँसों को ले जाकर सद्गुरु शब्द अमृत मिलता है। दुनिया के सुख-दुःख की कीच को धोकर सुषुम्ना का त्रिवेणी रूपी घाट भी छूट जाता है। इसप्रकार तन और मन का सच्चा ज्ञान हो जाने पर निर्वाण-पद देखने की क्षमता मिल जाती है। अष्ट दल कमल से शून्य अधर ध्यान में योगी अपने आप को पा लेता है। इंगला और पिंगला स्वाँसा सम होकर सुषुम्ना में समाकर त्रिवेणी संगम बन जाता है। इसी त्रिवेणी में स्व ब्रह्म तत्व विचार से बंकनाल में रहकर और मन की चालाकी से सतर्क रहकर शून्य में चढ़ना सद्गुरु देते हैं। शून्य के मानसरोवर की गहराई में जाकर नहाने से संसार के दुःख और मैल छूट जाते हैं। अलख आत्मस्वरूप अर्थात् स्व दर्शन होकर आत्मा की आँखों से परमपुरुष को देखोगे। इस स्थिति में आने पर समस्त अहंकार (कर्म) और दम्भ का नाश हो जाएगा। ऐसे अपने शरीर

रूपी घट में प्रकाश का चौक बनाकर सत्यनाम की पूजा करो। सत्यपुरुष के अकह नाम के अलावा अन्य किसी देव को ध्यान में मत लाओ। सोहं रूपी स्वाँसा को ही चन्दन, तुलसी, पुष्प जानकर चित्त से अन्य सब कुछ भुला दो। श्रद्धा रूपी पालना और प्रीत की धूप देकर सद्गुरु के नित्य-सत्य (नूतन) नाम रूप का ही सुमिरन करो।

शरीर रूपी इस गुदड़ी को इसमें स्थित अलेख-अलख आत्मा ने स्वयं ही पहन रखा है। इसी प्रकट देह को आत्मा ने अपना भेष मान लिया है। इस देह गुदड़ी के जाल से कबीर रूपी सद्गुरु साहिब ने जब मुक्त कर दिया तो समस्त सुर-नर-मुनि भी इस मनुष्य देह (गुदड़ी) की चाह करने लगे। सत्संगति में रहकर सदा सद्गुरु की दया से ही सब कुछ मिल जाता है। सत्यनाम के स्वाँसों में सुमिरन का यही ज्ञान देकर सद्गुरु भक्तों की इस गुदड़ी रूपी देह को प्रकाशित कर देते हैं। सोहं, स्वाँस को कहते हैं। स्वाँस और सुमिरन का महत्व ही ज्ञान गुदड़ी से बताया है। स्वाँस और सुरति के बीच में ही रहस्य है। यही ज्ञान गुदड़ी से समझाया है कबीर साहिब ने -

अलख पुरुष जब किया विचारा। लख चौरासी धागा डारा॥
पाँच तत्व से गुदड़ी बीनी। तीन गुनन से ठाढ़ी कीनी॥
ता में जीव ब्रह्म अरू माया। समरथ ऐसा खेल बनाया॥
सब्द की सुई सुरति के डोरा। ज्ञान के डोभन सिरजन जोरा॥
सीवन पाँच पचीसी लागी। काम क्रोध मोह मद पागी॥
काया गुदड़ी के विस्तारा। देखो संतों अगम सिंगारा॥
चाँद सूरज दोउ पैबंद लागे। गुरु प्रताप सोवन उठि जागे॥
अब गुदड़ी की करू हुसियारी। दाग न लगे देखु विचारी॥
जिन गुदड़ी को कियो विचारा। तिन ही भेटे सिरजनहारा॥
सुमति के साबुन सिरजन धोई। कुमति मैल सब डारो खोई॥
धीरज धूनी ध्यान को आसन। सत कोपीन सहज सिंहासन॥
जोग कमण्डल गहि लीना। युगति फावरी मुरसिद दीन्हा॥
सेली सील विवेक की माला। दया की टोपी तन धर्मशाला॥

मेहर मतंगा मत बैसाखी। मृगछाला मनहिं की राखी॥
 निश्चय धोती स्वास जनेऊ। अजपा जपै सो जानै भेऊ॥
 लकुटी लौ की हिरदा झोरी। छिमा खड़ाऊँ पहिरि बहोरी॥
 भगति मेखला सुरति सुमिरनी। प्रेम पियाला पीवे मौनी॥
 उदास कुबरी कलह निबारी। ममता कुतिया को ललकारी॥
 जगत जँजीर बाँधि जब दीन्ही। अगम अगोचर खिड़की चीन्ही॥
 तत्त तिलक दीन्हें निरबाना। राग त्याग बैराग निधाना॥
 गुरु गम चकमक मनसा तूला। ब्रह्म अग्नि परगट करि मूला॥
 संसय सोग सकल भ्रम जारी। पाँच पच्चीसों परगट मारी॥
 दिल दरपन करि दुविधा खोई। सो बैरागी पक्का होई॥
 सुन्न महल में फेरा देई। अमृत रसकी भिच्छा लेई॥
 दुःख सुख मैल जगत के भावा। तिरबेनी के घाट छुड़वा॥
 तन मन सोधि भयो जब ज्ञाना। तब लख पायो पद निर्वाना॥
 अष्टकँवल दल चक्कर सूझे। योगी आप आप में बूझे॥
 इंगला पिंगला के घर जाई। सुखमन सेज जाय ठहराई॥
 ओअं सोहँ तत्त विचारा। बँकनाल का किया सम्हारा॥
 मन को मारि गगन चढ़ि जाई। मानसरोवर पेठि अन्हाई॥
 छूटे कलमल मिले अलेखा। इन नैनन साहिब को देखा॥
 अहँकार अभिमान बिडारा। घट का चौका करि उजियारा॥
 अनहद नाद नाम की पूजा। सत्त पुरुष बिन देव न दूजा॥
 हित कर चँदन तुलसी फूला। चित्त कर चाउर संपुट भूला॥
 सरधा चँवर प्रीति कर धूपा। नूतन नाम साहिब कर रूपा॥
 गुदड़ी पहिरे आप अलेखा। जिन यह प्रगट चलायो भेषा॥
 सत्त कबीर बकस जब दीन्हा। सुरनर मुनि सब गुदड़ी लीन्हा॥
 रहै निरन्तर सद्गुरु दाया। सत्संगति में सब कछु पाया॥
 कहे कबीर सुनो धर्मदासा। ज्ञान गुदड़ी करो प्रकासा॥



**सत्यपुरुष का पाँचवा पुत्र निरंजन है
जो तीन लोक का राजा, 84 लाख योनियों व
अनहद का रचयिता है**

मैं सिरजों मैं मारऊँ, मैं जारौ मैं खाऊँ ।
जल थल नभ महँ रमि रहा, मोर निरंजन नाऊँ ॥
मैं ही अमरधाम परमपुरुष का पंचम शब्द पुत्र हूँ ।
मैं ही विमूढ़ वरदान लेकर, परमपुरुष से शापित हूँ ।
मैं ही आद्यशक्ति-सह-हँसों को ले कालपुरुष कहाता हूँ ।
मैं ही निरंजन अमरधाम के मानसरोवर से निष्कासित हूँ ।
मैं 'मन' ही आत्मरूप तीन लोक में वासित हूँ ।
मैं ही आद्यशक्ति का पति शरीरों का रचयिता हूँ ।
मैं ही त्रिदेवों का पिता-गुरु और आराध्य हूँ ।
मैं ही वायु ध्वनि से वेद-शब्द शून्य में ओंकार हूँ ।
मैं ही वेदों में परमेश्वर और पंचतत्त्व आधार हूँ ।
मैं 'मन' ही सृष्टि से परे रारंकार हूँ ।
मैं ही साकार-निराकार में विद्यमान हूँ ।
मैं ही शुभ अशुभ और पुण्य-पाप का सृजक हूँ ।
मैं ही तीरथ ब्रत यज्ञ जप तप कर्म निर्माता हूँ ।
मैं ही धर्म अधर्म के जीवन कर्मों का व्याख्याता हूँ ।
मैं ही वैकुण्ठ और स्वर्ग-नरक कर्मफल प्रदाता हूँ ।
मैं 'मन' ही कर्म संचय स्रोत बन जाता हूँ ।
मैं ही एक उज्ज्वल पक्ष, दया करूणा का वरदान हूँ ।
मैं ही जीवों में तम रूप काम-क्रोध की खान हूँ ।

सत्य मार्ग

L संसार के जितने भी धर्म, मत-मतांतर हैं, सब कमाई, योग, साधना की बात कर रहे हैं, सब तीन-लोक की बात कर रहे हैं, पर साहिब की शिक्षा सहज मार्ग की ओर चक्कर काट रही है।

L जैसे हवा में तो हॉलिकाॉप्टर भी उड़ता है, जेट भी उड़ता है, यान भी उड़ते हैं, पारपाइण्डर भी उड़ता है, ऐसे ही आंतरिक साधना भी अनेक सूत्रों से की जाती है, वहाँ भी विविध गति से चलने वाले शरीर हैं। पर जैसे हॉलिकाॉप्टर वहाँ तक नहीं जा सकता, जहाँ तक पारपाइण्डर जा सकता है। उसकी गति में भी बड़ा अंतर है। कोई हॉलिकाॉप्टर, कोई हवाई जहाज़ किसी ग्रह का सफ़र तय नहीं कर सकता है। ऐसी ही सगुण-निर्गुण भक्तियों और किसी भी प्रकार के योग से इस भवसागर को पार नहीं किया जा सकता है। सद्गुरु का नाम रूपी जहाज़ ही आत्मा को तीन लोक से परे अमर लोक तक ले जाने की क्षमता रखता है।

L शरीर के किसी भी स्थान पर ध्यान रोकना एक छल है, माया है।

L पंच मुद्राओं के पाँचों नाम इस काया में हैं। सोहं भी इसी में है। इसलिए साहिब ने विदेह नाम की बात की है, सोहं को सच्चा नाम नहीं कहा है।

जो जन होइहैं जौहरी, शब्द लेहु बिलगाय।

सोहं सोहं जप मुआ, मिथ्या जन्म गँवाय॥

सोहं सोहं जपे बड़े ज्ञानी।

निःअक्षर की खबर न जानी॥

L शरीर के किसी भी हिस्से से ध्यान रोकने से आध्यात्मिक शक्तियाँ नहीं जगती। इससे तो शरीर की रिद्ध सिद्ध दिव्य शक्तियाँ की ताक़त ही जगी अध्यात्मिक शक्तियाँ नहीं जगीं। शरीर की कोई भी ताक़त जगी तो निरंजन की ताक़त ही जगी। निरंजन की ताक़त को जगाकर निरंजन की सीमा से पार नहीं हुआ जा सकता है। इसलिए साहिब शरीर के किसी भी स्थान पर ध्यान रोकना मना कर रहे हैं।

L साहिब धुनों पर ध्यान रोकना नहीं बोल रहे हैं। धुनें हमारे स्नायुमंडल की झँकार है। आवाज़ दो तत्व के टकराए बिना हो ही नहीं सकती। जहाँ द्वैत आ गया, वहाँ माया है। इसलिए धुनें अंतिम सत्य नहीं हैं।

L सभी कह रहे कि तुम्हें कुछ करना है। कोई कमाई करने को कह रहा है, कोई साधना करने को कह रहा है, कोई दान-पुण्य करने को कह रहा है, कोई यज्ञ करने को कह रहा है, कोई तीर्थ करने को कह रहा है। पर साहिब की सच्ची भक्ति कह रही है कि तुम्हें कुछ भी नहीं करना है, जो करना है वो सद्गुरु ने करना है। यहीं पर सब समीकरण बदल जाते हैं। क्योंकि अपने ज़ोर से, अपनी कमाई से कोई भी जीव इस भवसागर से पार नहीं हो सकता है।

सात दीप नव खण्ड में, गुरु से बड़ा न कोय।

कर्ता करे ना कर सके, गुरु करे सो होय॥

L यदि आपका गुरु गृहस्थ है तो उससे कभी भी अपनी आत्मा के कल्याण की उम्मीद नहीं रखना। वो नहीं कर पायेगा।

L मुझे आपको नाम के बाद ज्ञान नहीं देना है, दे चुका हूँ। कुछ नहीं देना है। फिर सत्संग क्या है? यह तो केवल आपको सतर्क करने के लिए है कि यह नहीं करना, वो नहीं करना।

अब आपके अंदर स्वसंवेद उत्पन्न हो चुका है, केवल समझा रहा हूँ कि कहाँ-कहाँ और किस-किससे बचना।

L जब भी आप मुझसे मिलेंगे आपको एक ताकत मिलेगी, आपको काम कर पाने की ताकत मिलेगी, इसलिए जल्दी-जल्दी आपके बीच आ रहा हूँ।

L हमारा पंथ है—सहज मार्ग और हमारा पंथ है—भृंग मत।

L सद्गुरु का दर्शन इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे हमें आध्यात्मिक किरणें मिलती हैं, जो उनकी वाणी, दृष्टि और चरण स्पर्श के द्वारा हमें प्राप्त होती हैं।

L जो गुरु गृहस्थ में रहकर अपने को संत कह रहा है, वो आपसे धोखा कर रहा है। वो कभी भी संत नहीं हो सकता है। एक संत चाहकर भी विषय नहीं कर सकता है। जो विषय आनन्द ले रहा है, वो माया में फँसा है। उसे सच्चे आनन्द का स्वाद अभी नहीं मिला है। फिर जो परमात्मा में मिल जाता है, वो उसी का रूप हो जाता है, उसके लिए सब बच्चे हो जाते हैं। इसलिए बाप अपनी बेटी से शादी नहीं कर सकता, उससे विषय नहीं कर सकता।



अमली होकर करे ध्यान,
गिरही होकर कथे ज्ञान।
साधु होकर कूटे भग,
कहे कबीर यह तीनो ठग।।

योगमत और संतमत में अंतर

योगमत	संतमत
1. योगमत में काया का नाम है।	1. संतमत में विदेह नाम है।
2. योग मत चाचरी, भूचरी, अगोचरी मुद्राओं के इर्द-गिर्द घूमता है, जो शरीर में हैं।	2. संतमत में पाँच मुद्राओं से आगे शीश से सवा हाथ ऊपर ध्यान रखने को कहा है।
3. यह नाम लिखने-पढ़ने में आता है। इनसे काल-पुरुष ने पाँच तत्व पैदा किये और शरीरों की रचना की।	3. यह अकह नाम है जो लिखने-पढ़ने में नहीं आता है और पाँच तत्वों से बाहर है।
4. योगमत में अनहद धुनों को ही परमात्मा माना जाता है।	4. संतमत में आत्मा किसी शब्द की मोहताज नहीं, क्योंकि आत्मा अपने आप में परिपूर्ण है।
5. योगमत करनी अथवा कमाई का मार्ग है।	5. यह सहज मार्ग है, गुरु कृपा का मार्ग है और भृंग-मता है।
6. योगमत में सुरति शब्द का अभ्यास किया जाता है।	6. संतमत सुरति को चेतन करने का मार्ग है।
7. योगमत में काल का नाम लिया जाता है। यह नाम शरीर को दिया जाता है।	7. संतमत जिंदा नाम प्रदान करता है जो कि शरीर को छोड़ आत्मा को दिया जाता है।
8. योगमत में गुरु की भूमिका न के बराबर होती है।	8. संतमत में भक्ति का सार ही संत सद्गुरु है।
9. योगमत सीमाबद्ध है, जिसमें साधक दसवें द्वार तक ही जाता है।	9. संतमत असीम है जो कि ग्यारहवें द्वार की बात करता है, जो सुरति में है।
10. योगमत निराकार निरंजन की ही सत्ता को सर्वश्रेष्ठ मानता है।	10. संतमत में निराकार सत्ता से आगे चौथे लोक अर्थात् अमर लोक की बात की जाती है।

योगमत	संतमत
11. योगमत में कमाई का फल खत्म होने पर वापिस माता के पेट में आना पड़ता है।	11. संतमत में जीव सदा के लिए आवागमन से मुक्त हो जाता है और अपने निजधाम सत्य लोक को चला जाता है।
12. योगमत बैशाखियों के सहारे चलता है जो कि शास्त्रों की साक्षी देकर अपने आप को स्थापित करता है।	12. संतमत में संत सद्गुरु अपने अनुभव से बोलता है जो किसी का मोहताज नहीं होता है।
13. इसमें रिद्धि-सिद्धि और दिव्य शक्तियाँ प्राप्त होती हैं, मगर आत्मा का ज्ञान नहीं होता है।	13. संतमत में जीव को आत्मज्ञान होने से आध्यात्मिक शक्तियाँ मिलती हैं।
14. योगमत मीन और पपील मार्ग है।	14. जबकि संतमत विहंगम मार्ग है।
15. योग मत के पाँच पड़ाव हैं जो काल पुरुष के अधीन हैं।	15. सन्तमत सतगुरु की सीधी भक्ति है।
16. निरगुन भक्ति शरीर के अन्दर की भक्ति है जो काल पुरुष के अधीन है।	16. विदेह नाम की भक्ति अमर लोक की परम पुरुष की भक्ति है।

- ❖ पाँच शब्द औ पाँचों मुद्रा, सोई निश्चय माना।
आगे पूरण पुरुष पुरातन, उसकी खबर न जाना॥
- ❖ नौ नाथ चौरासी सिद्ध लों, पाँच शब्द में अटके।
मुद्रा साध रहे घट भीतर, फिर आँधे मुँह लटके॥
- ❖ काया नाम सबहिं गुण गावैं, विदेह नाम कोई बिरला पावै।
विदेह नाम पावेगा सोई, जिसका सद्गुरु साँचा होई॥
- ❖ जब तक गुरु मिले नहीं साँचा, तब तक गुरु करो दस पाँचा॥

संतो तन चीन्हे मन पाया

जहँ खोजत कल्पो भये, घटहि माहिं सो मूर॥

अनादिकाल से परमात्म-तत्त्व पर खोज हो रही है। यह एक परा रहस्य है। परमात्म तत्त्व पर बड़े-बड़े विचार रखे गये हैं। उसके स्वरूप, गुण आदि के विषय में बताया गया है। अगर दुनिया की तरफ नज़र डालें तो तीन चीज़ों के लिए सभी लड़ते हैं। पहला तो ईश्वर के रूप के लिए कि कैसा है। दूसरी लड़ाई है कि वो कहाँ है? फिर तीसरा लड़ा जाता है कि उसतक जाने का रास्ता कौन सा है? इन तीन विषयों की लड़ाई दुनिया में है।

इंसान ने अपनी सुविधानुसार लाखों भगवान बनाए। यह आगे भी कई भगवानों का सृजन करेगा। आप नाना शास्त्रों का अध्ययन करें तो कहीं किसी की महिमा का वर्णन है तो कहीं किसी की। वेदों में ऋग्वेद निराकार कह रहा है तो सामवेद साकार। चारों में मतभेद है। ऐसे में आदमी निश्चय नहीं कर पा रहा है कि आखिर कैसा है। अच्छी तरह विवेक करें तो एक चीज़ का पता चलता है कि वेद-शास्त्र आदि सब परमात्मा को अपने अंदर में बोल रहे हैं। अब इसमें एक रहस्य और उठा कि आखिर अन्दर होने पर भी समझ क्यों नहीं आता। श्रीमद्भागवत गीता में कहा कि वो ज्ञानेन्द्रियों से परे है; उसकी अनुभूति कर्मज्ञानेन्द्रियाँ नहीं कर सकती हैं। वो इनसे सर्वथा भिन्न है। वो परम तत्त्व इनका विषय नहीं है; इनसे नहीं जाना जा सकता है। इसका मतलब है कि भौतिक संसाधन परमतत्त्व को जानने में नाकाफी हैं। हमारे स्थूल शरीर में पाँच कर्म इंद्रियाँ हैं और पाँच ज्ञान इंद्रियाँ। जैसे आँखें देखने का काम करती हैं, नाक सूँघने का काम करती है, कान सुनने का काम करते हैं। यदि

कान से सूँघना चाहें तो नहीं हो पायेगा। क्योंकि उनका विषय नहीं है। इस तरह परमात्मा कर्मज्ञानेन्द्रियों का विषय नहीं है। इनसे नहीं पाया जा सकेगा।

मनुष्य के अन्दर कुछ और चीजें भी दिख रही हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दिख रहे हैं। ये प्रबल हैं। ये परम-तत्त्व को जानने में बाधक हैं। इनसे लोहा लेना आम आदमी के बस की बात नहीं है। हमें दिख रहा है। ये ताकतवर दुश्मन इस शरीर में निवास कर रहे हैं।

इसका मतलब है कि जो हमारे अंदर परमात्म तत्त्व को प्राप्त करने के लिए बाधक हैं, वो तत्त्व बहुत ताकतवर हैं। इनसे यह जीवात्मा किसी तरह से मुकाबला नहीं कर पायेगी। क्योंकि ये ताकतवर हैं। हमें प्रमाण मिल रहे हैं। धर्मशास्त्रों में आ रहा है कि हमारे पूर्वजों ने बड़ी तपस्या की, योग साधनाएँ की, अपने शरीर को सुखा डाला, दीमक तक ने उनपर अपना घर बना लिया, पर ये शत्रु काबू में नहीं आए। इन्होंने सबको नाच नचाया। उन्होंने भूखे रहकर कंदमूल खाकर घोर तपस्याएँ की, लेकिन पता चलता है कि जो अंदर की बाधाएँ हैं, उन्होंने बाधा डाली और वे विचलित हुए। ये दुश्मन कोई साधारण नहीं हैं।

सत्य यह है कि जो रुकावट डाल रहा है वो हमारा अपना वजूद है। इसमें काम, क्रोध आदि शत्रु निवास कर रहे हैं। पराशर ऋषि ने हजारों साल तप किया, पर कामातुर हुआ। श्रृंगी ऋषि ने तप किया और वेश्या के बस में हो गया। इनसे पता चल रहा है कि अंदर में रहने वाले दुश्मन ताकतवर हैं। सब मिलाकर यह आदमी के प्रयास से नहीं हो पायेगा। ये ताकतें बहुत ताकतवर हैं। इनसे मनुष्य टक्कर नहीं ले पा रहा है। सुनने में आ रहा है कि फलाने ऋषि ने तप किया, काम आया और तप भंग कर दिया। आखिर इन दुश्मनों का स्रोत कहाँ से है? इनकी उत्पत्ति कहाँ से है? एक बिंदु पर विचार करें तो पूरी हकीकत समझ आयेगी।

आत्मा आनन्दमयी है। कहीं से भी इसे आनन्द के लिए चेष्टा नहीं करनी है। इसमें स्वतः ही आनन्द है। आनन्द लाना नहीं है। और यह

आनन्द साधारण नहीं है, बहुत आनन्द है। यह आनन्दमयी है। फिर जिस शरीर में निवास कर रहे हैं, यह तो आनन्दमय नहीं है। यानी हमें दुखों के बीच में छोड़ा गया है। किसी शैतानी ताकत ने यह काम किया है। यह तो थोड़ा चिंतन करने पर पता चल जाता है।

फिर हम सब मुक्ति की बात कर रहे हैं। जरूर बंधन में हैं न! तभी तो मुक्ति की बात कर रहे हैं। बंधन पूछो तो ऊपरी तौर पर कह देते हैं कि काम, क्रोध आदि ने जकड़ा हुआ है। इतना बुद्धिजीवी आदमी अंतःकरण में झाँक नहीं पा रहा है, समझ नहीं पा रहा है कि किन शत्रुओं ने बाँधा है।

चश्म दिल से देख तू, क्या क्या तमाशो हो रहे।

दिल सतां क्या क्या हैं तेरे, दिल सताने के लिए॥

ये कैसे दुश्मन हैं! हमारी आत्मा संकट में है। क्योंकि जैसी इसकी व्याख्या दी गयी है, ज्ञान से परिपूर्ण है, अजन्मा है, जर्जर अवस्था को प्राप्त नहीं होती, पंच भौतिक तत्वों से परे है, चारों अवस्थाओं से परे है, नित्य है, किसी उर्जा की जरूरत नहीं है, किसी भौतिक तत्व की जरूरत नहीं है; जो कुछ इसमें है, कुछ कम नहीं होने वाला है, कुछ भी बढ़ने वाला नहीं है, न्यूनाधिक नहीं हो सकती है, किसी भी देश, काल, अवस्था में विघटन नहीं हो सकता है, इस सबके अनुसार इसका गुण नजर नहीं आ रहा है।

यह अत्यंत आनन्दमयी है। यह यथार्थ आनन्दमय है। आत्मा के इसी स्वरूप का चिंतन करें तो समस्या का हल हो जायेगा। जो शरीर में रहकर अनुभूतियाँ कर रहे हैं, कुछ भी स्थिर नहीं है। वो सब 'दुख मिश्रित सुखाभास' है। इसमें जो भी प्राप्त होने वाला है, वो सुख नहीं हो सकता है। क्योंकि अरबों की संपदा आ जाने पर भी सुख प्राप्त नहीं हो सकता है। संसार परिवर्तनशील है। जो आज आपके पास है, पहले किसी के पास था, आगे किसी और को मिल जायेगा। जिस मकान में आप रह

रहे हैं, न जाने पहले किस-किस के पास था। एक दिन जाना ही होता है। शरीर का नाश अवश्यंभावी है। आदमी बुरे झमेले में उलझा है। कुछ भी स्थिर नहीं है दुनिया में। जो कुछ भी देख रहे हैं, किसी को भी स्थिर नहीं कह सकते हैं। इसलिए इन नाशवान पदार्थों की प्राप्ति करके स्थायी आनन्द कैसे पा सकते हैं। यह पूर्ण सच है कि जगत का कोई भी पदार्थ आत्मा के उपयोग में आने वाला नहीं है। इन आनन्दों की तरफ ध्यान दें तो केवल शरीर से संबंधित आनन्द हैं। कुछ घूमने के शौकीन हैं..... कभी कश्मीर, कभी विदेश। उन्हें मजा आ रहा है। यह केवल आँखों से संबंधित आनन्द है। कुछ खाने-पीने के शौकीन होते हैं। इसका संबंध केवल हमारी जिह्वा इंद्रि से है। जब शरीर का अंत होगा तो इन इंद्रियों का भी अंत होगा। जिनसे आनन्द ले रहे हैं, वो भी नित्य नहीं हैं। कुछ इत्र आदि छिड़ककर नासिका का आनन्द ले रहे हैं। यह भी क्षणिक आनन्द है। यह सब दुखमिश्रित सुखाभास हैं। इनके लिए भोग्य पदार्थों की जरूरत पड़ती है। जिह्वा को आनन्द देना चाहते हैं तो खट्टे, मीठे या षट्स में से किसी पदार्थ को खाना होगा। मान लो, मीठा खाने के शौकीन हैं। लड्डू खाते हैं तो जीभ को थोड़ी देर के लिए आनन्द मिलेगा। यानी भोग्य पदार्थ की जरूरत पड़ी, एक और संसाधन चाहिए और कुछ देर में वो आनन्द समाप्त है। हमारी इंद्रियाँ जो भी आनन्द प्राप्त करती हैं, भोग्य पदार्थ चाहिए। पाँच तरह का आनन्द है। ये मिलता है। कभी कभी हम खुशी का संकल्प करते हैं तो खुश हो जाते हैं। चलते हुए लोगों को देखें तो पता चलता है कि कोई चिंतन में डूबा हुआ है, कोई खुश दिख रहा है। हमारे शरीर और अंगों पर भी इनका प्रभाव पड़ता है। अंतःकरण की 4 सूक्ष्म इंद्रियाँ, पाँच कर्म इंद्रियाँ, पाँच ज्ञान इंद्रियाँ—ये ही जगत के पदार्थों की अनुभूतियाँ करती हैं। ये सब अनित्य हैं। पर आत्मा को भोग्य पदार्थों की जरूरत नहीं है। स्थूल शरीर की हर चीज खत्म हो जायेगी। आँखें भी खत्म हो जायेंगी, कान भी खत्म हो जायेंगे, अस्थि-माँस भी।

आखिर शरीर में स्थिर क्या है। कुछ भी तो नहीं। सभी खत्म हो जायेगा। जगत के सभी विषयारस अनित्य हैं, क्षणिक हैं।

कोई खेतीबाड़ी कर रहा है, कोई ठगी कर रहा है, कोई नौकरी कर रहा है। कर्म क्यों कर रहा है? इन इंद्रियों की तृप्ति के लिए, शरीर के सुख के लिए।

आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहाँ फिरत मगरूरी में॥

यह संसार तो मृग-मृचिका की तरह है। रेगिस्तान में मृगा दूर क्षेत्र पर पानी की कल्पना करते हैं। वो दौड़ते हुए जाते हैं। पर मृग-मृचिका आगे बढ़ती जाती है, क्योंकि पानी का केवल भास हो रहा होता है, होता नहीं है। अंत में दौड़ते-दौड़ते मर जाते हैं। संसार में भी आनन्द नहीं है। दुखमिश्रित सुखाभास है। संसार में सुख नहीं है। हरेक उलझन में है। हरेक शरीर के क्रूर धर्म का पालन कर रहा है। आत्मदेव शरीर में रह रहा है। यह शरीर में रह रही शैतानी ताकतों से अपनी ताकत से नहीं छूट सकता है।

इक दुई होवें उन्हें समझाऊँ, सबहि भुलाना पेट के धंधा॥

साहिब कह रहे हैं कि एक-दो होते तो समझाता, पर यहाँ पर तो सभी भूले हुए हैं। अगर हम पूरे वातावरण को देखें तो सभी भूले हुए हैं।

जीवन पाँच पचीसी लागी॥

हरेक स्वाभाविक शरीर के धर्म का पालन कर रहा है। अर्थात् एक-दो नहीं, सभी भूले हुए हैं। तत्त्व ज्ञान की बात कोई भी नहीं कर रहा है।

एक बच्चा दिमागी कमजोर था। उसके पिता ने उसे सेवा के लिए रखा। कुछ दिन बाद वो कहने लगा कि मैं जाना चाहता हूँ। मैं किसी को रोकता नहीं हूँ। मैंने पूछा कि क्यों जाना चाहते हो? कहा कि अपने भविष्य के लिए कुछ करना चाहता हूँ। नौकरी करके अपना भविष्य बनाना चाहता हूँ। उसने सोचा कि नौकरी से भविष्य बनेगा। उसने यह

नहीं सोचा कि जो काम वो कर रहा था, उससे सुंदर भविष्य और कहीं नहीं बना सकता था। सेवा से वो अपनी आत्मा का कल्याण कर रहा था। भविष्य ही तो बना रहा था न! पर इंसान शरीर की जरूरतों तक ही सीमित है। यह नहीं है कि पैसा नहीं कमाओ, पर जितनी जरूरत हो, उतना ही कमाओ, अधिक के लिए अपने को मत उलझाओ।

साईं इतना दीजिए, जामें कुटुम्ब समाय।

मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय॥

बंधुओ, आदमी भविष्य के लिए योजना बनाता है। बड़ी लंबी-लंबी योजनाएँ बनाता है। यहाँ साहिब कह रहे हैं—

पाँव पलक की सुधि नहीं, करे कल्प की आस॥

आदमी ने कल्प तक की आशाएँ बनाई हुई हैं। इस शरीर को देखो तो दिमाग़ कभी भी खराब हो सकता है, हार्ट कभी भी फेल हो सकता है, शरीर थोड़ी सी चोट लगने पर मिट सकता है। लेकिन हम अस्थायी पदार्थों की खोज में लगे हैं। बर्तन खरीदने जाते हैं तो दुकानदार से कहते हैं कि ऐसा बर्तन देना, जो कभी भी टूटे नहीं। यदि रंगरेज के पास जाते हैं तो भी कहते हैं कि ऐसा रँगना कि कभी न छूटे। जिस दुनिया में रहते हैं, यह खुद स्थिर नहीं है तो इसमें जो कुछ है, इसके लिए ऐसा सोचना बेवकूफी है।

न धूप रहनी न छां बंदेया।

न प्यो रहना न मां बंदेया॥

आप यह सब कहते भी हैं। पर यथार्थवादी नहीं हैं। आखिर कौन-सी ताकतें हैं, जो परमात्म तत्व की प्राप्ति में बाधा डाल रही हैं?

इस दुनिया के अन्दर चार तरह के लोग हैं और सबकी अलग अलग वृत्तियाँ, अलग अलग सोच है। प्रथम वो हैं, जो कहते हैं कि खाओ-पीयो, मौज करो, कोई आत्मा, परमात्मा नहीं है। सांसारिक भाषा में इन्हें पामर कहा गया। दूसरे वो हैं, जो भय रखते हैं, आस्था रखते हैं।

वो किसी को सताते नहीं हैं, पाप नहीं करते हैं। पर फिर भी वो दुनिया में रमें रहते हैं। कभी मौका मिले तो पुण्य कर्म भी कर लेते हैं, सत्संग भी सुन लेते हैं। उन्हें सांसारिक जीव कहा गया। ये अच्छे हैं। कम-से-कम ये पाप नहीं कर रहे हैं, किसी को सता नहीं रहे हैं। तीसरे सहषुण्ण हैं, अपनी आत्मा का कल्याण चाहते हैं। ये सोचते हैं कि मनुष्य-तन मोक्ष की प्राप्ति के लिए मिला है; हर कार्य विवेक से करते हैं। उन्हें परमार्थी जीव कहते हैं। फिर महापुरुष लोग हैं, जो कोई बिरला होता है। ऐसी सोच कैसे बनी? कर्मानुसार जन्मों के संस्कार साथ में हैं। बहुत कम लोग आत्म तत्त्व का बोध रखते हैं। बालक जन्म लेता है तो माता पिता दुनिया की चीजें सिखाने लग जाते हैं, क्योंकि खुद संसारी हैं। इसलिए आदमी संसार के वैभव में उलझा है।

...तो आत्म तत्त्व मामूली नहीं है। उसकी तरफ बढ़ना है। हम धन के महत्व को जानते हैं। जीवन में धन की जरूरत पड़ती है। इसलिए धन कमाने के लिए लगे हैं। भागीरथी प्रयास किये जा रहे हैं। पर आत्म तत्त्व के लिए प्रयास नहीं कर रहे, क्योंकि उसका महत्व नहीं जान पा रहे हैं।

आत्म तत्त्व को पाने के बाद कुछ पाना शेष नहीं रह जाता है। जितने भी सुख हैं, क्षणिक हैं। आत्म तत्त्व अविरल है, अनूठा है। हमें देखना होगा। जब भी हम उस तरफ बढ़ते हैं तो रुकावट क्या है? क्या हमारी खोज में कमी है? आत्म तत्त्व के लिए क्या-क्या कर्म कर रहे हैं? क्या वो ठीक हैं, उचित हैं, पर्याप्त हैं?

वस्तु कहीं ढूँढ़े कहीं, केहि विधि आवे हाथ।

कहैं कबीर भेदी लिया, पल में देत लखात॥

अगर भेदी मिल गया तो पल में वो तत्त्व बता देगा। कहीं खोज में त्रुटियाँ हैं। क्या परमात्म तत्त्व के लिए हमारी खोज गलत है? बिलकुल। क्योंकि हम उसे बाहर खोज रहे हैं जबकि वो तो अन्दर में है।

जहँ खोजत कल्पो भये, घटहि माहिं सो मूर॥

वो परमात्म तत्त्व हमसे दूर नहीं है। इसका मतलब है कि कहीं

खोजने में भूल है। खोज के तरीके में गलती हो रही है। सबसे पहले देखते हैं कि आत्मा तक पहुँचने का प्रयास क्या कर रहे हैं। जो-जो जिस-जिस प्रयास को कर रहा है, उसे ही सही मान रहा है; परमात्म तत्व की प्राप्ति के लिए जो उपक्रम कर रहा है, उसे ही नित्य मान रहा है। योग वाला योग को ही नित्य मान रहा है। ट्राटक करने वाला ट्राटक को ही नित्य मान रहा है। काले इल्म वाला काले इल्म को नित्य मान रहा है। जो भी जिस बिंदु पर है, उसी को नित्य मान रहा है। जिसने भी जिसको भी पकड़ा है, उसे ही स्थिर मान रहा है। आखिर उपयुक्त रास्ता क्या है?

नाना पंथ जगत में, निज निज गुण गावें।

सबका सार बताकर गुरु मारग लावें॥

निश्चय करना मुश्किल हो रहा है कि साधन कौन-सा उपयुक्त है। लोग कई क्रियाएँ कर रहे हैं। लाख बात की एक बात है कि परमात्मा अन्दर में है। फिर बाहर का भटकाव कैसा है! ये ही तो रहस्य साहिब बोल रहे हैं।

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग खोजत बन माहिं।

ऐसे घट घट साईया, मूरख जानत नाहिं॥

हम देखते हैं कि शरीर के अन्दर आत्म तत्व मिल नहीं रहा है। एक तरफ हम कहते हैं कि आत्मा ही शरीर का संचालन कर रही है, आत्मा ही मूल स्रोत है। बड़ा आश्चर्य है कि जिस सत्ता के द्वारा शरीर का संचालन हो रहा है, वो सत्ता समझ में नहीं आ रही। वो सर्वशक्तिमान अन्दर बैठा है, नजर नहीं आ रहा है, अनुभव नहीं हो रहा है।

प्रियतम को पतिया लिखूँ, जो कहूँ बसे विदेश।

तन में मन में नयन में, वाको कौन अंदेश॥

कौन बाधक है? एक ही बाधक है—मन। क्या यह मान लें कि मन बाधक है? यह जाना भी जा सकता है या केवल मान लें। प्रत्यक्ष अनुभूति कर सकते हैं कि मन हमें बाँधा है? साहिब ने अपने शब्दों में सुंदर निरूपण किया।

संतो तन चीन्हे मन पाया ।।

कह रहे हैं कि पूरे शरीर को निचौड़ने के बाद मन ही मिला। पूरा शरीर का मुआइना किया तो मन ही मिला। मेंहदी में सार लालिमा है, तिलों में मूल तत्व तेल है, अग्नि का मूल तत्व उष्मा है, दूध का मूल घी है, इस तरह शरीर का मूल तत्व मन है। पूरे शरीर का मुआइना करके मन ही निकला। तन ही मन है, शरीर ही मन है। निर्गुण मन है। मन ने कहा कि आम खाना है। दिमाग भी लग जाता है। वो वही है। दिमाग ने क्यों कहा? आँखों ने सुंदर फूल देखा तो आनन्द लेना चाहा। अब आनन्द कैसे मिला? नासिका से सूँघने पर आनन्द मिला। क्षणिक आनन्द। आप घूमते फिरते माताओं-बहनों पर दृष्टि रखते हैं, क्योंकि आँखें सौंदर्य चाहती हैं। पूरा इंद्रियों का खेल है। खाने की चीज देखी, मुँह में पानी भर आया, क्योंकि खाने की चीज मुँह का विषय था। आखिर मुँह में पानी क्यों आया? आँखों ने सुंदरता देखी तो वासना क्यों आई? तमाम लोग डाँस देख रहे हैं। अंग भंगिमाएँ देख रहे हैं। क्योंकि देखना भी मैथुन है। अष्ट मैथुन हैं। चिंतन करना भी मैथुन है। गंदी किताबें पढ़ना भी मैथुन है। आप देखना कि कितना मेल-जोल है इन इंद्रियों का। इसलिए तन ही मन है। जिस अवस्था में आप बैठे हैं, वो भी मन है। इंसान सपना देखता है; सपने में सब नित्य लगता है। अब नित्य किसके कारण लगा? यह नित्य सपने वाली अवस्था के कारण था। अभी आप इस दुनिया को देख रहे हैं। सभी चीज नित्य लग रही है। इसका कारण जाग्रत अवस्था है। इसलिए चारों अवस्थाएँ मन है। बहुत गहरी साजिश है। हमारी इंद्रियाँ जो चाहती हैं, मन करता है और जो मन चाहता है, इंद्रियाँ करती हैं। इनका गठजोड़ है। जैसे पति-पत्नी की एक राय होती है। विवाह के समय संकल्प करते हैं कि जो तुम्हारी इच्छा होगी, वही हमारी होगी। तुम्हारा सुख मेरा सुख होगा और तुम्हारा दुख मेरा दुख होगा। दोनों एक हो जाते हैं। इस तरह मन और इंद्रियाँ एक हो गये हैं। विरुद्ध नहीं जाते हैं। इनका गठबंधन है। अगर मन ने कहा कि आम खाना है तो ये सहायक हैं। आप जा रहे थे। बगीचे के

पास से गुजरे तो फूल दिखा। फौरन आपकी इच्छा हुई कि सूँघे। आँखों ने नाक को सूचना दी कि फूल है, तभी यह इच्छा हुई। तभी मस्तिष्क ने टाँगों को आज्ञा दी कि चलो। इस तरह यह शत्रु सामने आ रहा है। यह मन केवल जगत के पदार्थों में उलझाए रखता है।

माताएँ गहने पहनती हैं। कोई हार, कोई कान की बाली। पर जब गला देते हैं तो भेद खत्म हो जाता है। तब एक ही सोना है। इस तरह इंद्रियाँ एक ही मन है।

मन ही लेवे मन ही देवे॥

यही रुकावट कर रहा है।

तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन॥

जितना भी झमेला है, खाना-पीना, उठना-बैठना, सब मन है। कहत कबीर सुनो भाई साधो, जगत बना है मन से॥ तभी तो कह रहे हैं—

संतो मन का करो विवेका॥

जो कोई कहे मैं मन को देखा, उसकी रूप न रेखा।

पलक पलक में वो दिखलाए, जो सपने नहीं देखा॥

यह शत्रु है। शत्रु किसे कहते हैं? जो आपका नुकसान करे, उसे आप शत्रु कहते हैं। आपको गाली बके, आपका आर्थिक नुकसान करे, आपकी निंदा करे, आपको शारीरिक या मानसिक चोट पहुँचाए। यानी जो किसी भी तरह से आपको क्षति पहुँचाए, उसे आप अपना शत्रु मानते हैं। साहिब कह रहे हैं—

तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन॥

इस बात पर गहराई से विचार करने की जरूरत है। यह ऐसे ही नहीं कह रहे हैं। सच में मन के अलावा आपका कोई भी शत्रु नहीं है। जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य ही आत्म-कल्याण है और इसने उसी में बाधा डाली है। इसने आत्मा को रुकावट दी।

**मन ही स्वरूपी देव निरंजन, तोहि राख भरमाई।
पाँच पच्चीस तीन का पिंजड़ा, जामें तोहि राखा भरमाई॥**

पूर्वज क्या कर रहे थे? क्यों जंगलों में जा रहे थे? क्यों कंद-मूल खा रहे थे? शृंगी ऋषि/नेमि ऋषि आदि ने आहार का त्याग क्यों किया? मन पर विजय प्राप्त करना चाह रहे थे। वो काम पर विजय प्राप्त करना चाह रहे थे?

मन चीन्हे बिरला भेदी ।।

मैंने पहले भी बताया कि मन बड़ी खराब चीज है। अच्छा-बुरा हम गुणवत्ता के अनुसार बोलते हैं। किसी को कहते हैं कि गाय है। क्योंकि वो हिंसा नहीं करती है। शेर को खतरनाक कहते हैं। क्योंकि वो माँसाहारी है। हमारे शरीर पर माँस है। फिर पंजे तेज हैं, फुर्तीला है। इसी तरह मन तेज है, खतरनाक है, क्रूर है।

पानी डुबा देता है। यह उसका गुण है। आग जला देती है। मन के पाँच गुण हैं—काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार। ये मन है। सब इसी से संचालित हो रहे हैं।

काम प्रबल अति भयंकर, महादारुण काल।

गण गंधर्व यक्ष किन्नर, सबै कीन बेहाल ।।

वाणियों में आ रहा है कि बड़े-बड़ों को पटकी दे मारी। ये आपके काबू में आने वाले नहीं हैं। मन जटिल है। वासुदेव ने जब अर्जुन को मन को काबू में करने के लिए कहा तो अर्जुन ने कहा कि वायु की गठान बाँधना दुष्कर है, पर यदि आप कहें तो एक बार प्रयास कर लूँगा, समुद्र का मंथन करना कठिन है, पर एक बार उसके लिए भी प्रयास कर लूँगा, पर मन पर काबू करने के लिए मत बोलना। यह मैं बहुत प्रयास करके हार चुका हूँ। यह बस में नहीं आता है।

मन अँधकारमय है। इसलिए नजर नहीं आता। काम, क्रोध आदि वृत्तियाँ हैं। इसलिए खतरनाक है। इतना ताकतवर है कि देवराज इंद्र को भी नहीं छोड़ा, पाराशर जैसे तपस्वी को नहीं छोड़ा। आपका पाला कोई मामूली ताकत से नहीं पड़ा है। दो डुबकियाँ लगाने से मसला हल नहीं होने वाला है।

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।

जीव विचारा क्या करे, जो न छुड़ावे पीव॥

काम से जीतना देवों के बस की बात भी नहीं है। फिर यदि कोई थोड़ी देर के लिए जीत भी ले तो इसका बड़ा भाई बैठा है—क्रोध। ये बड़े दुश्मन हैं। आत्मा को जगत की ओर घसीटते हुए ले जा रहे हैं। जिस भी चीज में आत्मा उलझेगी, आप वहीं जाओगे। जगत के अन्दर दो चीज हैं, जहाँ आदमी फँसता है—एक वासना, एक धन।

चलो चलो सब कोई कहे, पहुँचा बिरला कोय।

एक कनक अरु कामिनी, दुर्गम घाटी दोय॥

यह काम कैसे चलता है? इसे देखने के लिए दिव्य दृष्टि चाहिए। मल-मूत्र की इंद्रियाँ घृणित हैं। यदि ये सुंदर होतीं तो इंसान ने दिखाते हुए चलना था। जैसे किसी की टाँगें सुंदर हैं तो वो निक्कर पहनकर घूमता है। किसी की बाजू सुंदर है तो बाजू ऊपर करके चलता है। इस तरह यदि वो इंद्रियाँ भी सुंदर होती तो इंसान ने वो भी दिखानी थीं। पर वो गंदी हैं, इसलिए छिपा रहा है।

अच्छा, यह काम कहाँ रहता है? काम मन के अन्दर रहता है। वहीं इसका ठिकाना है। उस समय बुद्धि में एक ताकत आती है, सम्मोहन आता है और वो उस ओर विवश करता है। ऋषियों ने सम्मोहन तोड़ने के लिए तप किया, पर नहीं तोड़ पाए।

यह क्रोध कहाँ रहता है? यह भी मन के अन्दर रहता है। किसी ने आपको कहा कि लहरसिंह ने गाली बकी। बुद्धि ने विचार किया कि तगड़ा है या कमजोर। अगर तगड़ा है तो बुद्धि कहती है कि चुप रहो, मारेगा। तब गुस्सा नहीं आता है। गुस्सा मन से ही तो उठा न! यदि बुद्धि ने कहा कि मार तो आप शुरू हो जाते हैं। आँखों ने देखा कि तगड़ा है, अपने पर भारी पड़ेगा तो दिमाग तक मेसेज पहुँचा। दिमाग ने कहा कि छोड़ दे। गुस्सा नहीं आया। लहरसिंह फिर कहता है कि चुप रहो, दाँत तोड़ दूँगा। गुस्सा आया ही नहीं। केवल कहते हैं कि भाई लहरसिंह गाली

मत दो न। देखो, गुस्सा नहीं आया न! यदि कमजोर होता तो क्रोध में आकर उसका बुरा हाल कर देना था। यह सबको मारता है। देवराज इंद्र कामातुर हुआ तो यह मन की मार थी या नहीं! जैसे भोजन देखने पर जीभ ललचाती है, ऐसे ही सुंदर स्त्री देखने पर मन कुत्ते की तरह ललचाता है। फौरन शरीर के विकार जाग उठते हैं। पूरा मसला अन्दर से ही निकल रहा है। मन पटकी मार रहा है। शास्त्रों में पढ़ रहे हैं कि क्रोध ताकतवर है। सनकादिक ने तप किया, पर क्रोध में जय और विजय को श्राप दे दिया। ये अपनी ताकत से इंसान बस में नहीं कर सकता है। कठिन तप करने वाला कपिल मुनि भी इनके वशीभूत हो गया और राजा सागर के 60 हजार पुत्रों को शाप देकर भस्म कर दिया। तब उन्हीं के कल्याण के लिए भागीरथ गंगाजी को पृथ्वी पर लाया।

इसलिए मन को खतरनाक कहा। कुछ कह रहे हैं कि मन जो कहे, वही कर लेना। वाह भाई! दुर्योधन, रावण आदि सबको क्रोध आया। सभी जानते हैं कि शिवजी चार युग की समाधि लगाते हैं और तीन लोक का नाश करते हैं।

अस असुर घट में बसें, कैसे रहत कुशल॥

हरेक इनकी जकड़ में है। वेदव्यास जी को पुत्र मोह हुआ तो पेड़ को पकड़कर रोने लगे। यह सब हम शास्त्रों में पढ़ रहे हैं। बहुत खतरनाक दुश्मन निवास कर रहे हैं। चार युग की समाधि लगा लो, शरीर पर दीमक जमा लो, पर कुछ नहीं हो पायेगा। पार कैसे हों? सद्गुरु पार करेगा। कैसे करेगा? क्या ये फर्जी बातें हैं? नहीं।

जो साधन दुनिया आत्मा के कल्याण के लिए अपना रही है, वो पर्याप्त नहीं हैं। अंधकार की निवृत्ति के लिए केवल प्रकाश ही साधन है, फिर चाहे वो सूर्य का प्रकाश हो या कृत्रिम। ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता है। पोथियाँ पढ़ने से कुछ नहीं होगा।

**कबीर एको जानिया, तो जाना सब जान।
कबीर एक न जानिया, तो सब जाना जान अजान॥**

आत्मज्ञान से बड़ा कोई ज्ञान नहीं है। वशिष्ठ मुनि ने राम जी से कहा कि आत्मा को जानने के बाद इंसान संसार-सागर से पार हो जाता है। राम जी ने पूछा कि आत्मा का ऐसा क्या स्वरूप है कि केवल जानने मात्र से संसार सागर पार हो जाता है? वशिष्ठ जी ने कहा कि हे राम, तब संसार का भ्रम समाप्त हो जाता है। जिस तरह रस्सी को भ्रमवश साँप मानकर डरते हैं, पर जब यह पता चल जाता है कि यह रस्सी है तो फिर चाहकर भी रस्सी से डर नहीं लगता है। इस तरह आत्मा को जानने के बाद संसार का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि तब यह पता चल जाता है कि कोई भी सांसारिक चीज आत्मा के काम की नहीं है। तब चाहकर भी दुनिया को सच नहीं मान पायेगा। आप लहरसिंह को शामिलाल नहीं मान सकते हैं। क्योंकि जानते हैं कि यह लहरसिंह है। इस तरह आत्मा को जान लेंगे तो संसार को सच नहीं मान सकते हैं। क्योंकि भ्रम के कारण ही संसार सच लगता है और यह भ्रम आत्मा को जानने से समाप्त हो जाता है।

पार होने की युक्ति है—सद्गुरु। एक प्रोफेसर आया, कहा कि कोई जरूरत नहीं है गुरु की, बड़े सकेंडल सुनने को मिलते हैं। परमात्मा का नाम लेना है, ध्यान एकाग्र करना है, खुद कर लेंगे। मैंने कहा कि नहीं, जरूरत है। मैंने साहिब के उदाहरण दिये। प्रोफेसर ने कहा कि कबीर क्या पढ़ा था! हम पी.एच.डी हैं। मैंने कहा कि वेदों में भी लिखा है। प्रोफेसर ने कहा कि वो लोगों ने अपनी सुविधा के अनुसार बनाए। मैंने रामायण का उदाहरण दिया तो प्रोफेसर ने कहा कि तुलसीदास किस कॉलेज में पढ़ा था! मैंने देखा कि यह क्रांतिकारी है, यदि समझ जायेगा तो दूसरों को भी लायेगा। मैंने समझाया, कहा कि गुरु का काम केवल ज्ञान देना नहीं है, केवल ध्यान का सूत्र बताना नहीं है। गुरु मुक्त करेगा। मैंने समझा दिया। गुरु मोक्ष देता है, बंधन खोलता है।

है यहाँ सतगुरु बिना कोई मोक्ष का दाता नहीं॥

मन ने जकड़ा है। गुरु मन का भ्रम तोड़ देगा। गुरु अपने समान कर देगा।

गुरु को कीजे दण्डवत्, कोटि कोटि प्रणाम।

कीट न जाने भृंग को, करिले आप समान॥

पति-पत्नी की एक राय होती है। गुरु-शिष्य एक हो जाते हैं। एक कैसे हो गये? ध्यान आत्मा है। जिसमें आपका ध्यान है, उसी में लय हो जाते हैं। गुरु के पास यह अद्भुत ताकत है। गुरु क्या करता है? जो अपने को शरीर मानकर इस पूरे हजूम को चला रहा था, उसी तत्व को चेतन कर देता है। फिर अन्दर की लड़ाई अपने-आप समाप्त हो जाती है। हरेक मन के नशे में घूम रहा है। गुरु ऐसी बूटी पिलाता है कि मन का नशा तोड़ देता है। वो सुरति को चेतन कर देता है। वो कौवे से हंस कर देता है। सवाल उठा कि कैसे बदल दिया?

सतगुरु मोर रंगरेज, चुनरि मोरी रंग डारी॥

बदलाव आपमें दिख रहा होगा। आप पहले बेहोश थे, अब होश में आ गये। पहले आत्मतत्त्व गुम था, अब चेतन हो गया है। गुरु ने नामदान देकर आत्मा एकाग्र कर दी। मन और आत्मा अलग कर दी। पहले जो मन चाह रहा था, वो करवा रहा था। वो राजा था। अब फालतू हरकत नहीं कर पा रहा है। ज्ञानी बना दिया आपको। अब आप ठीक और गलत को समझ पा रहे हैं। यह काम गुरु ने किया। यह विवेक पहले न था। यह गुरु ने दिया। यह सब कृपा गुरु ने की। आप होश में हैं, आप शांति में हैं। आपको अपने में और दूसरों में ही जमीन-आसमान का अंतर नहीं लगता होगा, बल्कि आप अपनी पहली जिंदगी से नाम के बाद वाले जीवन को तौलोगे, तो भी यह विशाल अंतर दिखाई देगा।

यह सब साहिब तुम्हीं कीना। बरना मैं था परम मलीना॥

आप सुरक्षित भी हैं। यह भी गुरु ने किया। आपको भूत-प्रेत नहीं लग पायेंगे। मृत्यु भी नहीं आयेगी। एक बार यमदूतों ने यमराज से कहा कि साहिब के हंस ताकतवर हैं, उनपर हमारा जोर नहीं चल रहा है। यमदूत और भूत मौसेरे भाई हैं। नाम दान के बाद भूत-प्रेत ऐसे ही नहीं भागे हैं। यह ताकत खड़ी कर दी। मलेशिया की एक लड़की ने दिल्ली में आकर नाम लिया। बाद में वो अपने पति को लेकर अखनूर आई। वो



गुरु और सतगुरु एक बात नहीं

**पूरे संसार में गुरु और सतगुरु को एक ही सत्ता पर
स्थापित कर एक ही बात बोला जा रहा है।
आओ गुरु और सतगुरु के रहस्य को जाने**

“गुरु”	“सतगुरु”
1. गुरु रास्ता बताने वाला है।	1. सतगुरु धुर पहुँचान वाला है।
2. गुरु का नाम लिखने, पढ़ने, बोलने ओर जपने में आता है।	2. सतगुरु का नाम एक गुप्त पावर है जो जीवन भर आखरी सुआंस तक सेवक की सुरक्षा करती है यह गुप्त पावर जो लिखने पढ़ने बोलने में नहीं आता है।
3. गुरु शास्त्रों की शक्शी देकर अपना तत्व स्थापित करता है।	3. सतगुरु किसी शास्त्र का मुहताज नहीं है। वह अपने अनुभव से देखा हुआ तत्व स्थापित करता है।
4. गुरु केवल काया-नाम का गयाता है।	4. सतगुरु ही केवल विदेह-नाम का गयाता है।
5. काया का नाम मुर्दा नाम है जो देही को दिया जाता है।	5. सतगुरु का नाम जिन्दा नाम है। जो सुरति को दिया जाता है।
6. गुरु की पहुँच केवल दशम-द्वार तक है।	6. सतगुरु की पहुँच ग्यारहवें द्वार तक है।
7. गुरु भक्ति केवल नाम-कमाई पर केंद्रित है।	7. सतगुरु भक्ति पूरी तरह गुरु ‘कृपा’ पर केंद्रित है।

“गुरु”	“सतगुरु”
8. गुरु भक्ति केवल सगुण-निगुण दायरे तक ही सीमित है।	8. सतगुरु भक्ति की सीमा अनन्त तक है, जो सगुण-निगुण से भी आगे है।
9. गुरु तीन-लोक का ज्ञाता है।	9. सतगुरु चौथे-लोक का ज्ञाता है।
10. गुरु आत्मा का ज्ञान नहीं दे सकता।	10. सतगुरु आत्मा का समपूर्ण ज्ञान देता है।
11. गुरु मुक्ति नहीं दे सकता।	11. सतगुरु ही केवल पूर्ण-मुक्ति का दाता है।
12. गुरु मन-माया की सीमा में बँधा हुआ व्यक्तित्व है।	12. सतगुरु मन-माया की सीमा से ऊपर मुक्त एक अमर व्यक्ति तत्त्व है।
13. गुरु परमपुरुष का भेद नहीं जानता।	13. सतगुरु खुद परमपुरुष में मिला हुआ और उन्हीं का तदरूप है।
14. गुरु किसी भी जीव-आत्मा को भवसागर से पार करने की क्षमता नहीं रखता।	14. सतगुरु अपनी कृपा से किसी भी जीव-आत्मा को भवसागर से हमेशा के लिए पार करने की क्षमता रखता है।
15. गुरु की पहुँच केवल निराकार सत्ता (काल निरंजन) तक ही है।	15. सतगुरु की पहुँच सीधा परमपुरुष तक है।
16. गुरु द्वारा बताए हुए सभी देशों अथवा धुनों का जिकर किया जा सकता है।	16. सद्गुरु के सार शब्द अथवा अमर लोक का खुलासा नहीं किया जा सकता।

रुहानियत है मेरी पहचान

साहिब के हरेक शब्द में तकनीकी और वैज्ञानिक दोनों तरह से वज़न है। आज दुनिया में कुछ बीमारियाँ ज़्यादा तादाद में फैल रही हैं। लोगों का ध्यान नहीं है। एक बीमारी बहुत ज़्यादा फैल रही है। उसकी तरफ किसी का ध्यान नहीं है। वो है दिमागी नुक्स। लोग मनोवैज्ञानिक रूप से बहुत कमज़ोर होते जा रहे हैं। मनोविकार, पागलपन आदि बीमारियाँ ज़्यादा हो रही हैं। इसका एक कारण है कि शुद्ध भोजन नहीं मिल पा रहा है। फिर दूसरा बड़ा कारण है कि आज टैशन बहुत है दुनिया में।

जीवन के हर क्षेत्र में प्रतिस्पर्द्धा आ गयी है। घर में भी यह मिलती है। इंसान क्रूर होता जा रहा है। आज इंसान इंसान को पीड़ा देने में झिझक नहीं रहा है। मेरे पास दिमागी नुक्स वाले बहुत आते हैं। जब उनकी पृष्ठ-भूमि की तरफ चलता हूँ तो किसी के भाई ने ज़मीन हड़प ली होती है, किसी को किसी ने धोखा दिया होता है। इसकी पृष्ठ-भूमि यह होती है। इसका मतलब है कि चिंतन से टैशन होती है। वो उस धोखे पर चिंतन करता रहा है और परेशान होता रहा है।

अब सुमिरन इस टैशन की बेहतरीन दवा हुई कि नहीं! इस टैशन से दिमाग ही नहीं, हार्ट, किडनी आदि भी प्रभावित होते हैं। इन सब पर टैशन का बड़ा ख़तरनाक असर पड़ता है। जो ज़्यादा टैशन लेते हैं, उनकी किडनी ख़राब होने की अधिक संभावना रहती है।

चिंता ताकी कीजिये, जो अनहोनी हो जाय॥

मैं राय देता हूँ कि अगर पति टैशन देता है तो वो भी नहीं लेना। घर-परिवार के सदस्य दें तो भी नहीं लेना। यह बड़ी ज़हरीली चीज़ है।

यह नहीं लें। किसी की टैंशन नहीं लेना। ध्यान की प्रासंगिकता जिंदगी के हर मोड़ पर है। अमेरिका में अब एक चीज़ पर ज़ोर दे रहे हैं कि दिमाग को आराम दो; उससे बेकार के चिंतन नहीं हों। वो भावातीत समाधि कर रहे हैं यानी कुछ न सोचो, शांत हो जाओ। अपनी सोच को निगेटिव मत जाने दो।

मैं किसी आश्रम में जा रहा होता हूँ तो रास्ते में कोई कुछ बोलता है, कोई कुछ। कई लोग गालियाँ भी देकर जाते हैं, ताकि मैं चिंतन करूँ, परेशान होऊँ। मैं कहता हूँ कि अपनी टैंशन अपने पास रख। कभी ड्राइवर कहता है कि अभी इसे मज़ा चखाता हूँ। मैं उससे कहता हूँ कि क्या मज़ा चखाना, स्वभाव भी खराब होगा।

जब भी बदतमीज़ से विवाद बढ़ाओगे तो बदतमीज़ बनना पड़ेगा। कुछ कहेंगे तो अपशब्दों का प्रयोग करेंगे। अंतर यह रहेगा कि वो पहले बदतमीज़ बनेगा, आप बाद में। साहिब ने कितना अच्छा सिंद्धांत कहा—

भली बुरी सब की सुन लीजे, कर गुज़रान ग़रीबी में...

यह टैंशन बड़े तरीके से दी जाती है। कुछ घूरने से भी दे देंगे। अपने जीवन में शांत रहो। जितनी सोच निगेटिव होगी, आप कमज़ोर होते जायेंगे।

यदि कोई मेरे लिए कुछ कहता है तो आप भूल से भी टैंशन मत लें। पहली बात यह है कि मेरी किसी से स्पर्द्धा ही नहीं है। मेरा हौसला कैसा है! मैं नहीं सोच रहा हूँ कि किसी पंथ के पास ज़मीन कितनी है, जायदाद कितनी है। यह नहीं सोचना है। यह तो ईर्ष्या वाली बात है, हौसला पस्त करने वाली बात है। मेरी सोच है कि जो चीज़ हमारे पास है, वो संसार में किसी के पास नहीं है। इसलिए मैं अपने पंथ को संसार का सबसे बड़ा पंथ मान रहा हूँ।

आज चाहे अन्य पंथों में 88-80 लाख संगत हो, और हमारे नामी 5 लाख ही क्यों न हों, पर हमारे पंथ का किसी से मुकाबला नहीं है। यह सबसे महान पंथ है। मैंने 1970 में पहले आदमी को नाम दिया। उसका

नाम था नीर सिंह राठौर। वो राजस्थान का रहने वाला था। जब उसे नाम दिया तो कहा कि हमारा पंथ दुनिया का सबसे बड़ा पंथ है, क्योंकि इससे न्यारा मार्ग नहीं है। आप सोचें तो सही कि जब पहले आदमी को नाम दिया तो यह बात कही।

मैं किसी से रीस नहीं करता हूँ। वो खुद ही मेरी रीस कर रहे हैं। मैं जहाँ-जहाँ आश्रम बनवाता हूँ, वे पीछा करते हुए पहुँच जाते हैं। कहीं भी सत्संग करता हूँ तो वहाँ रुकावट भी देते हैं। जहाँ भी ओपन प्रोग्राम देता हूँ, वहाँ रुकावटें देते हैं। जिस तारीख को हमारा प्रोग्राम होना हो, वहाँ पहले ही टाँग अड़ा देते हैं, अपना प्रोग्राम दे देते हैं। क्योंकि सभी पंथों से लोग टूट-टूटकर हमारे पंथ में आ रहे हैं। इसलिए सभी बड़े-बड़े पंथों को परेशानी हो रही है। वो रीस कर रहे हैं। पर मेरी किसी से रीस ही नहीं है। वो तो भयभीत हैं कि हमारी संगत टूटकर दूसरे पंथ में जा रही है, इसलिए घबराकर हमारा पीछा कर रहे हैं। जो भयभीत है, वो ज्ञानी कैसे हो सकता है!

किसी ने मुझसे कहा कि एक ने राँजड़ी में एक क्नाल ज़मीन ली है। मैंने कहा कि यदि पूरी दुनिया भी ख़रीद लें, मुझे कोई फ़र्क नहीं पड़ने वाला है। मेरा हौसला कभी कम नहीं होता है।

कुछ देर पहले एक इण्डिया का लड़का क्रिकेट खेल रहा था। उसे आस्ट्रेलिया के किसी खिलाड़ी ने माँ की गाली दी। वो गुस्सा हुआ। इतने में दूसरी तरफ से सीनियर खिलाड़ी, जो उसके साथ खेल रहा था, उसके पास आया और कहा कि तुम इस तरफ ध्यान मत दो; ये तुम्हारी लय बिगाड़ना चाहते हैं। वो चौंके-छक्के लगा रहा था। यानी वो उसका ध्यान भंग करना चाह रहे थे, इसलिए यह हरकत कर रहे थे। इस तरह ये पाखण्डी मेरी लय को बिगाड़ना चाहते हैं ताकि मैं सत्संग छोड़कर इनके पीछे लग जाऊँ।

देख पराई चूपड़ी, मत ललचावे जीभ।

रूखी सूखी खाय के, ठंडा पानी पीव॥

यदि आप ऐसी प्रतिस्पर्द्धा में उलझ जायेंगे तो गलत हो जायेंगे। फिर आप धूर्त हो जायेंगे। फिर अपने हित के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। आपके स्वभाव पर सबकी नज़र है। जब भी मुकाबले पर आ जायेंगे तो धूर्त हो जायेंगे। स्वाभाव गलत हो जायेगा। ऐसे महात्मा के चेले भी सोचेंगे कि कैसा महात्मा है !

मैं ज़मीन ख़रीदना चाहता हूँ तो बड़े-2 पंथ हैं, जो आदमी को बहला-फुसला कर वो ज़मीन ख़रीद लेते हैं ताकि मैं न ले सकूँ। जब भी कोई मेरे पास आना चाहता है तो वे बहला-फुसला कर उलझा देते हैं। एक आदमी मेरे पास आया, कहा कि जब मैं यहाँ आ रहा था तो रास्ते में एक आदमी मिला। उसने पूछा कि कहाँ जा रहे हो? मैंने कहा कि राँजड़ी वाले साहिब के पास। वो बोला कि तुझे भूत लगा है क्या? वो तो भूतों वाला है।

यह क्या था! अब वो झूठ बोलकर धूर्त बना कि नहीं! वो धूर्त बना। हम झूठी बात नहीं बोल रहे हैं। जो है, वही बोल रहे हैं। कोई बिरादरी में, कोई रिश्तेदारी में, तो कोई अपने बच्चों को गद्दी दे रहा यह क्यों? निंदा निंदा सब कहे, निंदा न जाने कोय। जैसे को तैसा कहे, सो भी निंदा न होय॥

आप हमारे पंथ की बात देखो तो सभी बिरादरी वाले मिलेंगे। मैं चार पीढ़ियों की बात बताता हूँ। मेरे जो परदादा गुरु थे, वो सन्यासी थे। उनका कोई भी बेटा-बेटी नहीं था। उन्होंने महाराज स्वरूपानन्द जी, जो मेरे दादा गुरु थे, को गद्दी दी। वो क्षत्रिय थे। बरेली के राजा के बेटे थे वो। फिर उन्होंने मेरे गुरु जी को गद्दी दी, जो ब्राह्मण थे। फिर गुरु जी ने मुझे दी। यह है संत मत। जहाँ तक कि अपनी बिरादरी में भी नहीं दी।

अगर कोई झूठ की बात कहे तो वो है निंदा। वो है धूर्तपन। वो प्रोफेसर था, जिसे कहा कि तू कहाँ फँस गया है; वो तो भूत वाला है। लो, अब कर लो बात! यह था धूर्तपना। जब भी निंदक बनेंगे तो धूर्त हो जायेंगे। धीरे-धीरे फिर सभी दोष आपमें आ जायेंगे। हम ऐसा कुछ नहीं कह रहे हैं। दूसरा फिर किसी को रुकावट भी नहीं दे रहे हैं। पर वो हमें रुकावट दे रहे हैं। हम अपने में ही हैं। हम संतुष्ट हैं।

किसी भी महात्मा की पहचान ज़मीन-जायदाद नहीं है। यदि ऐसा है तो फिर मुकेश अंबानी और अनिल अंबानी के पास बहुत पैसा है। वो तो बहुत बड़े संत हुए फिर। नहीं, यह पहचान नहीं है महात्मा की। महात्मा की पहचान न पैसे से है, न संगत की संख्या से। उसकी पहचान उसकी संगत की रुहानियत से होती है।

मैं ज़मीन-जायदाद पर गर्व नहीं कर रहा हूँ। मैं संख्या का गर्व भी नहीं कर रहा हूँ। मैं कह रहा हूँ कि मेरे लोगों की रुहानियत को देखो। महात्मा की पहचान ही संगत की रुहानियत है। हमारा पंथ बड़ी तेज़ी से विकास कर रहा है। मैं यह नहीं सोच रहा हूँ कि सबसे अधिक आश्रम बना लूँ। फिर मैं लक्ष्य से भटक जाऊँगा। मेरी यह सोच भी नहीं है कि अधिक से अधिक को नाम दे दूँ। फिर गलत धारणा आ जायेगी। धूर्त हो जाऊँगा। मैं किसी से भयभीत नहीं हूँ। हमारा पंथ इतनी तेज़ी से विकास क्यों कर रहा है, यह बताता हूँ। और दूसरे पंथ वालों को परेशानी क्यों हो रही है, यह भी सुनना।

उदाहरण के लिए एक पागल को अखनूर में कुछ लोग लाए। वो जवान लड़का था। उसके दोनों हाथ एक ही हथकड़ी से बाँधे हुए थे। दुमाना पुलिस के एस.एच.ओ. ने उसे हथकड़ी लगाई थी। लोगों ने कहा कि राँजड़ी वाले महात्मा के पास ले जा रहे हैं। उसने कहा कि कहीं रास्ते में मार-पीट न करे, इसे हथकड़ी लगा देता हूँ। मैंने देखा तो सोचा कि यह बड़ी भूल की है इन्होंने। मैंने पूछा कि बाँधा क्यों है? खोले इसे। उसे नील पड़ गया था। इतना टाइट बाँधा हुआ था। कहा कि मारता है यह। मैंने उसे कहा कि यदि मारेगा तो मैं फौजी तरीके से पेश आऊँगा। वो कुछ भयभीत हुआ। मैंने कहा कि हथकड़ी खोलो। उन्होंने हथकड़ी खोली। उसे नीले निशान पड़ गये थे। मैंने कहा कि किसने बाँधा इसे? कुछ देर बाद तो उसके हाथ काटने पड़ जाने थे।

अब वो मुझे बोला कि मैं पागल नहीं हूँ। जैसे शराबी कहता है कि मुझे नशे में मत समझना। हर शराबी यह बोलेगा। फौज में भी शराबी

देखे। सब यही कहते हैं। इसका मतलब है कि उसे खुद भी शक है कि वो नशे में है। हर शराबी को जब सरूर चढ़ता है तो बोलता है। जो पागल है, वो यही कहेगा कि पागल मत समझना। आखिर तू क्यों बोल रहा है? यानी दिल में तुम्हारे शंका है।

तो वो बोला कि आप गुरु जी हैं। आप खटिया पर बैठे हैं; मैं खड़ा हूँ। देखो, मैं पागल नहीं हूँ। वो इन बातों से प्रमाण दे रहा था कि वो पागल नहीं है। क्या ये बातें हैं अपने को ठीक साबित करने वाली! मैंने उससे पूछा कि मारते क्यों हो? वो बोला कि ये कमरे में बंद कर देते हैं। पेशाब जाना होता है तो कहता हूँ कि खोलो। पर ये खोलते नहीं हैं। फिर मैं खिड़की तोड़कर बाहर आता हूँ तो मारता हूँ।

मैंने पागल की तरफ इतना ध्यान नहीं दिया। मैंने पागल के साथ आए हुआ की तरफ देखा। मैं पागल की माँ-बाप, भाई-बहन आदि को देखकर अंदाजा लगा लेता हूँ।

वो पागल अपनी सफ़ाई देते जा रहा था। वो कहने लगा कि कभी सोने को दिल नहीं करता है तो उठकर घूमने लगता हूँ। ये जबरन सोने के लिए कहते हैं तो मैं खींझकर मारता हूँ। एक आदमी कमेण्ट्री किये जा रहा था। मैंने उसे पहचाना; कहा कि तू फ़लाना तो नहीं! कहा—हाँ, मैं वही पागल हूँ। वो बोला कि मेरी दूर की रिश्तेदारी है। इन्होंने पूछा कि तू पागल था; कैसे ठीक हुआ? ये दूसरे पंथ के हैं, पर वहाँ ठीक नहीं हो पाए। मैंने इन्हें अपनी कहानी सुनाई और आपके पास ले आया। वो बोला कि मैं 400-450 आदमियों को नाम दिला चुका हूँ। उसने पूरा बताया कि फ़लाने-फ़लाने पंथ के फ़लाने-2 लोगों को नाम दिलाया है। वो बहुत बड़ा पागल था। वो कपड़े भी फाड़ देता था। जब वो ठीक हुआ तो आस-पास के गाँव में जिसके भी घर में थोड़ा भी नुक्स होता तो वो उसके पास आते और पूछते कि तू कैसे ठीक हुआ? वो उन्हें मेरे पास ले आता था। इस तरह शराबी, पागल बगैरह बड़ा काम किये। एक माई को हत्या का नुक्स था। जब वो नाम पाकर ठीक हुई तो उसने भी 300-400

लोगों को नाम दिलाया। एक पागल इतना बड़ा काम कर रहा है, यह है रुहानियत। फिर यूँ भी होता है। कुछ आड़े-टेढ़े लोग होते हैं, बदमाश टॉइप के होते हैं। नाम पाकर जब वो ठीक होते हैं तो लोग उनका स्वभाव देखकर अचरज में आ जाते हैं। यह असर पड़ा रहा है। फिर वो अपने बच्चों को भी लाते हैं, सोचते हैं कि हमारा बच्चा भी गलत दिशा में न जाए। इस तरह यह आध्यात्मिकता का असर पड़ा।

अरनिया में एक शराबी ने 1200 लोगों को नाम दिलाया। वो बोला कि मुझसे पुलिस वाले भी तंग थे। उसकी नाक में एक निशान था। मैंने पूछा कि यह कैसे हुआ? वो बोला कि थाने में ईंट से मेरी नाक रगड़वाई गयी, कहा गया कि कसम खाओ कि आगे से शराब नहीं पिऊँगा। पर मेरी आदत नहीं छूटी। मुझे कभी किसी पंथ में तो कभी किसी पंथ में ले जाते थे। पर मेरी आदत नहीं छूटी। जब आपसे नाम पाया तो मेरी आदत छूट गयी। फिर जो भी मुझसे पूछता कि यह आदत कैसे छूटी तो मैं आपके बारे में कहता। इस तरह मैंने 1200 लोगों को आपके पास पहुँचाया।

एक बार जब मक्खो मुझसे नाम लेने आया तो उसी के गाँव के लोगों ने मुझे चुपके से कहा कि इसे नाम नहीं देना, यह बहुत बड़ा गुण्डा है, इसने बड़े क्रत्ल किये हैं। यदि इसे नाम दिया तो शरीफ़ लोग आपके पास नहीं आयेंगे; इसकी शक्ल देखकर ही भाग जायेंगे। मैंने कहा कि यह बड़े काम का है; इसे पहले नाम देना है। मक्खो के सुधार को देखकर कई गुण्डों ने नाम लिया। घरवालों ने सोचा कि जिसने मक्खो जैसे गुण्डे को सुधार दिया, वो हमारे बच्चे को जरूर सुधार देगा। इस तरह कइयों ने इस कारण अपने बच्चों को मुझसे नाम दिलाया।

एक सरपंच रात-दिन मेरी निंदा करता था। रौजड़ी में आया तो एक ने कहा कि इसे नाम नहीं देना; यह बड़ी निंदा किया है आपकी। मैंने कहा कि जितना प्रचार यह करेगा, उतना कोई नहीं कर सकता है। जब यह नाम लेकर जायेगा तो अपने पन्ने पूरे खोलेगा। जितनी इसने निंदा की

है, उसने कई गुणा बढ़कर अब प्रचार में जुट जायेगा। यह सबको समझायेगा। फिर यह अधिक बोलेगा। और हुआ भी ऐसा।

इस तरह पहले तो बीमार, पागल आदि अटपटे लोग मेरे पास आ रहे थे। फिर जब प्रोग्राम टेलिकॉस्ट होने लगा तो बड़े-2 लोग भी आने लगे।

पटना से एक ने फ़ोन किया कि हम आपका प्रोग्राम टी.वी. पर देखते हैं, रॉजड़ी आना चाहते हैं, पर हमें जम्मू में आपका कोई आश्रम पता नहीं है। हम आपतक कैसे पहुँचें? मैंने कहा कि जब आओगे तो फ़ोन कर देना कि कौन सी गाड़ी से आ रहे हो। स्टेशन पर आपको हमारी गाड़ी खड़ी मिलेगी। पर ड्राइवर आपको नहीं जानता है, इसलिए आप देखना कि वहाँ जिस गाड़ी पर 'साहिब बंदगी' लिखा होगा, उसके पास आ जाना, ड्राइवर से कहना कि मैं पटना से आया हूँ। मैं उसे समझाकर भेजूँगा। वो आपको मेरे पास ले आयेगा।

वो रॉजड़ी में पहुँचा। पर मैं उसे जानता था। उसने बताया नहीं; वो तो नामी था। अपनी पत्नी को भी नाम दिलाने आया था। बंदा बड़ा ही दार्शनिक था। पर उसकी औरत बड़ी ही घमण्डी थी। वो बोली कि मैं रुहानियत में विश्वास नहीं रखती हूँ। मैं उसके शरीर के ढाँचे को देखकर जान गया कि यह औरत कैसी है? मुझे इसका भी ज्ञान है कि कोई सेक्स प्रधान है या नहीं। मैंने उसे समझाया कि तुम हिंदू संस्कृति की हो; यह जीवन आत्म-कल्याण के लिए मिला है। वो बोली कि मेरी अध्यात्म में रुचि नहीं है। आश्रम में अन्य लोग भी खड़े थे। वो बोली कि ये सब अनपढ़ लोग हैं। एक लड़की खड़ी थी, पूछा कि तुम कहाँ तक पढ़ी हो? उसने कहा कि मैं एम. ए. हूँ। लड़की बोली कि मैं डबल एम. ए. हूँ और एम. एड. भी हूँ। तुम क्या चीज़ हो! हम अपने को गुरु जी के आगे जीरो समझते हैं। आखिर तुम किस तरह के आदमी देखना चाहती हो! गुरु जी की सादगी को देखकर ही तो तू ऐसा कह रही है न। उनसे बात करके तो देखना, फिर पता चल जायेगा कि तू कितने पानी में है।

खैर, वो बोली कि नाम नहीं लेना है। उसका बंदा बोला कि नहीं लेना है तो मुझे तुम्हारी ज़रूरत नहीं है। तुम अपनी बेटी मुझे दे देना; मैं उसे पढ़ाऊँगा, भक्त बनाऊँगा। वो बड़ा दार्शनिक था। फिर वो आई, कहा कि मुझे नाम लेना है। मैंने कहा कि यहाँ कोई जबरदस्ती वाली बात नहीं है। पर वो बोली कि नाम दे दो।

...तो मैं कहना चाह रहा हूँ कि आपका बदलाव देखकर लोग मेरे पास आ रहे हैं। वो सोच रहे हैं कि यह आदमी तो अच्छा नहीं था, अब कैसे ठीक हो गया है!

एक कर्नल मेरे पास आया; वो बड़ी प्यारी बात बोला। मेरा नाई बालाकृष्णा उसे मेरे पास लाया। कर्नल साहब को थोड़ा दिमागी नुक्स था। वो सदन का था। सुबह-सुबह उठकर गाड़ी में आया तो साथ में पैसे भी नहीं लिए होंगे उसने। तो बालाकृष्णा ने अपनी जेब से 50 का नोट निकालकर कहा कि गुरु जी के चरण छुओ, बंदगी करो। मैंने कहा कि कोई बात नहीं है, रहने दो। बालाकृष्णा चला गया, पर वो मेरे पास बैठा था। वो बोला—महाराज! यह जो आपका आदमी है, इसमें बड़ी ताकतें हैं।

मैं कहना चाह रहा हूँ कि आपकी रुहानियत को देखकर ही लोग प्रभावित हो रहे हैं। आपकी रुहानियत झलकती है। जिसके पास मसल्स हैं, वो चाहे न दिखाए, पर कपड़े पहने हुए भी दिख जाते हैं। इस तरह आपकी रुहानियत छुपाने से भी नहीं छिपती है।

मैं ट्रेन में यात्रा के दौरान अपने साथ जो होता है, उसे कह देता हूँ कि किसी को मेरा परिचय नहीं देना है। क्योंकि मैं बोलता ही रहता हूँ। तो ट्रेन में मुझे आराम का मौका मिल जाता है। वहाँ मैं बुद्ध बनकर बैठ जाता हूँ। यदि कोई कहे कि भारत के प्रधानमंत्री गुलामनबी जी हैं तो भी चुप रहता हूँ, यह नहीं कहता हूँ कि मनमोहन जी हैं। जानता हूँ कि यदि बात की तो सिलसिला शुरू हो जायेगा।

एक बार एक प्रोफेसर मेरे पास की सीट में था। उसने मुझसे हठपूर्वक परिचय किया। मैंने पिण्डा छुड़ाने के लिए कहा कि फौजी हूँ। यह झूठ भी नहीं है। वो बोला कि फौजी होंगे, पर आप कुछ हैं। मैंने कहा कि मैं साधारण हूँ। प्रोफेसर मामूली नहीं था। वो विश्वविद्यालय में पढ़ाता था। वो बोला कि आप कोई महापुरुष हैं। मैंने कहा कि आप कैसे कह सकते हैं? वो बोला कि कल से बैठे हो; न कुछ खाया, न बात की। हम दो-2 मिनट बाद उतरकर कुछ खा रहे हैं। फिर आप ध्यान में भी बैठे। ट्रेन हिल रही है, पर आपको तो जैसे कुछ खबर ही नहीं थी। आप साधारण नहीं हैं। हम इधर-उधर लड़कियों की तरफ भी देख लेते हैं; ध्यान चला जाता है। पर आप हैं कि इतना कण्ट्रोल है कि इधर-उधर देखने वाली बात ही नहीं है। आपका कण्ट्रोल भी साधारण नहीं है। आप बड़े एकाग्र हैं, आप सौम्य हैं, आप बड़े गंभीर हैं। वो मनोविज्ञान का ही प्रोफेसर था। फिर उसने अपना परिचय भी दिया। मुझसे कहा कि आप बोलना क्यों नहीं चाह रहे हो, मुझे अपना परिचय दो। तब मैंने उसे अपना परिचय दिया और न बोलने का कारण भी बताया। फिर उसने मेरा पता लिया।

कहने का भाव है कि चाहे आप किसी को न बताएँ, पर दिखेगा। इसलिए हमारा पंथ बढ़ रहा है। जब भी नाम की ताकत आती है तो साथ में बहुत बड़ी रुहानियत आपमें आ जाती है। फिर आप बदल जाते हैं। फिर आपका कर्त्ता आपका साहिब हो जाता है।

न कुछ किया न कर सका, ना करने योग शरीर।

जो कुछ किया सो साहिब किया, भया कबीर कबीर॥



इसे कहते हैं रुहानियत

एक सन्यासी को अलंकार की ज़रूरत नहीं है। हमारी भक्ति आज एक सीमित दायरे में आ गयी है। लोगों ने भक्ति को समेट दिया है। लोग बाहरी दिखावे में उलझ गये हैं। लाइटें, सजावट आदि तक ही भक्ति सीमित होकर रह गयी है। बाहर में अच्छी सफ़ाई लोग कर रहे हैं, पर भीतर गंदगी इकट्ठा करते जा रहे हैं। इसलिए ज़रूरत है तो इस बात की कि अध्यात्म को नज़दीकी से समझें। हमें अध्यात्म का यथार्थ अनुकरण करना होगा। क्या यह है रुहानियत? धीरे-धीरे भक्ति भौतिकवाद में सिमटते जा रही है। रुहानियत इससे बहुत अलग-सी चीज़ है। वर्तमान दौर में हम सब अध्यात्म का माहौल देख रहे हैं। मेरा लक्ष्य किसी पर छींटाकशी करना नहीं है। पर—

निंदा निंदा सब कहे, निंदा न जाने कोय।

जैसे को तैसा कहे, सो फिर निंदा न होय॥

क्या आदमी का अलंकरण ही अध्यात्मवाद है। शुद्ध अध्यात्मवाद क्या है? जो वर्तमान में भक्ति का स्वरूप देख रहे हैं, वो अत्यन्त ही विकृत है, भक्ति के अपने स्वरूप से अलग है।

मुझे एक बार पत्रकार ने सवाल पूछा कि हम सब भक्ति के युग में जी रहे हैं। इंसान का ध्यान भक्ति की तरफ आ गया है। आखिर क्यों आज यह भक्ति की तरफ झुक गया है? मैंने कहा, नहीं! तुम्हारा पढ़ना थोड़ा गलत है। मैं महसूस करता हूँ कि आज इंसान जितना भक्ति से भटका है, उतना कभी नहीं भटका था। जितना समाज इस समय भक्ति से दूर है, इतना कभी दूर नहीं था। ऐसा क्या हुआ? क्यों चले गये भक्ति से दूर? पर वर्तमान में देखें तो लगता है कि भक्ति का माहौल आ गया। जैसे दीवाली का मौसम आता है तो बाजारों में सजावट दिखने लगती है।

राखी का त्यौहार आता है तो राखियों से दुकानें सजी हुई दिखती हैं, पतंगें आकाश में उड़ती हुई दिखती हैं। शादियों का मौसम आता है तो शादीहाल सजे हुए दिखते हैं। वर्तमान में एक चीज़ नज़र आ रही है कि पूरा माहौल भक्तिमय है। पर सच यह है कि हम भक्ति के माहौल में नहीं जी रहे हैं। क्योंकि अगर भक्ति में जी रहे होते तो समाज में भौतिक पदार्थों के प्रति आकर्षण नहीं होता; तब समाज में इतना छल, कपट, पाप नहीं होता। यह पाप कितना बढ़ गया है कि बाप बेटे का क्रत्ल करवा रहा है, बेटा बाप का। भाई भाई का क्रत्ल करवा रहा है।

एक बुजुर्ग मेरे पास आए, कहा कि बड़ी मुसीबत में हूँ। मैंने कहा—क्या बात है? बोले कि मेरा बेटा मेरी जान लेना चाहता है। मुझे सावधान रहना पड़ता है। वो बोले कि बेटा भी एक ही है।

अरे भाई, यदि ज़्यादा होते तो समझ में आता कि कहीं बाप दूसरों को ज़्यादा हिस्सा दे रहा है, उसके साथ कोई नाइंसाफी की जा रही है। पर बेटा भी एक ही था। उसी को मिलना था।

यानी हम पाप के वातावरण में जी रहे हैं। अतीत के पन्ने पलट कर देखें तो इतनी धोखाधड़ी, इतनी क्रूरता, इतनी अमानवीयता कभी नहीं थी, जितनी आज है। यदि हम भक्ति के माहौल में जी रहे होते तो ऐसा नहीं होता।

मैंने पूछा कि कुछ मतभेद है क्या? कहा—नहीं, एक ही तो है। मैंने पूछा कि फिर क्या बात है? वो बोला कि वो जल्दी-से-जल्दी मेरी जायदाद हथियाना चाह रहा है। वो इंतज़ार नहीं करना चाह रहा है।

आपको सुनकर हैरानी होगी कि एक भाई ने भाई को मृत घोषित करके उसकी ज़मीन पर कब्ज़ा कर लिया। उसे 6 साल हो गये कोर्ट के चक्कर काटते हुए। वो यह प्रूफ करने में लगा कि मैं जिंदा हूँ। कानूनी पेचीदगियाँ इतनी हैं कि क्या बात की जाए! मेरे विचार से कुछ क्षेत्र सामाजिक सेवा के लिए हैं, धन के लिए नहीं।

एक डॉ० डाक्टरी करता है तो पहले सोपान में उसे समझाया

जाता है कि यह पेशा धन के लिए नहीं है, समाज सेवा के लिए है। इस तरह वकालत करते हैं तो पहले पाठ में सिखाया जाता है कि यह पेशा लोगों को न्याय दिलाने के लिए है, धन कमाने के लिए नहीं है। पर हालात क्या है? वकीलों का पता होता है कि यह झूठा है, तो भी धन कमाने के लिए उसका केस ले लेते हैं। यहाँ तक कि किसी की भैंस को गाय सिद्ध करना हो तो भी कहते हैं कि घबरा मत, मैं सिद्ध कर दूँगा कि यह पहले गाय थी, भैंसों के साथ रहते-रहते यह भी धीरे-धीरे भैंस हो गयी है।

जब जिंदा आदमी यह साबित नहीं कर पा रहा है कि वो जिंदा है तो और क्या बात की जाए! जब वकील को यह पता चल जाए कि यह झूठा है तो उसका केस न ले। मैं कहना चाह रहा हूँ कि समाज में छल बढ़ता जा रहा है। हम कौन से भक्ति युग में जी रहे हैं? इतना छल क्यों आ गया? हम अध्यात्मवाद भूल गये हैं। वो तो सिखाता है— ‘आत्मवतनसर्वभूतेशू’ पहले सिखाया गया था कि मन, वचन और कर्म से किसी को भी पीड़ा नहीं देना।

एक को क्रल की सज़ा हुई—फाँसी। कुछ बड़े लोगों ने उसे उलझा दिया। जिसके क्रल के जुर्म में सज़ा हुई, वो जिंदा था। वो खुद कह रहा था कि मैं जिंदा हूँ। सब गाँव वाले भी जानते थे कि यह फ़लाने का बेटा है, जिंदा है। पर आप मानेंगे, उसे फाँसी की सज़ा हो गयी। यह कैसा न्याय है! वो खुद कह रहा था कि वो मरा नहीं है।

आखिर इंसान छल, कपट, बेइमानी में इतना दिमाग़ क्यों लगा रहा है? इस तरफ़ चलते हैं। कुछ कहते हैं कि बिहारी लोग चोर हैं। यह न कहा जाए। हमें गहराई में जाना होगा। वहाँ गरीब ज़्यादा हैं। जब पेट पालने में मुश्किल होती है तो जरिया ढूँढ़ते हैं। वो उनकी मजबूरी है। चोरी एक मजबूरी है। इसलिए हमारा सिद्धांत कहता है कि अपराधी को नहीं मिटाना है, अपराध को मिटाना है।

हमारे पूर्वज संतुष्ट थे। उन्हें शुद्ध जलवायु मिल रही थी। उनका

भोजन उत्तम था। उनकी सोच छोटी नहीं थी। आप दिल्ली चले जाएँ तो आपको घुटन होने लगेगी, टैंशन हो जायेगी। वातावरण अच्छा नहीं है। हमारे पूर्वजों को अच्छा वातावरण मिला था, इसलिए वे सेहतमंद भी थे। वे संतुष्ट भी थे। आज इंसान ने अपनी ज़रूरतों को बहुत अधिक बढ़ा लिया है। भौतिक आवश्यकताओं का विस्तार कर लिया है। इसका बड़ा नुकसान है। फ्रिज चाहिए, टी.वी. चाहिए, कूलर चाहिए, स्कूटर चाहिए। मैं आपको पीछे नहीं ले जाना चाहता हूँ। पर बताना चाहता हूँ कि पहले हमारे लोग बहुत ही आगे थे। वे हर क्षेत्र में बहुत आगे थे। चलो, आज टी.वी. पर सब जगह की ख़बर मिल जाती है। पर हस्तिनापुर में बैठकर संजय ने कुरुक्षेत्र का सारा हाल धृतराष्ट्र को सुनाया था। आज विज्ञान वहाँ तक नहीं पहुँच पाया है। हमारे पूर्वज ब्रह्माण्ड में कई-कई दिन यात्रा करते थे। आज इंसान नहीं जा पा रहा है। यह भौतिकवाद में उलझ गया है। सब कुछ चाहिए, इसलिए परेशानियों ने घेर लिया है। हम अंग्रेजों की नक़ल कर रहे हैं। मैं कहता हूँ कि उनका कुछ भी अनुकरणीय नहीं है। जितने भी अच्छे वैज्ञानिक हैं, सब हमारे देश के हैं। मुझे उनका पहनावा भी पसंद नहीं है। कोई ढंग नहीं, तौर-तरीका नहीं। निक्करें पहनकर उनकी लड़कियाँ घूमती हैं। यह काम तो आदिमानव पहले करता था। वो नंगे घूम रहा था। पर आज तो इंसान सभ्य हो गया है। अब तो ऐसा करना बेवकूफी ही होगी। खान-पान भी उनका सही नहीं है। उनका नाचना-गाना भी भद्दा-सा है। हमारे यहाँ 6 राग 36 रागिनियाँ हैं। हमारा संगीत बड़ा ही प्यारा है। मुझे तो उनका कुछ भी अनुकरणीय नहीं लग रहा है। वो शांति की तलाश में यहाँ आ रहे हैं और हम हैं कि वहाँ जाना चाहते हैं। हमारे राष्ट्र की सभी चीज़ें उत्तम हैं। मुझे उनका सब कुछ अटपटा लगा। हम काफ़ी सम्पन्न परम्परा से चलते आ रहे हैं।

...तो आज इंसान संतुष्ट नहीं है। वाशिंग मशीन भी चाहिए। स्त्रियों ने शारीरिक काम करना बंद कर दिया। उनका शरीर इस तरह का है कि थोड़ा शारीरिक श्रम चाहिए। पर ये चीज़ें इसमें खलल डालने वाली हैं।

कभी मैं कहता हूँ कि कभी बूढ़ा नहीं हूँगा तो कुछ लोग हँसते हैं। देखो—

पचास भये कमर भई टेढ़ी ॥

50 साल की उम्र में कमर टेढ़ी हो जाती है। मेरी उम्र 60 साल की हो गयी है, देख लो। मेरे साथ वाले दादे बन गये हैं, चश्मे लगाए घूम रहे हैं। जब किसी से कहता हूँ कि यह मेरे साथ पढ़ा हुआ है तो कहते हैं कि यह तो बूढ़ा है। क्योंकि उन्होंने आचार संहिता का उल्लंघन कर दिया। मैं अभी भी प्राकृतिक जीवन जी रहा हूँ।

तो इंसान भौतिकवाद में ज़्यादा उलझ गया। फिर उसके लिए धन चाहिए। अब धन कमाने के लिए छल, कपट, पाप सब कर रहा है। क्या इसे भक्ति की लहर कहेंगे! साहिब ने भक्ति पर बात की।

**भक्ति साहिब की बहुत बारीक है, शीश सोंपे बिना नाहिं पाई ॥
नाचना गाना ताल पीटना, रांडिया खेल है, भक्ति नाहिं ॥**

यह भक्ति नहीं है। फिर क्या है यह? यह सब एक व्यवसाय हो गया है। जीविका के लिए लोग इसे अपना रहे हैं। पहले भी यह सब था। इसलिए साहिब ने कहा—

पेट के कारण करे गुरुवाई। पीढ़ी सहित नरक में जाई ॥

भक्ति का पहनावा है—रुहानियत। क्या टीका लगाना रुहानियत है! क्या रँगा हुआ चोला पहनना रुहानियत है! क्या गले में मालाएँ पहनना रुहानियत है! नहीं, यह सब स्वाँग है। हम भौतिक चीज़ों में लिप्त होकर भक्ति का स्वाँग कर रहे हैं।

इंसानियत के लिए इंसान अपने लिए निर्धारित मापदण्डों पर चले। अगर कोई किसी को मारे तो कहते हैं कि इंसानियत नहीं है इसमें। इस तरह रुहानियत कहते हैं कि अपनी रुह यानी आत्मा के अनुकूल चले। अध्यात्म इसी को कहते हैं।

जगह-जगह बैनर लगे हुए मिलते हैं कि रुहानी सत्संग, अध्यात्मिक कथा। जब वहाँ पहुँचते हैं तो हिंसा की चीज़ें मिलती हैं। फ़लाने ने उठाई

तलवार और सबको मार दिया। यानी हमारे लिए परमात्मा और शक्तिशाली वही है जो एक बार में हज़ारों को मार दे।

एक बार रामायण सीरियल चल रहा था। कुछ बच्चे एक भाग नहीं देख सके तो दूसरे बच्चों से, जो देखकर आ रहे थे, पूछा कि आज क्या हुआ? वो बोले कि आज मज़ा नहीं आया। उन्होंने पूछा—क्यों? वो बोले—आज कोई मारकाट नहीं हुई। यानी हम सबकी सोच क्रूर हो चुकी है, हिंसक हो चुकी है।

नहीं, हमारे पूर्वज ऐसे नहीं थे। कहीं बाहरी आचार संहिता को अपनाकर हम नीचे की तरफ तो नहीं चल रहे हैं! यह कैसी रुहानियत है! नहीं, यह कहीं शैतानी सोच है।

विष अमृत रहत इक संग ॥

हमारे अंदर शैतानी ताकतें काम कर रही हैं। हमें उन्हें समझना होगा।

काया गढ़ जीतो मोरे भाई... ॥

इस आत्मक्षेत्र में बड़े-बड़े विरोधी बैठकर अपनी-अपनी ठकुराई कर रहे हैं। ये सब छल, कपट कहाँ से आई? आत्मा की तो मूल पाँच वृत्तियाँ हैं—अनश्वरता, चेतनता, अमलता, सहजता, आनन्दमयता। शास्त्रों में तो आत्मा का ऐसा स्वरूप दर्शाया गया। हम आत्मा से दूर चलते जा रहे हैं। इसलिए परेशान हैं। यह मानव आत्मा से बड़ी दूर चला गया है। मन-माया ने भौतिकवाद में इसे उलझा दिया है, इसलिए यह बड़ी दूर चला गया है आत्मा से। यह आत्मा बड़ी लाजवाब चीज़ है। बड़ी अनूठी है आत्मा।

पहली बात तो यह कि यह अमर है। किसी भी देश, काल में नष्ट नहीं होती है। इसलिए सबसे आत्मीय व्यवहार करना ही अध्यात्मवाद है। इसे कोई नष्ट नहीं कर सकता है। बड़ी प्यारी चीज़ है। इसका विघटन नहीं है। यह खण्डित नहीं होती, विभाजित नहीं होती, भेदी नहीं जा सकती और यह मन, बुद्धि, अहंकार आदि से दूर है। इस कारण से यह संकल्प-विकल्प से भी बहुत परे है।

यह अमर क्यों है ? पहली बात यह कि पंच भौतिक तत्वों का इसमें अभाव है। यह पंच भौतिक तत्वों में से परे है। तत्व तो एक-दूसरे का विनाश कर देते हैं। पर यह आत्मा अविनाशी है। फिर दूसरा यह परमात्मा का अंश है। एक बहुत बड़ी सत्ता इसमें समाहित है। इसलिए यह नाश को प्राप्त नहीं होती है। फिर यह आनन्दमयी भी है। इस शरीर की तो कुछ सीमाएँ हैं। भौतिकवाद है कि पंच भौतिक तत्व के इर्द-गिर्द मण्डराना, उन्हीं में लिस रहना। यह भौतिकवाद है। आत्मीय व्यवहार करके आत्मनिष्ठ रहना ही अध्यात्मवाद है। परमात्मा आनन्दस्वरूप है, इसलिए यह गुण इसमें भी है। इसे आनन्द कहीं से लेना नहीं है। पर मनुष्य शरीर से विषयानन्द ढूँढ़ रहा है। मुँह अच्छा खाना चाहता है। शरीर के किसी भी आनन्द अंग से जो आनन्द मिलता है, सब विषयानन्द है। भोजन का आनन्द है तो उसके लिए धन चाहिए। इस धन को कमाने के लिए मनुष्य छल कर रहा है।

पाँच सखी पिहु पिहु करत हैं, भोजन चाहत न्यारी न्यारी ॥

पाँचों आत्मा को परेशान कर रही हैं। शरीर भी बड़ा दुख दे रहा है।

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।

शीश दिये जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान ॥

यह शरीर विकारों से भरा है। विकार शरीर का स्वभाव है। आँखें बड़ी खतरनाक हैं। इसलिए साहिब ने कहा—

प्रथम चक्षु इंद्री को साधो ॥

देखो, कितनी नचा रही हैं आँखें! बेहद नचा रही हैं ये। कहीं कोई गंदी फिल्में देख रहा है। कुछ नाटक आदि देख रहे हैं। यह आँखों की खुराक है। बहुत परेशान कर रही हैं ये आँखें। ये सबसे खतरनाक हैं।

सुन्दर रूप चक्षु की पूजा ॥

स्त्री सावधान है। वो जानती है कि थोड़ी सी भी बेपर्दा हुई तो घर के पुरुष सदस्यों की नज़र उसपर पड़ेगी। यह हैं आँखें। रमणीय दृश्य देखना भी चक्षु की पूजा है।

जैसे चूहे के पिंजड़े के अन्दर जितनी भी तारें हैं, सब चूहे को उलझाने के लिए हैं। कोई भी तार चूहे के हित में नहीं है। जितनी भी इन्द्रियाँ हैं, सब आत्मदेव को उलझाने के लिए हैं। ऐसे ही नहीं कहा—

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।

शीश दिये जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान ॥

सच में ज़हरीला है यह शरीर। हरेक इन्द्री मतलब के लिए दौड़ रही है। भौरा नासिका इन्द्री का कायल है। वो कमल के फूल में बैठता है। उसकी महक में आनन्दित हो जाता है। शाम को संपुट बंद होता है। वो नशे में मस्त होता है, नाक इन्द्री का मज़ा ले रहा होता है, सोचता है कि अभी तो आकाश दिख रहा है, बाद में उड़ जाऊँगा। थोड़ी देर बाद फूल बंद हो जाता है और वो बीच में ही रह जाता है। आक्सीजन न मिल पाने के कारण वो मर जाता है। सुबह जब कमल खुलता है तो वो मरा हुआ मिलता है। इसी तरह मछली जिभ्या इन्द्री के स्वाद के कारण अपने प्राण गँवा देती है। शिकारी लोग काँटे में आटा या माँस लगाकर छोड़ते हैं। वो जानती है कि पकड़ने वाला खड़ा है। पर उसे नहीं मालूम है कि वो काँटा दो-मुँहा है। वो उसमें से निकल नहीं पाती है। इसलिए इंद्रियों के मजे से बचकर निकल जाना होगा। साहिब कह रहे हैं—

सकल पसारा मेट कर, मन पवना कर एक।

ऊँची तानो सुरति को, वहाँ देखो पुरुष अलेख ॥

इन्हीं इंद्रियों के लिए मनुष्य को छल, कपट का सहारा लेना पड़ता है।

तो इसी तरह विषय-विकार का कायल हाथी है। वो बड़ा कामुक है। जंगल में एक विशाल खड्डा खोदकर शिकारी लोग उसपर लकड़ियाँ आदि डालकर ढक देते हैं। कुछ दूर एक पालतू हथिनी बाँध देते हैं। हाथी कामुक है; हथिनी को देखकर आता है और वहाँ गिर पड़ता है। 10-15 दिन वहाँ पड़ा रहने देते हैं। फिर महावत पेड़ की टहनी के सहारे नीचे उसकी पीठ पर जाकर बैठता है, उसे कुछ भोजन खिलाकर

वश में कर लेता है। फिर उसे बाहर निकालकर पालतू बना लेते हैं। इस तरह कान इंद्री के मजे के कारण मृगा अपनी जान गँवा देता है। वो शिकारी के संगीत में इतना मस्त हो जाता है कि कुछ भी सुध नहीं रहती है उसे और उसके फैलाए हुए जाल में फँसकर गिर पड़ता है। फिर आँख इंद्री के मजे के कारण पतंगा अपनी जान गँवा देता है। दीपक की लौ की तरफ चला जाता है। उसे आग लगती है तो गिर पड़ता है। पर कितना मूर्ख है कि फिर वहीं जाता है और अंत में जल मरता है। वो जानता है कि वहाँ जाने से आग लगी थी। पर फिर भी जाता है। यह था माया का मज़ा।

चश्म दिल से देख तू, क्या क्या तमाशे हो रहे... ॥

इस तरह एक इंद्री का कायल होने से जान चली गयी। आदमी की तो पाँचों इंद्रियाँ तेज़ हैं। ये पाँचों का कायल है, पाँचों का मज़ा ढूँढ़ रहा है। भँवरा बेचारा एक ही इंद्री का मज़ा ढूँढ़ता है। मछली केवल जीभ का मज़ा ढूँढ़ती है। पर इंसान को फँसाने के लिए बड़ी चीज़ें हैं।

प्रभु ने पाँच चोर दिये साथ ॥

इन्हीं की तृप्ति के लिए मनुष्य दौड़ रहा है। साहिब की वाणी में कितना वज़न मिल रहा है।

इक दुई होवे तो समझाऊँ, सबही भुलाना पेट के धंधा ॥

बस, मुझे पड़ौस की बात याद आती है। एक आदमी के बड़े बच्चे थे। सब खराब थे; एक भी अच्छा नहीं था। वो कहता था कि पूरी बेल ही खराब है; एक खराब होता तो ठिकाने लगाता। तो साहिब भी यही कह रहे हैं—

इक दुई होवे उन्हें समझाऊँ.... ॥

दुनिया को देखें तो इसी शरीर की आवश्यकता की पूर्ति के लिए सब लगे हुए हैं। इसलिए सब अधर्म की तरफ चल रहे हैं। सब नौकरी के लिए परेशान हैं, एक-दूसरे को देखकर ईर्ष्या कर रहे हैं। मैं कहीं से भी परेशान नहीं होता हूँ। किसी बाबा, महात्मा को देखकर, किसी के

वैभव को देखकर ईर्ष्या नहीं करता हूँ। आपको भी हिदायत देता हूँ। यह दो कौड़ी का बना देगी आपको। जब भी इंसान ईर्ष्या करता है तो बड़ा छोटा हो जाता है। ऐसे में वो दोष बोलने लगता है। जब नहीं है तो भी झूठ बोलने लगता है, धूर्त बन जाता है। अशांति आ जाती है, भय आ जाता है। इसके निदान के लिए कितना सुंदर कहा—

जो तुझको काँटे बोवे, उसको बो तू फूल।

उसको उसके काँटे मिलेंगे, तुझको तेरे फूल॥

गुस्सा करीब-करीब सब करते हैं। इससे बड़ा नुकसान है। गुस्से के समय दिमाग की कोशिकाएँ जहरीला पदार्थ निकालती हैं। वो हृदय और पेट में पहुँचता है। उसकी सेहत कभी ठीक नहीं रह सकती है। इससे बचो। ध्यान ही न दो। गुस्से की शुरूआत अक्ल से है और इसका अंत बड़ा खतरनाक होता है। शुरूआत ऐसे होती है कि ऐसे करना चाहिए था, वैसे करना चाहिए था। पर अंत में लात-घूँसों पर बात आ जाती है। तब इस दिमाग के अंदर की क्रूर कोशिकाएँ जगती हैं। तब मारने में मज़ा आता है। दिल करता है कि हाथ पाँव तोड़ दें। विचार वाली कोशिकाएँ परेशान हो जाती हैं। जैसे शरीफ़ आदमी शरारती की संगत के कारण परेशान हो जाता है, इस तरह वो कोशिकाएँ परेशान होती हैं। इसलिए विचार की ताक़त कम हो जाती है। क्रोध से शक्ल भी ख़राब हो जाती है। तब आँखें तरेरता है, चेहरे को सकोड़ता है। कभी गुस्सा करके शीशे में अपने को देख लेना कि कैसे लग रहे हो। पता चल जायेगा। जैसे गाली देकर आए, वैसे शीशे में करके देख लेना। यह गुस्सा बड़ा खूँख़ार है। इससे दूसरे को पीड़ा मिलेगी। गुस्सा दो लोगों को नहीं आ सकता है। एक ज्ञानी को और दूसरा पागल को। ज्ञानी विचार कर लेता है। गुस्से में गाली बकता है, लातें चलाता है। ये हरकतें अच्छी नहीं हैं।

क्रोध किये गत मुक्ति न होय॥

शरीर का सिस्टम कुछ ऐसा है कि कुछ कोशिकाएँ प्रसन्नता के समय जाग्रत होती हैं। खुश होने से बड़ा लाभ है। इसलिए अपने मूड को

हर समय गुस्से वाला नहीं रखना। मेरे पास बच्चे आते हैं। माँ-बाप नाम रखवाने आते हैं। पहले तो वे मुझे देखकर डर जाते हैं। शायद अजनबी लगता हूँ या फिर मेरी मूँछों को देख डर जाते होंगे। फिर मैं मुस्कराता हूँ तो वे मुस्कराकर जवाब देते हैं।

आत्मा आनन्दमयी है; गुस्सा आत्मा में नहीं है। यह शरीर की त्रुटियाँ हैं। इसकी शुरुआत तो बड़ी अक्लमंदी से होती है, पर परणीति बड़ी जाहिल है। अक्लमंदी यह है कि अक्ल को गुस्से में न लगाकर अक्ल से गुस्से को रोकना।

आत्मा में विकार नहीं है। शरीर में तो गंदगी है। हरेक अंग-प्रतिअंग से गंदगी निकल रही है। मुख आदि से गंदगी, नासिका से भी गंदगी, आँखों से भी गंदगी। मृत इंसान से जो बदबू निकलती है, वो बदबू मरे हुए चूहे से भी नहीं आती है। एक सैनिक की लाश 4 दिन बाद मिली तो उठा रहे थे। तब उँगलियाँ भी ज़िस्म में जा रही थीं। अब लाश तो उठानी थी; फायरिंग में मारा गया था; क्रियाकर्म करना था। इतनी बदबू थी कि कहने की बात नहीं। 7 दिन तक साबुन से रगड़-2 कर हाथ धोने पर भी बदबू नहीं गयी। इंसान के ज़िस्म में इतनी बदबू है। यह पूरा ज़िस्म ही बदबू और विकार से भरा है। पर आत्मा में कोई बदबू नहीं है, कोई विकार नहीं है। फिर यह सहज है। यह धोखा नहीं जानती है। यह स्वाभाविक है।

बच्चे क्यों अच्छे हैं? जब तक वो बच्चा है तो आत्मा का व्यवहार करता है। क्योंकि शांतिर दिमाग़ विकसित नहीं हुआ होता है। जब बड़ा हो जाता है तो दिमाग़ काम करने लगता है। यानी स्वाभाविक हम सहज हैं। आत्मा स्वाभाविक रूप से सहज है। यह मन, बुद्धि आदि की संगत से खराब हो गयी है। यह बड़ी निर्मल है। एक पल भी यह अचेत नहीं है।

आत्मा निर्मल है। यह सबमें एक जैसी है। मैंने खूँखार लोगों से भी व्यवहार करके देखा तो उनमें भी प्रेम मिला। यानी एक चीज़ सबमें

मिल रही है। आत्मा तो सबमें मिल रही है। मन की वृत्तियाँ भी सबमें मिल रही हैं। कुछ मूल चीजें सबमें मिल रही हैं। शरीर में निवास करने वाली हरेक आत्मा शरीर से प्रेम करती है। नेवला भी अपनी सुरक्षा चाहता है। हम सबके साथ विरोधी ताकतें भी निवास कर रही हैं। वो विनाश की तरफ खींच कर ले चल रही हैं।

अनहद लूट होत घट भीतर, घट का मरम न जाना ॥

आत्मा परमानन्दमयी है। क्यों? परमात्मा का अंश होने से जो चीजें उसमें हैं, इस आत्मा में भी हैं।

सो माया बश भयो गुसाईं ।

अब माया के वश में आकर उनके इशारे पर चलने लगी।

जड़ चेतन है ग्रंथ पड़ गयी ॥

आत्मा ने सच में अपने को शरीर मानना शुरू कर दिया। यहीं से समस्या आ गयी। कोई भी प्राणी शरीर नहीं छोड़ना चाह रहा है। साँप कठिन योनि में है। पर वो भी जीना चाहता है। मिटाने के लिए जाओ तो फौरन अपनी सुरक्षा के लिए उठता है। यानी किसी भी शरीर में हो आत्मा, उससे प्रेम कर रही है। कीट-पतंग आदि निकृष्ट योनियाँ हैं। यदि मच्छर को मारने जाओ तो फौरन उड़ जाता है। जिस भी शरीर में आत्मा है, उससे बहुत प्रेम कर रही है, उसे छोड़ना नहीं चाहती है।

आत्मा शरीर से प्रेम क्यों कर रही है? इसने शरीर को वरण किया; वहीं से दुख शुरू हुए। आखिर प्रेम क्यों कर रही है? एक आनन्द के लिए। दुनिया का हरेक आदमी मजे की तलाश में जी रहा है। शरीर में कौन-सा आनन्द है!

काँचे कुम्भ न पानी ठहरे ॥

थोड़ी ठंड लगे तो बीमार, थोड़ी गर्मी लगी तो बीमार।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, रुई लपेटी आग है ॥

दुनिया का मजा। थोड़ा इस मजे को देखते हैं। इसे पाने के लिए ही तो शरीर को नहीं छोड़ना चाहती है आत्मा। धारणा बनी हुई है कि

इससे आनन्द मिलेगा। यह कैसे मिल रहा है? पहला मज्जा जीभ का। पर कई पदार्थ खाने पर भी तृप्ति नहीं हो रही है। जीभ कुछ देर तक इसका अनुभव कर रही है। अब इस मज्जे को लेने के लिए पदार्थ चाहिए। 6 रस हैं। अगर मीठा चाह रही है तो आम चाहिए, मिठाई चाहिए। यह डिमाण्ड करती है। कभी कहते हैं कि नमकीन खाना है। इसके लिए आदमी विनाश मचा देता है। पर एक पल का आनन्द है। फिर इन पदार्थों के लिए विनाश करता है। घर में कुछ ठीक न बना हो तो उठाकर फेंक देता है। यह स्वाद बड़ा ही जालिम है।

जिभ्या स्वाद के कारने, नर कीन्हे बहुत उपाय ॥

क्या इसके द्वारा प्राप्त आनन्द हमेशा हमारे साथ रहेगा! इसका वजूद कितना है! यह बेहद ख़राब आनन्द है। इसी के लिए तो दुनिया में मस्त है इंसान। फिर दूसरा है शिश्न का आनन्द। संभोग का मज्जा। बस इस पर इतना कहना चाहूँगा कि विवेकानन्द ने कहा है कि जो पदार्थ शरीर से निकलकर इतना आनन्द दे रहा है, वो शरीर में रहकर कितना आनन्द देगा! वो सन्यासी थे। एक ही बात कहकर बात ख़त्म कर दी। जो भी भोजन खा रहे हैं, उससे रस बनता है। रस से रक्त, रक्त से मंजा और मंजा से अस्थियाँ और फिर उनसे वीर्य बनता है। इस आनन्द का अंत विनाश है। अति भोगों से अति रोगों की उत्पत्ति होती है। वेद में कहा कि 25 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन करो। क्यों? 4 भागों में जीवन को बाँटा। ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, बानप्रस्त और सन्यास। 25 साल तक इसलिए ब्रह्मचर्य कि हड्डियाँ मजबूत रहेंगी। हड्डियों का फ्यूल है—वीर्य। हड्डियाँ वीर्य की ताक़त से पनपती हैं। उन्हें वीर्य की शक्ति चाहिए। इसलिए 25 साल से पहले विषयों में उलझ गये तो अस्थियाँ कमज़ोर होंगी, जीवन रोगयुक्त होगा। शरीर में रोगों से लड़ाई की जो ताक़त है, वो भोगी में बहुत कम हो जाती है। इसलिए असाध्य रोगों की उत्पत्ति होती है। टी.बी की बीमारी अति भोगों से हो जाती है। बार-बार विकारों की तरफ़ दौड़ता फिरेगा तो संचय नहीं हो पायेगा। मेरा विचार है कि

बीमारी शरीर का स्वभाव नहीं है। यह बुलाई जाती है। पर आज नहीं कह सकते हैं, क्योंकि भोजन अच्छा नहीं खा रहे हैं। इंसान के अंदर हरेक बीमारी से लड़ने की ताकत है। पर इसे विषयों में उलझकर कम नहीं करना है। पशु लोग विषयी नहीं होते हैं। वो तो केवल सृजन के लिए करते हैं। इंसान स्वाद के लिए करता है।

कामी कुत्ता तीस दिन, अन्तर होत उदास।

कामी नर कुत्ता सदा, छह ऋतु बारह मास॥

इसलिए उन्हें बीमारियाँ कम हैं। वो लड़ रहे हैं। यह ताकत वीर्य से मिलती है। इसका मतलब है कि यह विषय-विकार घाटे का सौदा है। इसलिए वेद कह रहा है कि 25 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन करो। यदि नहीं रह सकते तो 25 साल के बाद विवाह करके देख लो कि क्या है गृहस्थ आश्रम। पर यह शरीर की मूल डिमाण्ड बनी है। इसके वशीभूत होकर आदमी कुछ भी कर लेता है। वेद आगे कह रहा है कि 50 साल के बाद बानप्रस्थ हो जाओ। फिर विषय भूलकर भी नहीं करना है। क्योंकि स्त्रियों का मासिक भी तब बंद हो जाता है। उसका नारीत्व समाप्त हो जाता है। पशु बड़े शिष्ट हैं इस मामले में। यदि बैल को पता चल जाए कि गाय बंझा हो गयी है तो पास नहीं जाता है। बड़े स्वाभाविक हैं वे। केवल इंसान स्वाद के लिए विषय-विकारों में उलझा है। तो वेद कह रहा है कि फिर दूध और पानी की तरह रहना दोनों, विषय-भोग नहीं करना। फिर रक्त भी अधिक नहीं बनता है। उतना ही बनता है जितना शरीर को चाहिए। फिर वीर्य को सृजित करने के लिए खून ज्यादा नहीं बन पाता है। तो इंसान यह सब आनन्द के लिए कर रहा है। पर यह स्थायी आनन्द नहीं है। इसमें अधिक उलझने से क्रोध भी अधिक आ जायेगा। क्योंकि दिमाग की कुछ कोशिकाओं को वीर्य से ताकत मिलती है, वो ठीक काम नहीं कर पाती हैं, जिस्से गुस्सा अधिक आता है, कण्ट्रोल भी नहीं हो पाता। विषय-विकारों वाला उदास रहेगा। बच्चे देखो, कितने मस्त हैं, खेलते रहते हैं। आदमी इस घाटे को समझ नहीं पा रहा है। यह मज्जा नहीं है, सज़ा है।

फिर तीसरा कानों का मज्जा मिलता है। लोग संगीत-डाँस में मस्त हैं। मुझे कुछ भी मज्जा नहीं दिख रहा है इसमें। चौथा खुशबू का मज्जा हा। पर सबसे जालिम मुँह का मज्जा है। फिर शिश्न है। जीभ कभी खट्टा, कभी मीठा। फिर इनकी प्राप्ति के लिए धन चाहिए तो पाप कर रहा है और पाप के प्रायश्चित के लिए जन्म-मरण को धारण करना पड़ता है। इसलिए साहिब समझा रहे हैं—

इंद्री पसारा रोक ले, सब सुख तेरे पास ॥

इंद्रियों का मज्जा कहाँ से मिलता है? यह आत्मा का आनन्द है। आलू में मज्जा नहीं है। मज्जा आत्मा का है। किसी दिन आलू खाना और ध्यान कहीं और रखना तो देख लेना कि मज्जा नहीं आयेगा। इसका मतलब है कि इनकी अनुभूति हमारी आत्मा करती है। मन के द्वारा यह अनुभूति करती है। यही जकड़ा है। पर यह मज्जा है ध्यान में। सुरति जहाँ हैं वहाँ मज्जा आयेगा। यह ध्यान का मज्जा है। मन छल करके वहाँ दिखाता है। वो बताता है कि यह मज्जा वहाँ आया। पर था नहीं। बचपन से ही तो इंसान मज्जा ढूँढ़ता है। कभी माँ में, कभी खेल में। जहाँ-जहाँ सुरति लगती है, वहीं से मज्जा आने लगता है। इसलिए इस सुरति को एकाग्र कर लेना।

सुरति संभाले काज है, तू मत भरम भुलाय।

मन सय्याद मनसा लहर में, बहत कतहू न जाय ॥

इंसान ने सुरति को गलत जगह पर लगा दिया है। इसे गुरु में लगाना है। वास्तव में जिसकी जहाँ पर सुरति है, वही उसका गुरु है।

कामी का गुरु कामिनी, लोभी का गुरु दाम।

कबीर का गुरु संत है, संतों का गुरु नाम ॥

जो कामी है, उसका ध्यान हर समय स्त्री में ही लगा रहता है। उसका वही गुरु है। कुछ का ध्यान गाने सुनने में होता है। आजकल तो मोबाइल में गाने भराते हैं। कभी किसी को फ़ोन करता हूँ तो गाना बजता है। यानी यह है कान का मज्जा। यह दिलाता है मज्जा।

यह संसार फूल सेमर का, चोंच लगे पछताना है ॥
 यह संसार झाड़ू और झाँखड़, आग लगे झरि जाना है ॥
 रहना नहीं देश बीराना है ॥

कितने चेतावनी भरे शब्द हैं !

एक बार किसी ने कहा कि जब भी मिर्ची खाता हूँ तो बीमार हो जाता हूँ। पर 10-15 दिन में खानी ही है।

जब पता है कि मिर्ची खाने से बीमार होना है तो भी क्यों खानी ! यह है मज़ा। पूरी जिंदगी आत्मा आनन्द की तलाश में भटकती रहती है। अब स्त्री में मज़ा नहीं है। जहाँ ध्यान लगेगा, वहीं मज़ा है। मन जहाँ चाह रहा है, वहीं लगा रहा है।

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग खोजे बन माहिं।

ऐसे घट घट साईया, मूरख जानत नाहिं ॥

वो महक चुभने वाली नहीं है। वो बूटी-बूटी सूँघता फिरता है। वो परेशान रहता है, सोचता है कि कहाँ है खुशबू! इस तरह आनन्द आत्मा में है, पर इंसान उसे भौतिक पदार्थों में खोज रहा है।

मुझे आत्मा का बोध दोनों तरह से है। मैं आत्मा में रहता हूँ। मैं परम-लोक में भी आत्मा कैसी है, जानता हूँ। मैं स्वर्ग-लोक में भी आत्मा कैसी है, जानता हूँ। मैं शरीर में भी आत्मा कैसे रह रही है, जानता हूँ।

शरीर में रहकर अध्यात्मिक व्यवहार करना बड़ा कठिन है। पर मुझे इसका भी ज्ञान है। बहुत कम को होता है यह। मैं कभी भोजन नहीं खाता था। मन कहता था कि खाओ, नहीं तो कमज़ोर हो जाओगे। मैं कहता था कि आत्मा कभी कमज़ोर होती है क्या! ओ मूर्ख मन! आत्मा को भोजन से क्या लेना! मैं नहीं खाता था। एक आदमी खा रहा था तो मैंने सोचा कि इसे भी ज्ञान देता हूँ। मैंने कहा कि यह तुम नहीं खा रहे हो, कोई और खा रहा है। तुझे इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। वो बड़ी ज़ोर से हँसा। वो बोला कि यह पागल हो गया है। मैंने सोचा, अरे! गहराई में दुनिया वालों से बात नहीं करनी है।

तो इस शरीर में रहकर आत्मनिष्ठ रहना जाना। एक ने मेरा पाँव उठाया, कहा कि कितने गंदे हो; देखो, कितनी मैल जमी हुई है। मैंने देखा तो सच में मैल थी। यानी मैं अपने शरीर को भी नहीं देखता था। मैं किसी से बात भी नहीं करता था। पर शरीर में रहकर आत्मा का धर्म पालन करना बड़ा कठिन है।

आत्मा शरीर से छूटकर अमर लोक गयी तो ठीक है। पर मैं शरीर में रहकर शरीर का धर्म पालन नहीं किया। स्वाँस भी नहीं लेता था मैं। शीश से सवा हाथ ऊपर रहता था। एक पल भी नहीं सोता था। सोना-जागना तो मन की वृत्ति है।

मैं नहीं जानता था कि मेरे कितने भाई हैं, मेरी माँ की शक्ल क्या है। मुझे सुबह-शाम का भी मालूम नहीं था। मैं मन को सोचने का टाइम ही नहीं देता था। यह मेरा घमण्ड नहीं है कि मैं मन का मास्टर हूँ।

जब एक बार मैंने अपनी सारी जायदाद भाईयों के नाम की तो माँ ने कहा कि तू अपने पास भी कुछ रख। वो बोली कि इनके तो बच्चे हैं, बुढ़ापे में देख लेंगे। पर तेरा तो पैसा ही काम आयेगा। यानी माँ खैर चाहती थी। मैंने कहा—एक बात सुनो, मैं कभी बूढ़ा नहीं हूँगा।

मैं कहता हूँ कि अगर यह शरीर नहीं रहा तो भी आपसे मुलाकात करने आ जाऊँगा। जब भी चाहे, मिल लूँगा। पर इसे छोड़ने के बाद एक साकार आधार देकर जाना चाहता हूँ। वो दूर की बात है।

गुरु समाना शिष्य में, शिष्य लिया कर नेह।

बिलगाए बिलगे नहीं, एक रूप दो देह॥

यह साकार आधार समझा लेता है। वो अच्छा आधार है।

...तो मैंने कहा कि मैं बूढ़ा नहीं होना है। अब वो कहती है कि देखो, कहता था कि बूढ़ा नहीं होना है, बाल भी सफ़ेद हो रहे हैं, दाढ़ी भी सफ़ेद हो रही है। पर सामने नहीं कहती है।

मेरी बात में गहराई है। यह तो शरीर की स्थिति है। मैं जानता हूँ कि बिना आय के कैसे जीना है। हर आदमी बुढ़ापे के लिए बचाकर रखता है, क्योंकि बच्चों का कोई भरोसा नहीं है। पर मैं नहीं रखता हूँ।

जब कोई माँगता है तो पास खड़े किसी नामी से उधार लेकर भी देना पड़ता है। फिर बाद में लौटा देता हूँ। यह बीमारी है। जंगल से चले जाना, कोई डर नहीं लगेगा। लेकिन लाख रुपये जेब में होंगे तो डरते चलोगे, इधर-उधर देखते चलोगे। रेलगाड़ी में सफ़र के दौरान भी परेशान रहेंगे। मेरी जेब में कभी-कभी लाख रुपया भी होता है; कोई डाल देता है। पर मैं सोचता ही नहीं हूँ। ज्यादा-से-ज्यादा क्या होगा, कोई निकालकर ले जायेगा। मुझे चिंता नहीं है, ले जाए। पर मैं लापरवाह भी नहीं हूँ।

आए का हर्ष नहीं, नहीं गये का गुन्ना ॥

108 के 108 आश्रम चले जाएँ तो भी चिंता नहीं है। उदास नहीं होने वाला हूँ। किसी चीज़ से परेशान नहीं होता हूँ। जब कुछ नहीं होगा तो इस शरीर को नचाऊँगा। मेरी उम्र के नज़दीक कोई भी इसे ऐसे नचा नहीं पायेगा। छोटे बच्चे भी इतना नहीं नचा पायेंगे। आपने मेरी चाल ढीली नहीं देखी होगी, कभी थका नहीं देखा होगा। क्योंकि मैं इस घोड़े के ऊपर बैठा हूँ। आप खुद घोड़ा बन गये हैं। मैं इसे घोड़ा बनाकर चल रहा हूँ। जहाँ भी कहूँ, यह चल पड़ता है।

मुझे कभी भोजन मिलता है तो कभी नहीं भी मिलता है। ‘**कभी घी घना, कभी रूखा चना तो कभी वो भी मना**’ वाली बात है। मुझे आपकी समस्या के कारण खाना पड़ता है। जब नहीं मिलता तो मैं अपनी जगह पर बैठ जाता हूँ, आत्मनिष्ठ हो जाता हूँ। कभी जब यहाँ से जाना होता है तो नहीं मिल पाता है। ट्रेन के लिए भी नहीं डाला होता है। जो होता है वो ठीक नहीं होता है। मैं बड़ी सफ़ाई से रहता हूँ। हरेक के हाथ का भी नहीं खाता हूँ। तो ट्रेन में स्टेशन पर उतरकर नहीं खाता हूँ। लोग आलू-पूड़ी खा रहे होते हैं। मैं देखता हूँ कि हज़ारों मक्खियाँ रेहड़ी के नीचे रखे आलुओं पर बैठ रही होती हैं। जब कम पड़ता है तो वो उसी में से निकालकर डाले जा रहे होते हैं। मिर्ची अच्छी डाली होती है। लोगों को भूख लगी होती है। वो खा लेते हैं, सफ़ाई की तरफ किसी का ध्यान ही नहीं है। मैं सफ़ाई से रहता हूँ। यदि कोई एक करोड़ रुपया दे तो भी ऐसा खाना नहीं खाऊँगा। कई बार तो दो-दो दिन तक भूखे रहना पड़ता

है। पर मैं परेशान कभी नहीं होता हूँ।

एक समय था जब हज़ारों लोग पीछे लगे; हमला किया। पर मैं परेशान नहीं हुआ। मैं अपनी जगह पर बैठ गया। ज़्यादा-से-ज़्यादा यह शरीर चला जायेगा। यह तो मन की हवस है, जिसके कारण इसे नित्य मान रहे हो।

...तो शरीर बनकर कभी नहीं जीना। रुहानियत यह है। मैं तो सोता भी नहीं था, इसे ख़ूब नचाता था। मैं जानता हूँ कि इससे भी ऊपर उठकर कैसे रहना होता है। जब यह कहेगा कि अब बस हो गयी, कुछ नहीं कर सकते तो छोड़ दूँगा।

दुनिया रुहानियत कह रही है, पर जानती नहीं है कि रुहानियत क्या चीज़ होती है। पूरी दुनिया शरीर की गुलाम है। मैं कभी शरीर का फैशन नहीं करता हूँ। कभी पाउडर नहीं लगाया, कभी क्रीम नहीं लगाई। छोटा भाई एक दिन बोला कि हम चार आदमी के बीच जाते हैं तो ठीक बनकर जाते हैं। पर आप हैं कि इतनी संगत है, कोई ध्यान नहीं है इस ओर। कभी आपके बाल उठे हुए होते हैं, कभी कुछ। यानी शरीर का अहंकार नहीं रखता हूँ। यह मेरा विषय नहीं है।

आपके जहाँ बहरूपिए आते हैं। एक बहरूपिए ने मुझसे नज़र मिलाई। उसने साँप लटकाया हुआ था, जटाएँ भी बढ़ाई हुई थीं। मैंने नज़रों में कहा कि वाह! क्या मेकअप है। वो भी जान गया कि क्या कहा। वो शिवजी बना हुआ था। वो कहीं जा रहा था। जहाँ भी ये जाते हैं, वहाँ जाकर उसी के अनुसार व्यवहार करते हैं। यदि शिवजी बने हैं तो शिवजी की तरह व्यवहार करेंगे। पर यदि किसी के गाँव का कोई बहरूपिया बना हो तो वो देखते ही पहले यही कहता है कि यह तो मोहनलाल है, शिवजी बना हुआ है। यानी पहले आपको मोहनलाल ही दिखा, बाद में शिवजी का वेश दिखा। मैं भी जब आपको देखता हूँ तो पहले आत्मा ही दिखाई देती है, बाद में देखता हूँ कि फ़लाना है।

...तो मैंने मन को सोचने नहीं दिया। सोच ही स्टॉप कर दी। माँ की शक्ल कैसी है, यह भी भुला दी। 10 साल के बाद अपने घर गया

तो घर वाले पहचान नहीं पा रहे थे। क्योंकि किसी ने अफ़वाह उड़ा दी थी कि आपका बेटा 71 की लड़ाई में मारा गया है। तो माता-पिता आपस में बात कर रहे थे कि यह हमारा बेटा नहीं है; कोई और हमें तसल्ली देने के लिए हमारा बेटा बनकर आया है। मुझे उन्हें यह प्रूफ करने में कि आपका ही बेटा हूँ, काफ़ी दिन लग गये। मैं माँ को बचपन की बातें याद दिलाई कि देखो, बचपन में एक बार ऐसा हुआ था, वैसा हुआ था। तब उन्हें यकीन हुआ। नहीं तो वे मुझसे कहते भी थे कि सच बताना कि तू हमारा ही बेटा है न।

वो भी मैं गुरु जी के कहने पर चला गया था। वो कहने लगे कि तुम्हारी माँ रोती है, उसकी सुरति मेरे पास आती है, तुम अपने घर जाओ। मैंने तब विचार भी नहीं किया। गुरु जी का शब्द था; झोला उठाया और चल पड़ा।

जब भी हम आत्मा के नज़दीक जाने की कोशिश करते हैं तो यह मन रुकावट डालता है। जब नाम मिल जाता है तो शरीर की तरफ नहीं चल पाता है। आपकी अब एक ही धुन रह गयी होगी कि सत्लोक जाना है। आपमें मोह-ममता भी नहीं रह गयी होगी। आपसे घर-परिवार भी छुड़ा लेना था, पर तब मेरे पास कोई और आना नहीं था। नाम देकर यदि अपने पास ही रख लेता तो बाकी कोई नहीं पहुँच पाता। इसलिए थोड़ी छूट दी। पर आपका कहीं पर भी दिल नहीं लग रहा होगा। यह इसलिए कि आसक्ति तोड़ दी। कोई भी चीज़ इतनी प्रिय लगे कि उसके बिना जी न सके तो यह है आसक्ति। यह तोड़ दी। एक माँ का जवान बेटा चला गया। वो कुछ देर सेवा किया और फिर फौज में भर्ती हो गया। 4-5 साल पहले भूकंप आया, जिसमें 26 जवान मोर्चे में ही दबकर मर गये। भूकंप से एक बहुत बड़ी चट्टान हिली और लुढ़कती हुई वहाँ ऊपर गिर पड़ी। मोर्चा ज़मीन के अंदर बना था। वो 250 कुण्टल का पत्थर था। उनकी अस्थियाँ भी नहीं मिली। मैंने माँ को तसल्ली दी। वो कहने लगी कि रिश्तेदार तंग कर रहे हैं; कह रहे हैं कि चाँदी की अस्थियाँ बनाओ। मैंने कहा कि चिंता मत करो; हमारी यात्रा चल रही है, तुम भी चलो। कह

देना सबको कि क्रियाकर्म करने गयी थी। झूठ भी नहीं है। वहाँ भण्डारा है; उसमें कुछ डाल देना। माई चल पड़ी। बाद में मुझे कहा कि मैं तो भूल ही गयी हूँ कि मेरा बेटा मरा भी है। कभी-कभी मेरा दिल करता है कि रोऊँ, पर मैं चाहकर भी रो नहीं पाती हूँ। कोई ताक़त अंदर से रोने ही नहीं देती है। आसक्ति टूटी कि नहीं! इसलिए आपको दुनिया में कहीं अब मज़ा नहीं आने वाला है। यह रुह ही तो दुनिया में दौड़ रही है। इसे जगा दिया। अब मेरे पास ही मज़ा आयेगा। चाहे भाग जाओ, पर वापिस मेरे पास ही आना पड़ेगा। मज़ा कहीं और नहीं मिलने वाला है। मेरे पास ही मिलेगा।

सतगुरु दीन दयाल जी, तुम लग मेरी दौड़।

जैसे काग जहाज़ पर, सूझत कतहूँ न ठौर॥

जैसे समुद्री जहाज़ का कौआ उड़कर चला जाता है, पर उसे कहीं ठिकाना समुद्र में नहीं मिल पाता है, घूमकर फिर जहाज़ पर आकर बैठ जाता है। ऐसे ही आपको कहीं और मज़ा नहीं मिल पायेगा।

धर्मदास ने साहिब से बड़े सवाल किये हैं। साहिब ने उन्हें बताया कि पहली बार मैं 100 साल धरती पर रहकर गया। तब एक भी जीव साथ लेकर नहीं जा सका। साहिब ने पूछा कि एक भी जीव साथ नहीं लाए, क्या बात है? मैंने कहा कि जिसे सुबह समझाता हूँ, शाम को भुला देता है; जिसे शाम को समझाता हूँ, वो सुबह भुला देता है। मन अन्दर बैठकर समझो भटका रहा है। मैंने सोचा कि इसे मिटाकर सबको ले आता हूँ, पर आपने कहा कि ऐसा नहीं करना है। तब साहिब ने गुप्त वस्तु दी; कहा—एक चीज़ देता हूँ, ये लो।

तब धर्मदास ने कहा कि मुझे भी वो दो, जिससे मन का जोर ही नहीं चलेगा। कबीर साहिब ने कहा कि वो चीज़ मैं तुम्हें दे चुका हूँ। जो आपको लगता है कि कोई एक ताक़त साथ में है, जो रक्षा करती चल रही है, वो यह गुप्त वस्तु है। हर किताब के अंत में जो लिखा है— ‘**जो वस्तु मेरे पास है, वो ब्रह्माण्ड में कहीं नहीं है**’, ऐसे ही नहीं है। यह वही गुप्त वस्तु है। यदि यह नहीं हो तो मन आपको पल-पल गिराएगा।

वो चीज़ सुरक्षा कर रही है।

अब आपकी आसक्ति नहीं रही। आपकी सुरति को जगा दिया। आपको काल से सुरक्षित कर दिया, मन से सुरक्षित कर दिया। यह है रुहानियत। अब आप पाप नहीं कर रहे हैं। गलती हो रही है तो दुबारा न करने की प्रतिज्ञा कर रहे हैं। रुहानियत यह है कि सभी पापों को छोड़कर अच्छे हो रहे हैं। हेरक नामी अपने को निराला मानता होगा। पक्का। साहिब ने कहा भी है—

करूँ जगत से न्यार ॥

कहीं आप महसूस करते हैं कि सबसे अलग हैं। यदि विरोध हो रहा है तो वो लाज़िमी है। उसमें वज़न है। जितने भी पंथ और मत-मतान्तर हैं, सब काल की भक्ति कर रहे हैं। यह मान्यता बड़ी अलग है। शास्त्रों को उठाएँ तो सभी में 3 लोक की बात है। कुछ तो उनकी बात भी स्वीकार नहीं करते हैं। इस तीन लोक में 14 भुवन हैं। इंसान का ज़िस्म सूक्ष्म स्नायुमण्डल से सुसज्जित है। बड़ी गहरी कोशिकाएँ हैं। उन्हीं का यह खेल है। आपको याद है कि वहाँ आपका घर है, वहाँ आपके माता-पिता हैं, यह भी कोशिकाओं का खेल है। आप तत्संग में पहुँचते हैं; उसमें जो-जो काम होता है, वो सब कोशिकाओं का खेल है। जब कुछ गहरी कोशिकाएँ खुलती हैं तो आंतरिक जगत दिखने लगता है। हमारे पूर्वजों को टैंशन नहीं थी। फल-फूल अच्छे मिल जाते थे। जीवन-यापन के लिए जिद्दोजहद नहीं करनी पड़ रही थी, इसलिए कोई ठगी, बेईमानी भी नहीं कर रहे थे। आज बच्चों को बुरी आदतें पड़ रही हैं। बच्चे चोरी कर रहे हैं, नशा कर रहे हैं, ठगी कर रहे हैं, व्यवचार कर रहे हैं, पाप कर्म कर रहे हैं। आज हमारा धर्म, हमारे लोग पाप की तरफ चल पड़े हैं।

इंसान ने अपनी ज़रूरतों को बढ़ा लिया। तनखाह चाहे 5 हज़ार हैं, पर बच्चों के लिए अच्छा टी.वी. भी ख़रीदना पड़ता है। बच्चे स्कूटर बगैरह की डिमाण्ड भी रखते हैं। लड़की है तो स्कूटी चाहिए। लड़का है तो मोटरसाइक़ल। 5 हज़ार में क्या-क्या हो! किस्तों पर ले लेता है।

पर देते-देते परेशान हो जाता है। अब मजबूरी में घूस लेता है। वातावरण भी अच्छा नहीं रहा है। उसका भी बहुत प्रभाव पड़ रहा है। सोच ही अच्छी नहीं रह गयी है। जालंधर जाता हूँ तो खाने की इच्छा नहीं होती है। क्योंकि वहाँ आश्रम के पास काफ़ी देर से कचरा पड़ा है; कोई उठाने नहीं आया। फिर एक जूतों की फैक्टरी भी पास में है, इसलिए वातावरण दूषित है। एक जवान लड़का वहाँ रखा है। वो कहता है कि मुझे भूख नहीं लगती है। वो वहाँ रहना नहीं चाहता है।

पहले अच्छा जलवायु मिल रहा था। 15-15 दिन तक बरसात होती थी। लोग प्रार्थना करते थे कि बरसात रुके। आजकल तो आसमान में झाँकना पड़ता है कि कब बरसात हो। तो चोरियाँ बढ़ गयीं, क्योंकि हमने अपनी ज़रूरतों को बढ़ा लिया। अब दूषित भोजन खा रहे हैं। ताक़त नहीं रह गयी है तो स्त्री कहती है कि वाशिंग मशीन ला दो। हाथ-पाँव नहीं हिलाना चाहते हैं। पर मैं आज भी प्रासंगिक जीवन जीता हूँ। मैं राँजड़ी में इसलिए रुकना चाहता हूँ, क्योंकि वहाँ का वातावरण अच्छा है; इतनी गाड़ियाँ भी नहीं चल रही हैं।

...तो ज़रूरतें बढ़ जाने से घूस लेने पर भी मजबूर हो गया इंसान। हम आपको राय देते हैं कि पैसे के पीछे मत दौड़ना। यदि दौड़ोगे तो पापी हो जाओगे। तो पूर्वजों के पास समय था। वे अन्दर में योग करके दिव्य शक्तियों को जगा रहे थे। हमारे बुजुर्ग लोग महात्मा का जीवन जी रहे थे; उन्हें टेंशन नहीं थी।

अब हम निंदा नहीं कर रहे हैं। पर वो जहाँ तक पहुँचे, वो बोल रहे हैं। वो अध्यात्म में अंत तक नहीं पहुँचे थे। यदि बाप अनपढ़ है तो बोल दो कि अनपढ़ है; क्या है। यह निंदा थोड़ा है। फौज में माँ को अपना वारिस बनाकर पैसा जमा करवाया। बाद में 25 साल बाद जब निकालना था तो वो साइन भूल गयी थी। छोटा-सा नाम 'देवी' नहीं लिख पा रही थी। वो साइन मैच नहीं हो पा रहे थे तो बैंक मैनेजर पैसा नहीं दे रहा था। मैं समझाया भी कि देखो, वो अनपढ़ है, 25 साल के बाद वो भूल गयी है। पर फोटो भी लगी है। तो आखिर में मैंने कहा कि दो शब्द नहीं लिख सकती हो! वो बोली कि किसी ने पढ़ाया ही नहीं। तब

मैंने अपने भतीजे को कहा कि इसे थोड़ा सिखाओ। वो कुछ दिन साइन करना सिखाता रहा। तब जाकर वो लिख पाई। आज तो पढ़ाई इतनी तेज़ हो गयी है कि पहले कुछ भी नहीं थी। आज तो आप कम्प्यूटर पर बहुत कुछ देख सकते हैं। कौन-सी ट्रेन लेट है या कौन-सी टाइम से चल रही है, यह भी देख सकते हैं। अपनी सीट बुक हो गयी है या नहीं, यह भी देख सकते हैं। मैं दिल्ली से आ रहा था तो कुछ लड़के आए, कहा—उठ जाओ, यह हमारी सीट है। वे उतावले थे। मैंने कहा—यह मेरी सीट है। कहा—लिस्ट देखकर आओ। मैंने कहा कि ट्रेन चलने ही वाली है, मैंने नीचे रहना है क्या! वो 5-6 थे। मैंने कहा कि टी.टी. को आने दो। वो बोले कि ठीक है, पर तब तक सीट तो खाली करो। मैंने कहा कि मेरी टिकट पक्की (कन्फ़र्म) है। वो बोले कि ये देखो टिकट। मैंने भी कहा कि यह देखो टिकट। फिर मैंने मोबाइल से देखा कि यह यह मेरी ही सीट है। उनकी कोई और थी। मैंने कहा—ये देखो, यह मेरी सीट है। वो चले गये। वो भूल गये अपनी सीट। बाद में आए और अंकल कहकर पूछने लगे कि हमारी सीट कहाँ पर है? मैंने कहा कि तुम्हारे पास मोबाइल नहीं है क्या? कहा—देखना नहीं आता है। यानी मोबाइल में बड़े सिस्टम हैं, पर सब नहीं जानते हैं। आज पढ़ाई बड़ी बदल चुकी है।

...तो हमारे पूर्वजों ने अत्यन्त गहरी कोशिकाओं को जगाया। कुछ भी गलत नहीं कहा। कपिल मुनि ने सांख्य योग में जो अपने अनुभव लिखे, कुछ भी गलत नहीं था। क्या वो झूठे लोग थे? नहीं। झूठ तो अभी शुरू हुआ है। चोरी भी अभी शुरू हुई है। जम्मू कश्मीर के लोग चोर नहीं थे। पर अब चोरी बढ़ गयी है। बच्चे नशा करने लगे। ज़रूरतें बढ़ गयीं; माता-पिता उनकी ज़रूरतों को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। हमारे आश्रमों से लड़के लोहे के फूल तक काटकर ले जाते हैं। ज़रूरतों बढ़ा लेने से पाप की तरफ हो गया इंसान। इसलिए शांति नहीं रह गयी है, छल-कपट बढ़ गया है। इसलिए इमानदारी पर चलने के लिए जिंदगी की शैली को उत्तम करना होगा, रहन-सहन को ठीक करना होगा।



साहिब वाणी

चल हंसा सुख सागर घाट

चल हंसा सुख सागर घाट, तेरी हंसनी बैठी चितवे बाट ॥
सार शब्द में जाय देख, अति सुंदर तहाँ अति बिसेष ॥
तहवाँ अमृत मोती होय, हंसा भोजन करे सोय ॥
अमृत नीर जो पिये अघाय, जन्म जन्म की तृषा जाय ॥
आवागमन से होय निचिंत, शब्द माहिं खेलै बसंत ॥
जहाँ अनहद बाजा अति सुहाय, सदा बसंत जहाँ अछै छाय ॥
षोडश सूरज के प्रमान, हंस एक उजियार जान ॥
श्वेत दीप जगमग प्रकाश, पोहप बसंत की महके बास ॥
श्वेत सिंगासन छत्र श्वेत, श्वेत वृक्ष तर हंस श्वेत ॥
केह विध वा घर हंस जाय, सार शब्द में जाय समाय ॥
शब्द चाल चले शब्द माहिं, ले पहुँचे धर्मदास बाँह ॥
शब्द बिना नहिं पावे बाट, शब्द चूक परे औघट घाट ॥
चूके शब्द जम पकर लेय, फिर नर हम को दोष देय ॥
अपनी चूक जो समुझे नाहीं, ते नर अँध बिगोय जाहिं ॥
चेतहू तौ नर खोज लेहु, नातो फिर फिर धरहू देहु ॥
सत्य शब्द की कर प्रतीत, भवजल ते चलो निहचे जीत ॥
जो कोई चाल नर चूक जाय, सत्य अमी में ध्यान लगाय ॥
साँची सुर्त जो संग होय, सो सुखसागर में पहुँचाय देय ॥
ऐसी रहन जे हंस होय, सो सुखसागर देखै सोय ॥
अमृत भोजन करे आहार, काया धर मैं कहौ बिचार ॥

देखो दीपन दीपन हंस, तब नर को सब जाय संस।
 सागर सुंदर अति गंभीर, सतसुकृत निर्मल शरीर।
 हंस हंस जरे पोहप अनन्त, कहैं कबीर तहाँ करो बसंत॥

साहिब कह रहे हैं कि हे हंस, सार शब्द में बैठकर सुख के सागर अमर लोक में चलो, जहाँ पर हंस परम पुरुष का प्रकाश रूपी अमृत भोजन और अमृत जल ग्रहण करता है, जिससे जन्मों-जन्मों की भूख और प्यास मिट जाती है और फिर संसार में जन्म नहीं होता। वहाँ एक हंस का प्रकाश 16 सूर्यों के समान है। वहाँ ऐसा लगता है मानो श्वेत दीपक का श्वेत प्रकाश हो रहा है। कोई दीपक नहीं है, पर सांसारिक भाव में समझा रहे हैं। मानो बसंत के फूलों की महक छाई हुई है। मानो श्वेत सिंहासन पर श्वेत छत्र बना है। कोई सिंहासन नहीं है, पर सांसारिक भाव में बता रहे हैं। मानो श्वेत वृक्ष लगे हैं और जिसपर श्वेत हंस बैठे हैं। उस अमर लोक में हंसा सार शब्द में समाकर ही जाता है। सार शब्द के बिना वो रास्ता नहीं मिल पाता है और काल पकड़कर ले जाता है और फिर मनुष्य मुझे दोष देता है। यदि मनुष्य शरीर पाकर सार शब्द को नहीं पहचानता है तो फिर संसार में शरीर धारण करना पड़ता है, पर जो सार शब्द को पहचान कर उससे प्रीत करता है, वो निश्चय ही संसार सागर को जीत कर चल पड़ता है। जो सुरति को सार शब्द में समाए रखता है, वो अमर लोक रूपी सुख सागर में पहुँच जाता है। फिर वहाँ अमृत भोजन करता है। इसलिए हे हंस, उस सुख के सागर में चलो।

तीन लोक से भिन्न साज

तीन लोक से भिन्न साज, परम पुरुष जहाँ साध समाज॥
 कोट सूर्य जहाँ उगे अपार, बिरला जन कोई पावे पार॥
 कोटि सरस्वती करहिं राग, कोट इंद्र मुनि गावन लाग।
 कोट कृष्ण कर जोरे हाथ, कोट विष्णु जहाँ नावे माथ॥
 कोट ब्रह्मा जहाँ पढ़े पुरान, कोट संभु जहाँ धरे ध्यान।

अखंड प्रकाश जहाँ होत अथाह, बिरला साधू पावे थाह ॥
 नाना बिध जहाँ करहिं केल, ते वह लोके रहै मैल ॥
 प्रथम बसंत एक राग कीन्ह, सतगुरु शब्द उचार लीन्ह ॥
 गन गंधर्व मुनि गने न जाय, तहाँ प्रभु आप बिराजे आय ॥
 कहैं कबीर ऐसो मत हमार, पतित उधारण नाम सार ॥

तीन लोक से परे परम पुरुष का धाम है, जहाँ संतजन रहते हैं। वहाँ ऐसा प्रकाश है कि लगता है मानो करोड़ों सूर्य एक साथ उगे हुए हों, पर कोई बिरला ही उसको जान सकता है। करोड़ों सरस्वती मानो धुन छेड़ रही हों और करोड़ों इंद्र और मुनिजन उस धुन पर गा रहे हों। करोड़ों कृष्ण और विष्णु मानो हाथ जोड़ और माथ नवा रहे हों। करोड़ों ब्रह्मा मानो पुराण पढ़ रहे हों और करोड़ों शिव ध्यान लगाए हुए हों। वहाँ अखंड और अथाह प्रकाश है। कोई बिरला साधु ही उसकी थाह पा सकता है। साहिब कह रहे हैं कि मेरा तो ऐसा विचार है कि पतितों का भी उद्धार करने वाला सार नाम ही वहाँ पहुँचा सकता है।

ऐसे जात है दुर्लभ शरीर

ऐसे जात है दुर्लभ शरीर, भजु अचिंत जेह लागो तीर ॥
 गये बेनु बलि गये कंस, दुरजोधन के बुड़ो बंश ॥
 पृथू गये पृथ्वी के राव, त्रिविक्रम गये रहे न ठाव ॥
 छौ चकवे मंडलीक चार, अजहूँ नर देखो विचार ॥
 हनुमत कश्यप जनक बा, ये सब छेकल यम के द्वार ॥
 गोपीचंद भल कीन्ह जोग, ऐसे रावण मारे करत भोग ॥
 ऐसे जात देख नर सबही जान, कहैं कबीर भजो सत्यनाम ॥

यह दुर्लभ मानव-तन बेकार में जा रहा है, इससे प्रभु का भजन कर ले, जिससे पार उतरा जा सके। राजा बलि, राजा कंस, राजा दुर्योधन, राजा पृथु, राजा विक्रमादित्य, रावण, गोपीचंद आदि और भी बड़े-बड़े राजा लोग भी वंश सहित नष्ट हो गये। फिर यह साधारण मनुष्य विचार

क्यों नहीं करता है। ऐसे सबको एक दिन जाने वाला समझकर हे मनुष्य, सत्यनाम का सुमिरन करो।

छाँड़ो पाखंड मानु बात

हमारे कहल को ना पतियार, आप बूड़े नर सलिल धार॥
अंधा कहे अंधा पतियाय, जस विस्वा के लगन धराय।
ये कहिये ऐ अबूझ, खसम ठाढ ढिग नाही सूझ॥
आपन आपन धरहि मान, झूठा पूजहिं साँच जान।
झूठा कबहुँ न करिहैं काज, हौ बरजों तू सुन निलाज॥
छाँड़ो पाखंड मानु बात, ना तो परिहो जम के घात।
कहैं कबीर नर कियो न खोज, भटक मूवै जस बन के रोज॥

यह अंधा इंसान मेरी बात को समझता नहीं है और भवसागर की धारा में बहता चला जाता है। यदि कोई ज्ञान की आँखों से हीन मनुष्य केवल पढ़ी-सुनी बातों को बताता है तो यह विश्वास कर लेता है, पर मैं जो कह रहा हूँ कि तेरा परमात्मा तेरे पास में है तो यह मेरी बात का विश्वास नहीं करता है और बाहरी भक्तियों में लगा हुआ है। मैं कहता हूँ कि यदि मेरी बात को न माना, बाहरी पाखंड को छोड़कर अन्दर में खोज न की तो काल के हाथ में ही पड़ोगे।

कहैं कबीर सतगुरु के दया बिन

हमारे को खेले ऐसी होरी, जामे आवागमन लागी डोरी॥
श्रवण न सुनो नैन नहिं देखो, पिया पिय लागी लौरी॥
पंथ निहारत जनम सिरानो, प्रगट मिले नहिं चोरी॥
जा कारन तुम गृह तज निकसे, लोक लाज कुल तोरी॥
षट दरशन मिल स्वांग बनाये, लोगन लाग ठगोरी॥
अंग भभूत गले मृगछाला, कोई लाये गुदर भर झोरी॥
चोवा चंदन अबीर अरगजा, कपड़ा दे रंग रोरी॥
जगन्नाथ बट्टी रामेश्वर, देश देशांतर दौरी॥
अठसठ तीरथ पृथी परकरमा, पोहकर में लट बोरी॥

बेद प्रमान भागवत गीता, चारों वरण टटोरी।
कहैं कबीर सतगुरु के दया बिन, भरम मिटे नहिं भौरी॥

भला ऐसी होली कौन खेले, जिसमें सदा जन्म-मरण लगा हुआ है। न तो कानों से कुछ सुनाई पड़ता है, न आँखों से दिखता है, केवल पिया पिया की रट लगाए रहना है। ऐसे में पिया पिया की रट लगाते हुए, परमात्मा रूपी प्रियतम की राह देखते हुए जन्म बीत जाता है, पर न तो वे प्रगट दर्शन देते हैं और न कहीं एकांत, स्वप्न आदि में। जिस परमात्मा की खोज में योगी लोग घर को छोड़कर, लोक लाज को तोड़कर बाहर निकल पड़ते हैं, नाना तरह के स्वाँग धारण करते हैं, शरीर में भभूत रमा लेते हैं, गले में हिरण की छाल पहन लेते हैं, चंदन आदि का लेप लगा लेते हैं, कपड़ों को रँग लेते हैं, जगन्नाथ, बद्रीनाथ, रामेश्वर आदि तीर्थों में भागते फिरते हैं, वेद, पुराण, भागवत, गीता आदि में टटोलते रहते हैं, वो परमात्मा तो सद्गुरु की कृपा के बिना नहीं मिल सकता है।

बंदीछोर मुक्ति के दाता

मेरे सतगुरु दीनदयाल, प्रीतम आये हो॥
हंस उबारन जीव निस्तारन, अधम उधारन नाम।
बंदीछोर मुक्ति के दाता, परम सनेही नाम॥
साधु संत और अति अभिलाषा, सब विधि पूरण काम।
जैसे चात्रिक स्वाती बुंद को, रटत है आठों जाम॥
जिनकी सुरति लगी सतगुरु सो, बिसरे सुख गृह धाम।
सतगुरु दया करो जीवन पर, देवो अविचल विश्राम॥
आनन्द मंगल उचार परम सुख, अमर करत है जीव।
सुमिरत दे सतलोक पठाये, ऐसे समरथ पीव॥
चरन कमल सतगुरु के सेऊँ, मन चित्त दे अनुराग।
कहैं कबीर ऐसी होरी खेले, जाके पूरन भाग॥

जीवात्मा कह रही है कि पापियों को तारने वाला नाम लेकर हंसों को भवसागर से छुड़ाने वाले मेरे सद्गुरु रूपी प्रियतम आ गये हैं।

जिस तरह चातक स्वाती नक्षत्र की बूँद के लिए ही रट लगाए रहता है, दूसरा जल ग्रहण नहीं करता, इसी तरह जिसकी सुरति सदा सद्गुरु से लगी रहती है, वो घर-परिवार के सब सुख भूल जाते हैं। सद्गुरु जीवों पर दया करके उन्हें अमर लोक ले जाते हैं। ऐसे सद्गुरु के चरण कमलों में चित्त को लगाकर मैं उनकी सेवा करती हूँ। साहिब कह रहे हैं कि जो जीवात्मा सद्गुरु से इस तरह प्रेम की होली खेलती है, उसके बड़े भाग्य होते हैं।

साहब कबीर खेले संतन सो

होली खेलैं संत सुजान, आतम राम सो।
 घरिघरि पलपल छिनछिन खेलैं, निशदिन आठो याम॥
 योगी खेलैं योग ध्यान में, दुनिया भूत मसान।
 पंडित खेलैं चार वेद से, मुल्ला कितेब कुरान॥
 पतिब्रता खेलैं अपने पिया संग, वेश्या सकल जहान।
 कामी खेलैं कामिनी के संग, लोभी खेलैं दाम॥
 महा प्रचंड तेज माया को, सब जग मारा बान।
 साहब कबीर खेले संतन सो, और न काहू काम॥

संतजन अपनी आत्मा के संग होली खेलते हैं। वे हर घड़ी, हर पल अपनी आत्मा में लीन रहते हैं। योगी लोग योग और ध्यान में मग्न रहते हुए योग और ध्यान में होली खेलते हैं। दुनिया भूत-प्रेतों की भक्ति करते हुए उनके संग होली खेलती है। पंडित लोग चार वेदों में डूबे रहने से उनके संग होली खेलते हैं और मुल्ला आदि कितेब और कुरान से होली खेलते हैं। पतिब्रता स्त्री अपने पति के साथ होली खेलती है और वेश्या पूरी दुनिया के साथ खेलती है। कामी पुरुष स्त्री के संग होली खेलता है और लोभी इंसान पैसे के साथ खेलता है। इस तरह यह माया बड़ी ही प्रबल है, जिसने सारे संसार को अपने बानों से घायल कर दिया है। कबीर साहिब केवल संतों में ही रहते हैं, उन्हीं के साथ ही होली खेलते हैं। उन्हें कोई दूसरा काम नहीं है।

या मन जालिम जोर रे

या मन जालिम जोर रे, बरजो नहिं माने ॥
 निशि बासर सो चलत रहता हैं, साँझ गिने नहिं भोर रे ।
 कोटि यतन कर तन में राखो, भागे सांकर तोर रे ॥
 सात द्वीप एकइस ब्रह्मांड लों, जहाँ लग याकी दौर रे ।
 सुर नर मुनि औ पीर औलिया, काहू न पायो चोर रे ॥
 ब्रह्मा विष्णु महेश्वर कहिये, एहि कटे चित चोर रे ।
 कहैं कबीर जुगत से राखो, गुरु चरणन की ओर रे ॥

यह मन बड़ा ही जालिम है, जो कहने से मानता नहीं है । रात-दिन, सुबह-शाम यह दौड़ता ही रहता है । चाहे करोड़ों प्रयास करके कोई इसे बाँधने का प्रयास कर ले, पर यह सब बंधन तोड़कर भाग जाता है । सात द्वीप और 21 ब्रह्माण्डों तक इसकी सीमा है, इसलिए सुर, नर, मुनि, पीर, औलिया आदि कोई भी इसे समझ नहीं पाया । ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि सबके चित्त को इसने चुरा लिया है । साहिब कह रहे हैं कि इससे बचने के लिए इसे बड़े यत्न से गुरु चरणों में लगाए रखो ।

अहो गुरु गम सो होरी खेलिये हो हो

अहो गुरु गम सो होरी खेलिये हो हो ॥
 हो भाई साधो हो शब्द सुरति लौ लाय ॥
 कोई एक नाम निरंजन ध्यावे, कोई कहे निरधार ।
 ज्योत सरूपी अलख कहत है, राच रह्यो संसार ॥
 कोई दुर्गा कोई शिव को जानै, कोई जानै भूत ।
 कोई यंत्र मंत्र सों राचे, मूल बिसारो सूत ॥
 कोईक नवली कर्महि साधे, कवना दृढ़े चढ़ाय ।
 बिंदहि साध मगन होय फूले, सतगुरु शब्द न पाय ॥
 अजपा सुन्न जपे सब कोई, क्षर अक्षर लग दौर ।

मारग भूल फिरे भटकाना, मन आवत नहिं ठौर ॥
 कोई ओहं कोई सोहं ध्यावे, कोई एक नहिं ठहराय ॥
 घट में ज्ञान कथे सब ज्ञानी, तन छुटे कहाँ जाय ॥
 पूरण ब्रह्म कहे सब कोई, सो जग करे अहार ॥
 तन छूटे कहु मिले ब्रह्म को, जन्म जु होत खुवार ॥
 ऊर्ध तपे बन खंड जात है, खात वृक्ष के पात ॥
 योगी जंगम औ दरवेसा, भेष धरे संसात ॥
 कथनी बकनी पार न पावे, सतगुरु शब्द अपाल ॥
 अक्षर में निःअक्षर दरशे, सतगुरु होहिं दयाल ॥
 युक्ति जान खेलै जो कोई, शब्द डोर चढ़ जाय ॥
 अमर लोक में पुरुष बिदेही, सत्य कबीर लौ लाय ॥

हे साधुओ, सुरति को गुरु नाम में लगाकर गुरु से ही होली खेलो। कोई तो निराकार निरंजन नाम का जाप करते हुए उसका ध्यान कर रहा है, कोई दुर्गा, शिव आदि की भक्ति कर रहा है, कोई भूतों की भक्ति कर रहा है, कोई मूल नाम को बिसारकर मंत्रों का जाप कर रहा है, कोई कर्म को महत्व दे रहा है, कोई पवन आदि चढ़ाकर योग कर रहा है, पर कोई भी सद्गुरु के सार शब्द का भेद नहीं पा रहा है। अजपा जाप सब कर रहे हैं, इसलिए सबकी दौड़ मन-माया तक ही है। सब भटके हुए हैं, किसी का भी मन काबू में नहीं आ रहा है। कोई ओंकार का जाप कर रहा है, कोई सोहं नाम का जाप कर रहा है, कोई ज्ञान की बातें कर रहा है। सब उसी पूर्ण ब्रह्म की बात कर रहे हैं, जो अंतकाल संसार का भक्षण कर जाता है। योगी, जंगम आदि षट्दर्शन जंगल में जाकर तपस्या करते हैं, वृक्षों के पत्ते खाते हैं, नाना भेष धारण करते हैं, पर कोई भी उसका पार नहीं पाता है। यदि सद्गुरु दयाल हो जाएँ तो सार शब्द का भेद मालूम पड़ जाता है और शब्द की डोरी को पकड़े हुए वो परम पुरुष के पास अमर लोक चला जाता है।

निंदा को नहिं डरिहो हो

जो तुम भक्ति करे चाहत हो, निंदा को नहिं डरिहो हो।
 मुख आगे ज्ञान न करियो, मौनी होय के रहियो हो॥
 पाँछ छरी कोई सिर में मारे, सहत बने तो सहिये हो।
 या संसार काँटे की बारी, निरख परख पग धरिये हो॥
 पर तिरिया से नेह न करियो, देखत दूर होय रहिये हो।
 साहिब कबीर के निर्गुन कहरा, महिरम हो सो बूझे हो॥

यदि तुम भक्ति करना चाहते हो तो निंदा से नहीं घबराना। यदि कोई मूर्ख मिल जाए तो उसके आगे मौन ही धारण किए रहना, ज्ञान की बातें न करना। यदि कोई तुम्हें मारे तो सह सको तो सह लेना। यह संसार तो काँटे की बाड़ी है, इसमें सोच समझकर पाँव आगे रखना। पराई स्त्री से प्रेम नहीं करना, देखते ही दूर हो जाना। कबीर साहिब के इस निर्गुण कहे को कोई मरहमी ही समझ सकता है।

नाम सो प्रीत लगी मन माहीं

नाम सो प्रीत लगी मन माहीं, सतगुरु छबि रहू छाई हो।
 जैसे प्रीत है चंद चकोर सों, एकटक ध्यान लगाई हो॥
 ऐसी प्रीत लगी सतगुरु सों, नहिं आवे नहीं जाई हो।
 जैसे प्रीत है जल पुरइन सों, जल बिन वा कुम्हलाई हो॥
 कोटिन जतन करे फिर वाको, वा फिर नहिं ठहराई हो।
 जैसे पतंग जरत दीपक में, मोह से प्रान गमाई हो॥
 जैसे सती जरे पिया के संग, चित पीछे नहिं लाई हो।
 कबहूँ के वह मुर्कि परे तो, तब फिर कहाँ समाई हो॥
 जाको गांसी लगी शब्द की, ताको कछु न सुहाई हो।
 चाल तुम्हारी कठिन भेद है, बिरलै कोई ठहराई हो॥
 भूंगी होय गुरु आन मिलेंगे, अंतर कछू न कीजे हो।

आमीन की बिनती सुन साहिब, दरस दान मोहि दीजे हो॥
 कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, गहो शब्द विश्वासा हो॥
 बीरा नाम जो सार छाप ले, अमर लोक है बासा हो॥

मन में नाम से प्रीत लग गयी है, जिससे सद्गुरु की छबि ही चारों ओर दिखाई दे रही है। जैसे चकोर चाँद से प्रेम करता है, एकटक उसी की ओर निहारता रहता है, ऐसे ही सद्गुरु से प्रीत हो गयी है। जैसे कमलिनी जल से प्रेम करती है, जल के बिना कुम्हला जाती है, चाहे कुछ भी कर लो, वो विकसित नहीं हो पाती। जैसे पतंगा दीपक की लौ में जलकर अपने प्राण गँवा देता है। जैसे सती अपने प्रियतम के साथ जल मरती है और पीछे अपने मन किसी में नहीं लगाती। यदि मुड़के पीछे की ओर ध्यान करे तो फिर पति के साथ जल नहीं सकती है। इस तरह जिसे शब्द का बाण लग गया हो, उसे फिर कुछ भी अच्छा नहीं लगता है। यह बड़ा गहन भेद है, जिसे कोई बिरला ही समझ सकता है। यदि सद्गुरु से अन्तर न रखा जाए, उन्हें अखंड ब्रह्म माना जाए तो वे भृंगी की तरह आकर जरूर मिलते हैं। साहिब कह रहे हैं कि हे धर्मदास, तुम विश्वास के साथ नाम को पकड़े रहो। इसी छाप से अमर लोक में वास हो पाता है।

गुरु सो लगन कठिन है भाई

गुरु सो लगन कठिन है भाई।
 लगन लगे बिन काज न सरि हैं, जिव परले तरजाई॥
 मृगा नाद शब्द का भेदी, शब्द सुनन को जाई।
 सोई शब्द सुन प्राण दान दे, नेकु न तन को डराई॥
 तज गृह वार सती एक निकसी, सत करन को जाई।
 पावक देख डरे नहिं मन मों, कूद परे सरमाही॥
 पपीहा स्वात बूँद के कारन, पीया पिया रटलाई।
 प्यासे प्राण जाय ज्यों न अबही, और नीर नहिं भाई॥

दोय दल आन जुरे जब सनमुख, सूरा लेत लड़ाई।
 टूक टूक होय गिरे धरति में, खेत छाड़ि नहिं जाई॥
 छाड़ो अपनी तन की आशा, निरभे होय गुन गाई।
 कहैं कबीर ऐसी लौ लावे, सहज मिले गुरु आई॥

गुरु से प्रीत बड़ी ही कठिन है और बिना प्रीत के जीव का कल्याण संभव नहीं है। जिस तरह मृगा शब्द का प्रेमी होता है और बिना अपने शरीर की चिंता किये शिकारी की बांसुरी का शब्द सुनते सुनते अपने प्राण गँवा देता है। जिस तरह घर बार छोड़कर सती जब पति की चिता के साथ जलने के लिए निकलती है तो वो अग्नि को देखकर तनिक भी डरती नहीं है, उसमें जल मरती है। जिस तरह पपीहा स्वाति बूंद से प्रेम करते हुए पिया पिया की रट लगाए रखता है और चाहे प्यास के मारे उसके प्राण क्यों न निकल जाएँ, दूसरा जल ग्रहण नहीं करता है। जैसे दो दल युद्ध में आमने-सामने होते हैं तो जो शूरवीर होता है, वो कट-कटकर धरती पर गिर जाता है, मैदान छोड़कर भागता नहीं है। इस तरह से जो अपनी तन की आशा छोड़कर निर्भय होकर जो सद्गुरु के प्रीत करता है, उसे ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है।

मरहमी होय सो बूझे हो

सुनो संतो एक निर्गुन कहरा, मरहमी होय सो बूझे हो।
 तन सों न्यारा मन सों न्यारा, ज्ञान दृष्ट सों सूझे हो॥
 बिन लोचन जहाँ सब कुछ देखे, बिन श्रवण सुन बानी हो।
 बिन जिभ्या जहाँ अमृत भोजन, षटरस पावै ज्ञानी हो॥
 बिना नासिका बास सुबासा, बिन इंद्री करे भोगा हो।
 पाँच पचीसों जहवाँ नाहीं, नहिं तहाँ जोग बिजोगा हो॥
 नहिं आवै नहिं कतहू जाई, अबिगत माहिं समाई हो।
 गगन मण्डल में उलट समावै, एक अक्षर सुध पाई हो॥
 रूप रेख बिन निरमल नामा, सतगुरु होय लखाई हो।
 कहैं कबीर नाम का कहरा, महरम होय सो पाई हो॥

एक निर्गुण कहरा कह रहा हूँ, यदि भेदी हो तो समझ लो। वो शरीर से न्यारा है, मन से भी न्यारा है, ज्ञान दृष्टि से समझ आता है। बिना आँखों के जहाँ सब कुछ देखा जाता है, बिना कानों से सबकुछ सुना जाता है, बिना जीभ के ज्ञानी अमृत भोजन करता है। बिना नासिका के बास लेता है, बिना इंद्रि के नाना भोग करता है। जहाँ पाँचों तत्व, पच्चीसों प्रकृतियाँ नहीं हैं, जहाँ योग-वियोग आदि कुछ भी नहीं है। नहीं कहीं आना है, न कहीं जाना है, स्थिर होकर उस परम पुरुष में समाए रहना है। स्वाँसा को उलटकर नाम में समाना है। उस नाम को सद्गुरु ही लखाता है। साहिब कह रहे हैं कि नाम के इस कहरे को वही जान सकता है, जिसपर सद्गुरु की कृपा हो जाए।

रइयत कौन बिचारी हो

जोरा जोर मचो जग ऊपर, संतों करो बिचारा हो।
 एक और सुर नर मुनि ठाढ़े, एक अकेली माया हो॥
 पारा ऋषि के प्रन रिपु टारे, शिर ब्रह्म के जारी हो।
 श्रृंगी ऋषि बन भीतर लूटे, शंकर नेजा धारी हो॥
 नारद केर निशान ढहाये, हनुमत हाँक हंकारी हो।
 नाथ मछंदर पीठ दे भागे, गोरख भली सम्हारी हो॥
 असी कोस बृजमंडल भीतर, लूटे कुंज बिहारी हो।
 कहै कबीर पाखरिया लूटे, रइयत कौन बिचारी हो॥

सब संसार पर माया छा गयी है। एक तरफ तो सारे ऋषि, मुनि, सुर, नर आदि खड़े हैं और दूसरी तरफ माया अकेली है। पाराशर ऋषि की तपस्या भंग कर दी। श्रृंगी ऋषि को तो जंगल में ही लूट लिया। शंकरजी, नारद, मछंदरनाथ, गोरख, कुंज बिहारी आदि कोई माया के आगे टिक नहीं पाया है। बड़े-बड़े राजाओं को नहीं छोड़ा तो फिर सेना क्या बिचारी है।

विज्ञान भेद को समझो भाइ

विज्ञान भेद को समझो भाई, समुझत जा हेराई हो।
 पाँच स्वाद की खबर न राखे, त्रिगुन नर्क नसजाई हो॥
 ब्राह्मण शुद्ध एक कर जाने, दूजा भाव न माने हो।
 कहन सुनन की गम नहिं साधे, दिव्य दृष्टि पहिचाने हो॥
 भीतर कहो तो सतगुरु लाजे, बाहिर कहो तो झूठे हो।
 बाहर भीतर सकल निरंतर, गुरु प्रताप से दीठा हो॥
 जैसे नारी ससुरे जाई, वह सुख काहे सुनाई हो।
 के जाने वह प्रीतम प्यारा, के प्रीतम की प्यारी हो॥
 गूँगा को एक सपना होई, सपनो काहे सुनाई हो।
 गूँगा को जब बहिरा मिलिया, सैनहि मांहि लखाई हो॥
 के जाने वह सतगुरु साहिब, के सतगुरु का चेला हो।
 तन मन को जिन मोह बिसारे, धोखा भर्म पहेला हो॥
 जौ लग नग्र नजर नहिं आवे, तौ लग मारग बुझानी हो।
 सुझ के आगे बुझ हेरानी, सरिता सिंध समानी हो॥
 मांझ नग्र जब पहुँचे जाई, सहजे मारग भूलो हो।
 फिर बूझै तो कहिय दिवाना, वाको कछु ना सूझा हो॥
 आद अंत समुझो नहिं जौलों, तौ लों चरचा कीजे हो।
 कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, जान के मौन रहिजे हो॥

हे भाई, विज्ञान भेद को समझो और समझकर उसमें खो जाओ।
 जिभ्या के स्वाद से परे हो जाओ, ब्राह्मण, शूद्र दोनों को समान समझो,
 कहने सुनने तक सीमित न रहकर दिव्य दृष्टि से तत्व की पहचान करो।
 यदि उसे शरीर के भीतर कहा जाए तो सद्गुरु को लजाने वाली बात है,
 क्योंकि वो भीतर नहीं है। यदि बाहर कहो तो भी झूठ है। गुरु की कृपा
 से वो बाहर-भीतर हर जगह नजर आयेगा। जिस तरह स्त्री ससुराल में
 जाती है, पर पति के सुख वो किसी से नहीं कहती। उसे तो या पति

समझता है या फिर वो स्वयं। गूँगे को सपना आता है तो वो किसे अपना सपना सुनाए। गूँगे को जब बहरा मिल जाता है तो इशारे में ही बात हो जाती है। इस तरह परम तत्व का रहस्य या तो सद्गुरु जानते हैं या सद्गुरु का चेला। सद्गुरु मोह-माया को मिटाकर वहाँ ले चलते हैं। वो राह बताते चलते हैं। फिर आगे वहाँ पहुँचकर सागर में बूँद की तरह जीवात्मा परम पुरुष में समा जाती है। फिर उसे और कुछ भी अच्छा नहीं लगता है।

जब तक आदि अंत के भेद को न समझ लो, तब तक इस विषय पर चर्चा करो, पर जब जान लो तो मौन हो जाओ।

नाम जप मन बावरे

नाम जप मन नाम जप मन, नाम जप मन बावरे।
 सतगुरु से तू प्रीत करले, छाड़ो कपट के भाव रे॥
 प्रीत सांची सोई कहिये, तन मन धन से होय रे।
 और प्रीत बेकाम कहिये, डार कुसंग रंग धोय रे॥
 बिना बास के फूल जैसे, बिना नीर के कूप रे।
 बिना सतगुरु के प्रानी जग में, का भये सुंदर रूप रे॥
 जा घर भक्त न होय कबहू, सो जननी निज बांझ रे।
 जैसे सूरज उगे आंथवे, भई रजनी सांझ रे॥
 एक घरी नहिं नाम लीन्हें, रहे मुरदा अस सोय रे।
 भोर भये सोवत से जागे, धंधे लागो जाम रे॥
 धनी को बिसराय दीन्हे, भूलो है आठो जाम रे।
 भूत ऐसे फिरत इत उत, उन्हें नहिं बिसराम रे॥
 मानुष ऐसी देह पाये, भक्ति बिन बेकाम रे।
 भक्ति बिन भगवंत दुरलभ, कहता निगम बखान रे॥
 जीव मार के मास भक्षो, उनके कौन हवाल रे।
 जम के द्वारे मार परि है, लोहा गढ़त लोहार रे॥

और चूक सब माफ होवे, कठिन जीव के दोष रे।
 शिव बिरंचि और विष्णु सुमरो, तउन होय तेरो मुक्त रे॥
 कही हमारी झूठ लागे, समुझ गीता लेव रे।
 कृष्ण जाके साख देवै, हमैं दोष न देव रे॥
 सुर नर मुनि और देवता, सब परे फांसी मोह रे।
 अधम उधारन नाम सतगुरु, सो निहचे कर जान रे।
 कहैं कबीर सत्य नाम सुमिरले, कबहुन होय तेरी हान रे॥
 अज्ज लिखनी अज्ज बीरा, अज्जपान प्रवान रे।
 जन्म जन्म के कर्म कटेंगे, कहा हमारा मान रे॥

हे मनुष्य, नाम का सुमिरन कर ले। तू सारे छल, कपट छोड़कर सद्गुरु के प्रीत कर ले। तू तन, मन, धन से सच्ची प्रीत करना। अन्य किसी से भी की गयी प्रीत काम नहीं आयेगी। जिस तरह बिना बास के फूल बेकार होता है, बिना पानी के कुँआ बेकार होता है, इस तरह संसार में सद्गुरु के बिना प्राणी का जीवन बेकार है, चाहे वो कितना ही सुंदर क्यों न हो। जिस घर में भक्त नहीं होता, उस घर की जननी बाँझ ही है। संसारी जीव मुरदे की तरह सोया ही रहता है और जब उठता है तो धन कमाने के लिए धंधे में लग जाता है, पर धनी परमात्मा को भूल जाता है। इस तरह मनुष्य देही बिना भक्ति के बेकार कर देता है। त्रिदेव की भक्ति करने से तेरी मुक्ति नहीं हो सकती है, गीता भी यही कह रही है, चाहो तो वहाँ देख लो। कृष्ण जी भी यही कह रहे हैं, फिर हमें दोष न देना। सुर, नर, मुनि आदि सभी मोह-माया में उलझे हैं। मोह से कोई भी बचा नहीं है। एक नीचों को भी तारने वाला सद्गुरु का नाम है, उसे तुम विश्वास करके पहचान लो। उसका सुमिरन करने से कभी भी हानि नहीं होने वाली है। उस नाम से जन्म जन्म का लेखा मिट जायेगा।

फिर नहिं जन्म धराई हो

शब्द एक नाम है अगम अपारा, मर्म न पावे कोई हो।

रहत अजर सों धर में आवै, तब जग जाहिर होई हो॥
 है हाजर कोई जानत नाहीं, ताको कहा लखाई हो॥
 कोट ज्ञान जप तप कर हारे, बिन गुरु भेद न पाई हो॥
 कोटिन शब्द कहे मुख बानी, एकहि शब्द हमारा हो॥
 ताकी गम काल नहिं पावै, सो संतन चित धारा हो॥
 ताको भेद सुनों हो संतो, अब मैं कहां बिचारा हो॥
 आठ अंश वाही ते प्रगटे, सो सबही ते न्यारा हो॥
 या अक्षर वा है निहअक्षर, सोई नाम हम पाई हो॥
 वोही नाम को निस दिन सुमिरे, ताको काल न खाई हो॥
 कहैं कबीर अगम की बानी, पूरा गुरु लख पाई हो॥
 शब्द सुत जब एक भये हैं, फिर नहिं जन्म धराई हो॥

एक गुप्त नाम है, जिसका भेद कोई नहीं जानता है। वो सबमें हाजिर है, पर नजर नहीं आता है। करोड़ों ज्ञान, जप, तप करके लोग हार गये, पर सद्गुरु के बिना किसी ने उसका भेद नहीं पाया। संसार में करोड़ों नाम हैं, जो मुँह से जपे जाते हैं, पर हमारा नाम का भेद काल भी नहीं जानता है। जो उस नाम का रात-दिन सुमिरन करता है, उसे काल कुछ नहीं कर पाता है। जो सुरति को नाम में रमा लेता है, फिर उसका दुबारा जन्म नहीं होता।

सतगुरु एक जगत में गुरु हैं

सतगुरु एक जगत में गुरु हैं, ताहि चीन्ह नर लोई हो।
 भवसागर की नाव खेवत हैं, पार उतारै सोई हो॥
 लेके नाम आये परवाना, हंस उबारै सोई हो॥
 काटे कर्म काल की बेरी, जरा मरन नहिं होई हो॥
 ले बैठारें आनन्द धाम में, आवागमन न होई हो॥
 सदा आनन्द होत वा घर में, चंद सूर नहिं दोई हो॥
 रहत निरंतर अंतर व्यापक, जो लख पावै कोई हो॥
 कहैं कबीर सुनो भाई साधो, जीवत मुक्ता होई हो॥

हे स्त्री-पुरुषो ! संसार के गुरुओं में एक सद्गुरु हैं, उन्हें पहचानो । वो तुम्हारी नाव को भवसागर से खेवकर पार उतारेंगे । वो नाम रूपी परवाना लेकर हंसों को बचाने आए हैं । वो कर्म की बेड़ी भी काट देते हैं, जिससे फिर जन्म नहीं होता । वो ऐसे अमर आनन्द धाम में ले जाते हैं, जहाँ न सूर्य है न चाँद है, जहाँ से फिर दुबारा जन्म नहीं होता है । वहाँ सदा आनन्द ही आनन्द है ।

चेतो हंस चेतो हंसा

चेतो हंस चेतो हंसा, अगम संदेसा लाये हो ।
हम हैं हजूरी अविगत पुरुष के, हंस उबारन आये हो ॥
सही छाप समरथ मुखबानी, जग में आन सुनाये हो ।
जीव दुखित देखा संसारा, ता कारन पठवाये हो ॥
आवागमन में सब जग उरझो, अस्थिर घर नहिं पाई हो ।
अंडज खानी माया बनाई, पिंडज ब्रह्मा सिरजाई हो ॥
उखमज खान हरी ने कीन्ही, थावर शिव ठहराई हो ।
ये बटपार भये जीवन के, सब राखे भरमाई हो ॥
यह चेतन है समरथ केरा, चारो खान भुलाई हो ।
बिन सतगुरु कोई पार न पावै, फिर फिर जोनी आई हो ॥
नौ सोहं जिनही ते प्रगटे, सोई पुर्ष निज मूला हो ।
तीन देह उनही ते उपजी, कारन सुक्षम अस्थूला हो ॥
कारन देह में सहज सुर्त है, आगे अंकुर पसारा हो ।
सुक्षम देह में वोहं सोहं, इनही खेल अपारा हो ॥
अस्थूल देह में अचिंत अंस है, अक्षर इच्छा धारा हो ।
ता अक्षर में जोत निरंजन, सबको करत अहारा हो ॥
ताहि जोत से तीन देव भये, इनते सृष्टि पसारा हो ।
सात सुन्न दो बेसुन्न कहिये, दसवां धाम अखंडा हो ॥
सोरा सुत ताही के माहीं, ता बिच पाँचो अंडा हो ।

समरथ तर है नौ अस्थाना, और सकल ब्रह्माण्डा हो॥
 अमर लोक में पुरुष विदेही, निगम न पावै थाहा हो।
 उनकी शोभा कहाँ लग बरनो, अनन्त भानु उजियारा हो॥
 कोटन चंद सूर तारागन, एक रोम पर वारा हो।
 श्वेत सिंगासन श्वेत छत्र सिर, श्वेतहिं पुरुष हमारा हो॥
 श्वेत ध्वजा तहाँ श्वेत बिराजे, श्वेतहिं हंस पियारा हो।
 श्वेत भूमि जहाँ श्वेत वृक्ष है, श्वेतहि कमल रसाला हो॥
 पारस पान लेहु तुम सुकृत, जब देखो दरबारा हो।
 कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, जीवन करो निरधारा हो॥

हे हंसा, जागो, हम परम पुरुष का संदेश लेकर तुम्हें भवसागर से पार उतारने आए हैं। परम पुरुष ने जब संसार के जीव को दुखी देखा तो हमें भेजा। सब संसार जन्म मरण में उलझा हुआ है, कोई भी सही घर को नहीं पा रहा है। माया ने अण्डज खानि की रचना की, ब्रह्मा जी ने पिंडज खानि बनाई, विष्णु जी ने उकमज खानि की रचना की और शिवजी ने अस्थावर के जीव बनाए। ये सब जीवों के सरदार हुए और सभी को भ्रमित कर दिया, चार खानियों में जीव को भुला दिया। सद्गुरु के बिना कोई भी पार नहीं पा रहा है और बार-बार योनियों में भटक रहा है। ओहं, सोहं, अचिंत, अक्षर आदि सबके ऊपर निरंजन है। यह सबको खा रहा है। निरंजन से तीन देव उत्पन्न हुए और फिर उनसे सृष्टि बनी। अमर लोक में विदेही पुरुष रहता है, पर वेद शास्त्र आदि उसका भेद नहीं जानते हैं। उसकी शोभा का वर्णन कैसे किया जा सकता है। ऐसा लगता है कि मानो अनन्त सूर्य एक साथ उगे हुए हों। करोड़ों सूर्य, चाँद और तारे उसके एक रोम पर न्यौछावर हैं। सांसारिक भाव समें समझाते हुए कह रहे हैं कि उसका सिंगासन श्वेत है, श्वेत ध्वजा है, सब कुछ श्वेत है। वो स्वयं भी श्वेत है और हंस भी श्वेत हैं। मानो श्वेत ही उस लोक की भूमि है, श्वेत वृक्ष हैं और श्वेत कमल खिले हैं। हे धर्मदास, वहाँ चलकर अपने जीव का कल्याण करो।

भोगिया सब मिस डार

माया मोहनी मन हरन।
 भोगिया सब मिस डारे, जोगिया बस करन॥
 चंचल चपल विशाल लोचन, सबल सारंग भरन।
 काम बान उरतान मारे, तासे कोई न डरन॥
 नैन खंजन सजन भंजन, जोति जग मग करन।
 सार शब्द विचार देखो, मेटो आवा गमन॥
 सिद्ध सुरपति इंद्र जेते, शोक सागर बरन।
 मांझ धार झकोर बोरे, देत काहू न तरन॥
 जिते आये तिते लूटे, छूटे कोई गुरु सरन।
 कहैं कबीर कोई भाग बाचे, अभै सतगुरु चरन॥

एक स्त्री रूपी माया ने सब संसारी लोगों के मन को मोहित कर रखा है। सुर, नर, मुनि आदि कोई भी नहीं बच पाया है। सद्गुरु की शरण में आकर कोई बिरला ही इससे छूट सकता है।

जिन कोई प्रेम के बस परो

घाट औघट बाट सूभट, कोट में कोई तरों॥
 स्वाति बूंदहि रटे पपीहा, पिया पिया नित करो।
 जिमि चकोरहि जरत न रसना, अगिन न परहरो॥
 नाद सुनके मृगा मोहे, तिरण नाहीं चरो।
 दीपक जोत पतंग हुलसे, प्राण देत न डरो॥
 सती सोई जो सत बाँधे, बिन अगनी डरो।
 बांध अस्त्र जो चढ़े रन में, सूर बाको डरो॥
 जैसे हारिल गहे लकरी, पृथी न पगु धरो।
 सकल फूल ना बसत भौंरा, बास कमलन करो॥
 नाम कारन रटत निस दिन, नाम नियरे मिलो।
 कहैं कबीर कछु अगम गमकर, जीवते जो तरों॥

साहिब रूपी प्रियतम के घर की राह बड़ी कठिन है। जिस तरह पपीहा स्वाति की बूंद के लिए पिया पिया की रट लगाता है, जिस तरह चकोर चाँद के प्रेम में अंगार तक को चबा जाता है, जिस तरह मृगा बांसुरी की धुन पर मोहित होकर अपने को शिकारी के जाल में फँसा लेता है, जिस तरह पतंगा दीपक की लौ के प्रेम में अपने प्राण तक त्याग देता है, जिस तरह सती अपने पति के लिए बिना अग्नि के भी जलती है, जिस तरह मरने की चिंता किये बिना अस्त्र-शस्त्र बाँधकर शूरवीर रण में चलता है, जैसे भँवरा कमल के फूल की महक के लिए अपने प्राण तक गँवा देता है, इस तरह साहिब के प्रेमी रात-दिन नाम के सुमिरन में लगे रहते हैं और जीते-जी संसार सागर से पार हो जाते हैं।

मेट यह जंजाल

अवधू भर्म भूले लोय।
 भर्म तो तबही मिटै, जब कीट भृंगी होय॥
 भर्म नाचे भर्म गावे, भर्म ही परवान।
 भर्म शुभ घरी काज कीन्हा, भर्म गुफ निकास॥
 भर्म जप तप नेम पूजा, भर्म जोग अचार।
 भर्म जब लग जाप करही, सुन्न केरी आश॥
 कहाँ आये कहाँ जाये, सुन ले उपदेश।
 यह भ्रम सब जगत भूला, कोई न कहत संदेश॥
 कहैं कबीर सुनो हो अवधू, छाड़ मन बिस्तार।
 आप चीन्हों अटल हो रहु, मेट यह जंजाल॥

सारी दुनिया भ्रम में भूली हुई है। यह भ्रम तो तब ही मिट सकता है, जब कीड़े के भृंग की तरह हो जाए। अन्यथा नाचना, गाना आदि भ्रम ही है। शुभ कर्म करना, गुफा में निवास करना आदि भी भ्रम ही है। जप, तप, पूजा, योग आदि सब भ्रम है। हे साधु, तुम सांसारिक माया जंजाल छोड़कर अपने को पहचानो।

सोई सत्यनाम पियारा हो

जिनकी रहनी अपार जगत में, सोई सत्यनाम पियारा हो।
जैसे पुरइन रहे जल भीतर, जल में करत पसारा हो॥
वाके पत्र नीर नहीं व्यापे, ढरकि जात जस पारा हो।
जैसे सूर चढ़े रन ऊपर, बाँध सकल हथियारा हो॥
वाकी सुरति रहे लड़ने में, प्रेम मग्न ललकारा हो।
जैसे सती जले पिय के संग, पिया वचन नहिं टारा हो॥
आप तरे औरन को तारे, तारे कुल परिवारा हो।
ऐसी रहन सो साधु कहावै, आतम तत्व बिचारा हो॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, पहुँचे गुरु का प्यारा हो॥

जो इस तरह से संसार में रहता है, वो सत्यनाम से प्रेम करने वाला होता है। जिस तरह कमलिनी जल में रहती है और जल में ही विकसित होती है। उसके पत्तों में पानी नहीं टिकता, फिसल जाता है। जिस तरह योद्धा लड़ने के लिए जाता है तो सारे हथियार बाँधकर जाता है। उसकी सुरति लड़ने में ही रहती है और वो दुश्मन को दिल से ललकारता है। जिस तरह सती अपने पति के संग जल जाती है, अपने प्रियतम को दिया वचन तोड़ती नहीं है। इस तरह जो दृढ़ होकर भक्ति करता है, वो ही सच्चा साधु है, वो ही भवसागर से पार होकर अमर लोक में पहुँचता है।

सजन तुम झूठ मत बोलो

सजन तुम झूठ मत बोलो, साईं. को सांच प्यारा है॥
खुदा से कौल किया था, करूँगा याद बहुत तेरी।
निकारो या अग्नि सेती, सोई तू अरज सुन मेरी॥
साईं से जिकर तुम करके, शिकम से बाहर किया है।
उसी को भूल के तुमने, पिया जो जहर प्याला है॥
कु फर की सोहबतों सेती, सजन मगरूर आया है।

इमाना सत्य है सोई, सो हमने कह सुनाया है ॥
 अगर नहिं बुझौंगे प्यारे, तो तुम दोजख को जावोगे ।
 सजन सत्यनाम की कर याद, तबे कबीर पावोगे ।
 अकीना लावोगे दिल में, असराफ तब कहावोगे ॥

साहिब कह रहे हैं कि जब तू गर्भ में था तो वादा किया था कि बाहर आकर प्रभु की भक्ति करूंगा, पर बाहर आकर तू भूल गया । अगर तुमने सत्यनाम का सुमिरन नहीं किया, साहिब की भक्ति नहीं की तो फिर फिर नरक में ही जाना पड़ेगा ।

दास पर नाम ध्वजा फहराई

दास पर नाम ध्वजा फहराई ॥
 काल जंजाल निकट नहिं आवै, माया देख डराई ।
 जो मोरे संत से द्रोह बिचारे, प्रभू को नाहिं सोहाई ॥
 हरनाकुस की वा गति हो गई, रावन धूर उड़ाई ।
 दुर्योधन परीक्षित राजा, फिर पाछे पछताई ॥
 सुर पंडित औ नृपत बादशाह, ऊँची पदवी पाई ।
 भक्ति बिना सब तुच्छ बरोबर, बाँधे यमपुर जाई ॥
 का भये बेद पुरान गुन गये, सत्य दया नहिं आई ।
 अहंकार में सबहि भुलाने, अजगर जन्म सो पाई ॥
 हम तो कान राखी नहिं भाई, ज्यों का त्यों ठहराई ।
 भावे कोई दुख सुख कर माने, भक्ति के पंथ चलाई ॥
 जोग यज्ञ तीरथ ब्रत संजम, करनी कोट कराई ।
 नाम बिना सबही है खाली, कहैं कबीर समुझाई ॥

सद्गुरु के शिष्य की सुरक्षा के लिए नाम रूपी ध्वजा होती है, जिसे देखकर काल भी पास में नहीं आता है और माया भी भयभीत होती है । साहिब कह रहे हैं कि जो संत से शत्रुता रखता है, वो प्रभु को अच्छा नहीं लगता है । देखो, हरनाकुस ने प्रह्लाद से द्रोह किया तो उसकी क्या

गति हो गयी। रावण भी धूल में मिल गया। इसी तरह जिस जिस ने प्रभु के प्यारों से द्रोह किया, चाहे वो दुर्योधन हो, राजा परीक्षित हो, उन्हें अंत में पछताना ही पड़ा है। देवता, राजा लोग आदि को ऊँची पदवी मिली है। पर भक्ति के बिना सब तुच्छ हैं और यमलोक में बाँधे हुए ले जाए जायेंगे। यदि दिल में दया की भावना नहीं है तो वेद, पुराण आदि पढ़ने के क्या लाभ। सब अपने अपने अहंकार में भूले हुए हैं। ये तो अजगर का जन्म ही पायेंगे। चाहे कोई करोड़ों योग, यज्ञ, तीर्थ, व्रत, संयम आदि क्यों न कर ले, पर नाम के बिना सब खाली हैं।

जाग रे जंजाली जियरा

जाग रे जंजाली जियरा, यह तो मेला हाट का॥
 तात मात सुत भाई बंधवा, या तो मेला ठाट का॥
 अतं समै तू चला अकेला, जैसे बटोही बाट का॥
 राजकाज सब झूठे धंधा, जरा पितंबर बाट का॥
 महल खजाना रहा भंडारा, लादा भांडा काठ का॥
 धोबी के घर गदहा होगा, घर का भया न घाट का॥
 लालच लोभ धरे शिर गठरी, जैसे घोड़ा भाट का॥
 रात दिवस तैं सोय गँवाया, भजन ना किया निराट का॥
 कहैं कबीर सुनो भाई साधू, जम कूटे क्यों टाट का॥

हे सांसारिक जीव, तू अब जाग जा। यह दुनिया के मेले तेरे काम नहीं आयेंगे। राह के मुसाफिर की तरह माता, पिता, बेटे, भाई, बंधु आदि सबको छोड़कर तुझे अकेले ही जाना पड़ेगा। तू झूठे धंधों में फँस गया है। तेरे महल, खजाने, सारे भंडार यहीं रह जायेंगे और मरने के बाद एक दिन तू हो सकता है कि धोबी के घर में गदहे का शरीर धारण करे। फिर तू कहीं का नहीं रह जायेगा। तू लालच, लोभ आदि में फँसा हुआ है। रात-दिन तू सोने में गँवा रहा है और प्रभु का भजन नहीं कर रहा है। आखिर में एक दिन तुझे यम की मार पड़ेगी।

कहो उस देश की बतिया

कहो उस देश की बतियाँ, जहाँ नहिं होत दिन रतियाँ ।
 नहिं रवि चंद औ तारा, नहिं उजियार अँधियारा ॥
 नहीं तहाँ पवन औ पानी, गये वह देश निज जानी ।
 लखा जिन अलख का डेरा, कंत बिन पाय नहिं फेरा ॥
 नहीं तहाँ धरती आकाशा, करे कोई संत तहाँ बासा ।
 उहां गम काल की नाहीं, तहाँ नहिं धूप औ छांही ॥
 न जोगी जोग सों धावै, न तपसी देह जलावै ।
 सहज में ध्यान सो पावै, सुरत का खेल जेहि आवै ॥
 सोहंगम नाद नहिं पाई, न बाजे शंख सहनाई ।
 कबीर का देश है न्यारा, लखे कोई नाम का प्यारा ॥

उस देश की बात कह रहा हूँ, जहाँ दिन रात नहीं हैं, जहाँ सूर्य, चाँद और तारे भी नहीं हैं, जहाँ न अँधकार है, न उजाला, जहाँ पानी, पवन आदि कुछ भी नहीं है। बिना सद्गुरु के उस दरबार में कोई नहीं पहुँचा। न वहाँ धरती है, न आकाश। कोई संत ही वहाँ वास करता है। वहाँ काल की पहुँच भी नहीं है। वहाँ धूप और छाया भी नहीं है। न योगी योग से उसे पा सकता है, न तपस्वी देह को कष्ट देकर उसे पा सकता है। जिसे सुरति का खेल मालूम हो, व वहाँ सहज ध्यान से पहुँच सकता है। वहाँ सोहं भी नहीं है, धुनें भी नहीं हैं, न शंख, बाजे आदि ही बज रहे हैं। वो एक न्यारा देश है, जिसे कोई नाम का प्यारा ही जान सकता है।

चार गाफिल मत रहो

चार गाफिल मत रहो, कहना हमारा चित धरो ।
 तू अगम पंथ का होसकर, यह रंग है चार का ॥
 धन धाम सब रहि जायेंगे, तन खाक में मिल जायेंगे ।

तुम ही अकेले जाओगे, सब छारही को छार है ॥
 तू देखता सुंदर काया, सुत बित सकल जग की माया ।
 यह लेय ना कोई गया, दिन चार ही को ख्याल है ॥
 बाँधे अकेले जावोगे, धक्के ओ मुक्के खाओगे ।
 फिर हाथ मल पछताओगे, इस बुद्धि कूं धिक्कार है ॥
 तू गर्भ में जिस दिन रहा, तिस दिन अगम नौ मास है ।
 बचनों कौन प्रभू सों किया, भूला तू सबे करार है ॥
 जिस दिन तू जग में औतरा, जंजाल माया में परा ।
 उस बचन पर चित ना धरा, भूला तू जग व्यौहार है ॥
 कहना हमारा गोसकर, इस जक्त को फरमोशकर ।
 तू अगम पंथ का होसकर, कहते कबीर समुझाय के ॥

ओ इंसान, तू बेवकूफी मत कर और मेरा कहना मान ले । यह संसार तो चार दिन का बसेरा है, इसलिए तू अगम देश में चलने की तैयारी कर । तेरी धन, दौलत, घर-बार आदि सब यहीं पर रह जायेगा और तेरा यह शरीर भी मिट्टी में मिल जायेगा । तू अपनी सुंदर काया को देखता है, अपने बेटे, धन-दौलत और संसार की माया को देखता है । पर यह सब कोई अपने साथ नहीं ले गया । यह तो सब थोड़े दिन का स्वप्न है । बाद में तुम्हें बाँधकर धक्के दे देकर ले जाया जायेगा । तू नौ महीने माता के गर्भ में रहा और तूने वहाँ करार किया कि बाहर आकर प्रभु की भक्ति करेगा, पर तू वो सब वादा भूल गया और संसार के माया जाल में खो गया । इसलिए तू मेरी बात मान कर संभल जा और अपने देश की सुधि कर ।

कबहूँ हार न आवे

सत्यसुकृत हृदय बसे, कबहूँ हार न आवे ।
 जम की अमल मिटाय के, सत्यलोक सिधायै ॥
 सुरति निरति लौलाय के, जब उलट समावै ।

शब्द डोर लागी रहै, तहवां चढ़ जावै॥
 जगमग वह देश है, जहवां सच पावै॥
 पाँच तत्व गुन तीन का, दुख दूर बहावै॥
 कहैं कबीर धर्मदास सों, तब हंस कहावै॥
 जरा मरन घर मेट कै, अमर घर पावै॥

जिसके हृदय में सत्यनाम है, वो कभी भी हार नहीं सकता है। वो माया का नशा तोड़कर अमरलोक में चला जाता है। सुरति और निरति को एक करके जब साधक नाम में रम जाता है तो वहाँ पहुँच जाता है। वो देश अत्यंत प्रकाशमय है। वहाँ पाँच तत्व और तीन गुणों से उत्पन्न दुख नहीं हैं। वहाँ पहुँचकर वो हंस कहलाता है और जन्म-मरण को समाप्त कर सदा के लिए अमर लोक में निवास करता है।

तेरे सदा न देही

अरे मन मूरख बावरा, तेरे सदा न देही।
 काहे न सुमरो नाम को, गुरु परम सनेही॥
 सोने की लंका रही, भई धूरा धानी।
 सो रावन की साहबी, छिन मांही हेरानी॥
 सोरा जोजन दल चले, चले छत्र की छाहिं।
 सो दुर्योधन यों गये, मिले माटी माहिं॥
 ये माया काके भई, किसके संग लागी।
 गुड़िया सी उड़ जायेगी, चित चेत अभागी॥
 कहैं कबीर कासे कहों, कोई नहीं अपना।
 ये दुनिया बहि जायगी, जैसे रैन का सपना॥

हे मूर्ख मन, यह शरीर सदा के लिए तेरा नहीं रहेगा। तू परम सनेही गुरु के नाम का सुमिरन क्यों नहीं करता। सोच, सोने की लंका भी जल गयी थी और रावण की सारी बादशाहत एक पल में छिन गयी।

जिसके छत्र की छाया में 16 योजन तक सेना चलती थी, वो दुर्योधन भी तो मिट्टी में मिल गया। यह माया किसी की नहीं हुई। यह तो पतंग की तरह उड़कर किसी दूसरे के पास चली जायेगी, इसलिए तू जाग जा। यहाँ कोई भी अपना नहीं है। रात के सपने की तरह यह सारी दुनिया समाप्त हो जायेगी।

भई भजन की बेरा रे

क्या सोया उठ जागो मन मेरा, भई भजन की बेरा रे।
 रंग महल तेरा पड़ा रहेगा, जंगल होगा डेरा रे॥
 सौदागर सौदा को आया, हो गया रैन बसेरा रे।
 कंकर चुन चुन महल बनाया, लोग कहे घर मेरा रे॥
 ना घर तेरा ना घर मेरा, चिरिया रैन बसेरा रे।
 अजावन का सुमिरन कर ले, शब्द स्वरूपी नामा रे॥
 अजावन वे परम पुरुष है, जावन सब संसारा रे।
 जो जावन का सुमिरन करिहैं, परे चौरासी धारा रे॥
 अमरलोक से आया बंदे, फिर अमरपुर जाया रे।
 कहे कबीर सुनो भाई साधु, ऐसी लगन लगाया रे॥

हे मन, तू क्या सोया पड़ा है, जाग जा, नाम-भजन का समय हो गया है। तेरा महल तो यहीं पर रह जायेगा और तुझे जंगल में जाकर रहना पड़ेगा। पत्थर चुन-चुन कर महल खड़ा किया और लोग कहने लगे कि यह हमारा घर है। पर घर तो किसी का नहीं है, यह तो चिड़िया के रैन बसेरे की तरह थोड़ी देर के लिए ही है। तू नाम का सुमिरन कर ले। तू उस परम पुरुष का सुमिरन कर ले, जिसका कभी जन्म नहीं होता। बाकी जो संसार में जन्म लेने वाले का सुमिरन करता है, वो चौरासी की धारा में ही पड़ता है। तू अमर लोक से ही आया है और तुझे वापिस अमर लोक ही जाना है।



पुस्तक सूची

हिन्दी में

1. परा रहस्या
2. मासिक पत्रिका सत्यकेतु
3. पावन प्रार्थनाएँ
4. सद्गुरु चालीसा
5. वार्षिक डायरी
6. सद्गुरु भक्ति
7. कहाँ से तू आया और कहाँ
तुझे जाना रे?
8. सत्संग सुधारस
9. नाम अमृत सागर
10. अमृत वाणी
11. सद्गुरु नाम जहाज़ है
12. चल हंसा सतलोक
13. कोटि नाम संसार में तिनते
मुक्ति न होय
14. मूल नाम गुप्त है, जाने बिरला
कोय
15. गुरु सुमिरै सो पार
16. तीन लोक से न्यारा
17. सेहत के लिए ज़रूरी
18. सहजे सहज पाइये
19. रोगों से छुटकारा
20. सद्गुरु महिमा
21. भक्ति के चोर
22. अनुरागसागर वाणी
23. भक्ति सागर
24. हरि सेवा युग चार है, गुरु
सेवा पल एक
25. सत्य नाम के सुमरते उबरे
पतित अनेक
26. काग पलट हंसा कर दीना
27. कस्तूरी कुण्डल बसै मृग
खोजे बन माहिं
28. गुरु पारस गुरु परस है
29. गुरु अमृत की खान
30. शीश दिये जो गुरु मिले तो
भी सस्ता जान
31. मूल सुरति
32. भृंग मता होय जिहि पासा,
सोई गुरु सत्य धर्मदासा
33. मैं कहता हूँ आँखिन देखी
34. गुरु संजीवन नाम बतावे
35. नाम बिना नर भटक मरे
36. रोगों की पहचान
37. यह संसार काल को देशा
38. न्यारी भक्ति
39. साहिब तेरी साहिबी सब
घट रही समाय
40. जाप मरे अजपा मरे अनहद
भी मर जाए

41. आयुर्वेद का कमाल रोगों के निदान में
42. सुरति समानी नाम में
43. सबकी गठरी लाल है, कोई नहीं कंगाल
44. निन्दक जीवे युगन युग काम हमारा होय।
45. निराले सद्गुरु
46. कुँजड़ों की हाट में हीरे का क्या मोल
47. जीवड़ा तू तो अमर लोक का पड़ा काल बस आई हो
48. मुझे है काम 'सद्गुरु से जगत रूठे तो रूठन दे'
49. जेहि खोजत कल्पो भये घटहि माहिं सो मूर
50. आत्म ज्ञान बिना नर भटके
51. बिन सतगुरु बाँचे नहीं कोटिन करे उपाय
52. अँधी सुरति नाम बिन जानो
53. सत्यनाम निज औषधि सद्गुरु दई बताय
54. सेहत संजीवनी
55. भक्ति दान गुरु दीजिए
56. मन पर जो सवार है ऐसा ऐसा विरला कोई
57. सत्यनाम है सार बूझौ सन्त विवेक करि
58. रोग निवारक
59. मुक्ति भेद मैं कहौ विचारी
60. "तेरा बैरी कोई नहीं तेरा बैरी मन"
61. सुरति का खेल सारा है
62. सार शब्द निहअक्षर सारा
63. करूँ जगत से न्यार
64. बिन सत्संग विवेक न होई
65. सत्य नाम को जनि कर दूजा देई बहा
66. सुरत कमल सद्गुरु स्थाना
67. अब भया रे गुरु का बच्चा
68. मनहिं निरंजन सबै नचाए
69. सत्यपुरुष को जानसी तिसका सतगुरु नाम
70. आपा पौ आपहि बैँध्यो
71. सत्य भक्ति का भेद न्यारा
72. जपो रे हंसा केवल नाम कबीर
73. सत्य भक्ति कोई बिरला जाना
74. जगत है रैन का सपना
75. 70 प्रलय मारग माहीं
76. सार नाम सत्यपुरुष कहाया
77. आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है
78. निराकार मन
79. सत्य सार
80. सुरति
81. भक्ति रहस्य